माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज द्वारा स्वीकृत नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार

शैक्षिक सत्र 2021-2022 के लिए प्रकाशन हेतु

हिन्दी

कक्षा 11

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रम पर आधारित

राजीव प्रकाशन
एण्ड कं०, प्रयागराज

(सरकारी गजट उत्तर प्रदेश भाग-4 में प्रकाशित)

*सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज की विज्ञप्ति संख्या परिषद्–**9/989**,*
*के सातत्य में **शैक्षिक सत्र 2021-22** के लिए स्वीकृत नवीनतम पाठ्यक्रम पर*
आधारित एकमात्र पाठ्य-पुस्तक

हिन्दी

कक्षा-11

- गद्य
- कथा साहित्य
- काव्य
- संस्कृत दिग्दर्शिका

सम्पादकद्वय

डॉ० रमेश कुमार उपाध्याय
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच० डी०
भूतपूर्व साहित्य विभागाध्यक्ष,
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज

डॉ० योगेन्द्र नारायण पाण्डेय
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत), बी० एड०,
पी-एच०डी०
स्नातकोत्तर (शिक्षा प्रशासन) वरिष्ठ प्रवक्ता
महगाँव इण्टर कॉलेज, महगाँव,
कौशाम्बी

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ० प्र०, प्रयागराज द्वारा
स्वीकृत पाठ्यक्रम पर आधारित प्रकाशक

राजीव प्रकाशन
एण्ड कं० प्रयागराज

मूल्य
₹147.00

● प्रकाशक एवं मुद्रक :

राजीव प्रकाशन एण्ड कं०

90 बी, प्रथम तल, महाजनी टोला,
प्रयागराज-211003

● संस्करण : 2021-2022

● फोन : (0532) 2972320 (m) 9519645566

● © प्रकाशकाधीन

चेतावनी

इस पुस्तक में समाहित सम्पूर्ण सामग्री (रेखा व छायाचित्रों सहित) के सर्वाधिकार प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं। अतः कोई भी सज्जन इस पुस्तक का नाम, टाइटिल, डिजाइन तथा पाठ्य-सामग्री आदि को आंशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर प्रकाशित करने का साहस न करें अन्यथा वे कानूनी तौर पर हर्जे-खर्चे के जिम्मेदार होंगे। समस्त विवाद इलाहाबाद न्यायालय के अधीन रहेंगे।

प्राक्कथन

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ0प्र0, प्रयागराज द्वारा नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार हिन्दी विषय में 100 अंकों का एक प्रश्न-पत्र निर्धारित किया गया है। उत्तीर्णांक 33 अंक और समय 3 घण्टे है।

हिन्दी साहित्य में समय-समय पर युगानुरूप परिस्थितियाँ दिखायी देती हैं। बदलते समय को साहित्य ने दक्षतापूर्वक ग्रहण किया है और पाठकों के समक्ष प्रस्तुत भी किया है। साहित्य के विभिन्न रूपों में गद्य को सर्वथा गम्भीर माना गया है, क्योंकि इसमें बौद्धिकता के साथ व्यावहारिकता का आग्रह अधिक दिखायी देता है। पहले यह विधा काव्य के ही निकट समझी जाती थी, परन्तु आज उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि अनेक रूपों में इसने अपनी अलग क्षमता प्रदर्शित की है। इन सबको विस्तार से प्रस्तुत करना एक छोटी-सी पुस्तक के लिए सम्भव नहीं है। प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक '**गद्य**' के प्रस्तुतीकरण में ध्यान रखा गया है कि माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ0 प्र0 द्वारा निर्धारित **कक्षा-11** के पाठ्यक्रमानुसार यह विद्यार्थी और सुधी अध्यापकों के लिए बोधगम्य हो।

छायावाद के बाद का समय तो हिन्दी गद्य के लिए स्वर्णयुग कहा जा सकता है। यह ऐसा समय था जब देश ने पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़कर स्वाधीनता के मुक्त वातावरण में साँस ली। स्वतन्त्रता के बाद के साहित्य में राष्ट्र के नवनिर्माण पर बल दिया गया। इस युग के निबन्ध समसामयिक जन-समस्याओं के भी दर्पण हैं। प्रस्तुत पुस्तक में साहित्य के बदलते स्वरूप के परिप्रेक्ष्य में इसका दर्शन होगा। ऐसा लगता है कि यह प्रक्रिया अभी भी प्रवहमान है। यह स्वाभाविक ही है कि साहित्य भविष्य में भी समाज का दर्पण बना रहे।

गद्य के अन्तर्गत सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम से सम्बन्धित नवीन जानकारी दी गयी है, तो '**काव्य**' के अन्तर्गत रचनाओं का संकलन करते समय कवियों के कालक्रम पर विशेष ध्यान दिया गया है। '**काव्य**' में कबीर, जायसी, सूर, तुलसीदास, केशवदास, बिहारी, भूषण, सेनापति, देव एवं घनानन्द की चर्चित रचनाओं का संकलन विद्यार्थियों की रुचि एवं स्तर के अनुकूल किया गया है ताकि विद्यार्थी पाठ्यवस्तु को सरलता से ग्रहण कर सकें। विद्यार्थियों की सुविधा हेतु प्रत्येक पाठ के प्रारम्भ में कवि-परिचय तत्पश्चात् काव्य-रचना और अन्त में प्रश्न-अभ्यास दिये गये हैं, जिससे विद्यार्थी परीक्षा के अनुरूप तैयारी कर सकें।

कथा साहित्य में जिन कहानियों का संकलन किया गया है, वे हिन्दी के आधुनिक काल की देन हैं। '**कथा साहित्य**' में पाँच चर्चित लेखकों की श्रेष्ठ कहानियों का संकलन किया गया है। विद्यार्थियों की सुविधा एवं उन्हें कहानी विधा का विधिवत ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से प्रस्तुत संकलन में भूमिका के अन्तर्गत हिन्दी कहानी का गद्य साहित्य में स्थान, कहानी की परिभाषा, कहानी के प्रकार, कहानी के प्रमुख तत्त्वों का विवेचन एवं कहानी के उद्भव एवं विकास का पूर्ण विवरण दिया गया है।

हिन्दी का पूर्ण ज्ञान कराने के उद्देश्य से संस्कृत के अन्तर्गत दस पाठों का समावेश किया गया है। व्याकरण की समुचित जानकारी के लिए हिन्दी एवं संस्कृत व्याकरण को भी इस पाठ्यपुस्तक में स्थान दिया गया है।

यद्यपि पुस्तक को उपयोगी बनाने का भरसक प्रयास किया गया है, तथापि लेखन में सम्भावनाएँ सर्वदा विद्यमान रहती हैं। भविष्य में यदि विद्वज्जनों की ओर से रचनात्मक सुझाव आये तो उनका स्वागत किया जायेगा। यदि उनके सुझावों से पुस्तक और समृद्ध हो, तो हम उनके आभारी होंगे।

–संपादक एवं प्रकाशक

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज द्वारा निर्धारित नवीनतम पाठ्यक्रम

साहित्यिक हिन्दी : कक्षा - 11

पूर्णांक : 100

- इस विषय में 100 अंकों का एक प्रश्न-पत्र तीन घण्टे का होगा। सम्पूर्ण प्रश्नपत्र दो खण्डों में विभाजित है–
  क– गद्य, पद्य, खण्ड काव्य, नाटक और कहानी।
  ख– संस्कृत–गद्य, पद्य, निबन्ध, काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व, संस्कृत व्याकरण और अनुवाद।

खण्ड-क (अंक-50) पूर्णांक-100

1. **हिन्दी गद्य का विकास**–गद्य की पाठ्य-पुस्तक में दिये गये पाठों पर आधारित विभिन्न कालों में गद्य की भाषा-संरचना, विधाओं में परिवर्तन, युग-प्रवर्तक लेखकों का योगदान एवं प्रमुख रचनाएँ (वस्तुनिष्ठ प्रश्न) **1 × 5 = 5 अंक**
2. **काव्य साहित्य का विकास**–विविध कालों की काव्य प्रवृत्तियाँ, उनमें परिवर्तन, प्रतिनिधि कवि एवं उनकी प्रमुख कृतियाँ (वस्तुनिष्ठ प्रश्न) **1×5=5 अंक**
3. पाठ्यक्रम में निर्धारित गद्यांशों पर आधारित पांच प्रश्न। **2×5=10 अंक**
4. पाठ्यक्रम में निर्धारित पद्यांशों पर आधारित पांच प्रश्न। **2×5=10 अंक**
5. (क) संकलित गद्य के पाठों के लेखकों का साहित्यिक परिचय, जीवनी, कृतियाँ तथा भाषा-शैली (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3+2=5 अंक**
   (ख) **काव्य-सौष्ठव**–कवि-परिचय, जीवनी, कृतियाँ, साहित्यिक विशेषताएँ (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3+2=5 अंक**
6. **कहानी**–चरित्र-चित्रण, कहानी के तत्त्व एवं तथ्यों पर आधारित लघु उत्तरीय प्रश्न (शब्द सीमा अधिकतम 80) **5×1=5 अंक**
7. **नाटक**–निर्धारित नाटकों की विशेषताएँ एवं पात्रों के चरित्र-चित्रण पर आधारित लघु उत्तरीय प्रश्न (शब्द सीमा अधिकतम 80) **5×1=5 अंक**

खण्ड-ख (अंक-50)

8. (क) पठित पाठ्य-पुस्तक के निर्धारित पाठों के संस्कृत गद्य का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2+5=7 अंक**
   (ख) पठित पाठ्य-पुस्तक के निर्धारित पाठों के संस्कृत पद्य का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2+5=7 अंक**
9. पाठों पर आधारित अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों का संस्कृत में उत्तर (कोई दो प्रश्न करना है)। **2+2=4 अंक**
10. **काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व**
    (क) सभी रस–(परिभाषा, उदाहरण एवं पहचान) **1+1=2 अंक**
    (ख) अलंकार– (1) शब्दालंकार–अनुप्रास, यमक, श्लेष (परिभाषा एवं उदाहरण) **2 अंक**
    (2) अर्थालंकार–उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, सन्देह, भ्रान्तिमान, अनन्वय, प्रतीप, दृष्टान्त तथा अतिशयोक्ति (परिभाषा अथवा उदाहरण)
    (ग) छन्द– (1) मात्रिक–चौपाई, दोहा, सोरठा, रोला, कुण्डलिया, हरिगीतिका, बरवै (लक्षण एवं उदाहरण) **1+1=2 अंक**
    (2) वर्णवृत्त–इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, सवैया, मत्तगयंद, सुमुखी, सुन्दरी, बसन्ततिलका (लक्षण एवं उदाहरण)
    (3) मुक्तक–मनहर (लक्षण एवं उदाहरण)
11. **निबन्ध**–हिन्दी में मौलिक अभिव्यक्ति। दिये हुए विषय पर निबन्ध, (जनसंख्या, पर्यावरण, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की जानकारी हेतु इन विषयों पर भी निबन्ध पूछे जायेंगे)। **2+7=9 अंक**
12. **संस्कृत व्याकरण** (क्रम संख्या 13 एवं 14 से वस्तुनिष्ठ प्रश्न पूछे जायेंगे)
    (क) सन्धि– (1) स्वर सन्धि–एचोऽयवायावः एङः पदान्तादति, एङिपररूपम् **1×3=3 अंक**

(2) व्यंजन–स्तोः श्चुनाश्चुः, ष्टुनाष्टुः, झलांजशझशि, खरिच, मोऽनुस्वारः, तोर्लि, अनुस्वारस्यययि पर सवर्णः

(3) विसर्ग–विसर्जनीयस्य सः, सजुषोरूः, अतोरोरप्लुतादप्लुते, हशिच, रोरि

(ख) समास– अव्ययीभाव, कर्मधारय, बहुव्रीहि। **1+1=2 अंक**

13. **(क) शब्दरूप–** (1) संज्ञा–आत्मन्, नामन्, राजन्, जगत्, सरित्। **1+1=2 अंक**

(2) सर्वनाम–सर्व, इदम्, यद्।

(ख) धातुरूप– लट्, लोट्, विधिलिङ्, लङ्, लृट् (परस्मैपदी) स्था, पा, नी, दा, कृ, चुर् **1+1=2 अंक**

(ग) प्रत्यय– (1) कृत्–क्त, क्त्वा, तव्यत्, अनीयर् **1+1=2 अंक**

(2) तद्धित–त्व, मतुप्, वतुप्

(घ) विभक्ति परिचय– अभितः परितः, समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि, येनाङविकारः, सहयुक्तेऽप्रधाने, नमः स्वस्तिस्वाहा स्वधाऽलंबषट्योगाच्च, षष्ठीशेषे, यतश्चनिर्धारणम्। **1+1=2 अंक**

14. हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद। **2+2=4 अंक**

निर्धारित पाठ्यवस्तु (माध्यमिक शिक्षा परिषद् द्वारा निर्धारित अंश) का अध्ययन करना होगा।

खण्ड-क

पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	पाठ का नाम
गद्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?
	2. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी	महाकवि माघ का प्रभात वर्णन
	3. श्यामसुन्दर दास	भारतीय साहित्य की विशेषताएँ
	4. सरदार पूर्णसिंह	आचरण की सभ्यता
	5. डॉ० सम्पूर्णानन्द	शिक्षा का उद्देश्य
	6. राय कृष्णदास	आनन्द की खोज, पागल पथिक
	7. राहुल सांकृत्यायन	अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा
	8. रामवृक्ष बेनीपुरी	गेहूँ बनाम गुलाब
	9. सड़क सुरक्षा	
काव्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. कबीरदास	साखी, पदावली
	2. मलिक मुहम्मद जायसी	नागमती वियोग-वर्णन
	3. सूरदास	विनय, वात्सल्य, भ्रमरगीत
	4. गोस्वामी तुलसीदास	भरत-महिमा, गीतावली, कवितावली, दोहावली, विनय पत्रिका
	5. केशवदास	स्वयंवर-कथा, विश्वामित्र और जनक की भेंट
	6. कविवर बिहारी	भक्ति एवं शृंगार
	7. महाकवि भूषण	शिवा-शौर्य, छत्रसाल प्रशस्ति
	8. विविधा	सेनापति, देव, घनानन्द
कथा साहित्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. प्रेमचन्द	बलिदान
	2. जयशंकर प्रसाद	आकाशदीप
	3. भगवतीचरण वर्मा	प्रायश्चित
	4. यशपाल	समय
	5. जैनेन्द्र कुमार	ध्रुव-यात्रा

● **नाटक (सहायक पुस्तक)**

क्र0सं0	पुस्तक तथा लेखक	प्रकाशक	अनुदानित जिले
1.	कुहासा और किरण लेखक– श्री विष्णु प्रभाकर	भारतीय साहित्य प्रकाशन, 204-ए, वेस्ट एण्ड रोड, सदर, मेरठ	मेरठ, आजमगढ़, मुरादाबाद, बलिया, रायबरेली, झांसी, सुल्तानपुर, लखीमपुर खीरी, बदायूँ, पीलीभीत।
2.	आन का मान लेखक– श्री हरिकृष्ण प्रेमी	कौशाम्बी प्रकाशन, दारागंज, इलाहाबाद	वाराणसी, लखनऊ, इटावा, बरेली, फर्रुखाबाद, एटा, शाहजहाँपुर, उन्नाव, हमीरपुर।
3.	गरुड़ध्वज लेखक– लक्ष्मी नारायण मिश्र	साहित्य भवन प्रा0लि0, 93, के0पी0 कक्कड़ रोड, इलाहाबाद	आगरा, गोरखपुर, जौनपुर, फैजाबाद, बिजनौर, फतेहपुर, गोण्डा, सीतापुर, प्रतापगढ़, बहराइच, ललितपुर।
4.	सूत पुत्र लेखक– डॉ0 गंगा सहाय 'प्रेमी'	राम प्रसाद एण्ड सन्स, अस्पताल रोड, आगरा	इलाहाबाद, सहारनपुर, अलीगढ़, मुजफ्फरनगर, गाजीपुर, मैनपुरी, जालौन, हरदोई, बाराबंकी।
5.	राज मुकुट लेखक– श्री व्यथित 'हृदय'	सिम्बुल लैंग्वेज कारपोरेशन अस्पताल रोड, आगरा	कानपुर, बुलन्दशहर, मथुरा, बस्ती, मिर्जापुर, देवरिया, बांदा, रामपुर।

खण्ड-ख

संस्कृत दिग्दर्शिका हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु–

(1) वन्दना, (2) प्रयागः, (3) सदाचारोपदेशः, (4) हिमालयः, (5) गीतामृतम्, (6) चरैवेती-चरैवेती, (7) लोभः पापस्य कारणम्, (8) विश्वबन्द्याः कवयः, (9) चतुरश्चौरः, (10) सुभाषचन्द्रः

सामान्य हिन्दी : कक्षा-11

पूर्णांक–100

● इस विषय में 100 अंकों का एक प्रश्न-पत्र तीन घण्टे का होगा। सम्पूर्ण प्रश्नपत्र दो खण्डों में विभाजित है–
क– गद्य, पद्य, खण्ड काव्य, नाटक और कहानी।
ख– संस्कृत–गद्य, पद्य, निबन्ध, काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व, संस्कृत व्याकरण और अनुवाद।

खण्ड-क

1. **हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास**–गद्य की पाठ्य-पुस्तक में दिये गये पाठों पर आधारित विभिन्न कालों के युग-प्रवर्तक लेखक एवं उनकी रचनाएँ। (वस्तुनिष्ठ प्रश्न) **1×5=5 अंक**
2. **हिन्दी काव्य साहित्य का विकास**–विभिन्न कालों के प्रमुख कवि और उनकी कृतियों पर आधारित (वस्तुनिष्ठ प्रश्न) **1×5=5 अंक**
3. पाठ्यक्रम में निर्धारित गद्यांशों पर आधारित पांच प्रश्न। **2×5=10 अंक**
4. पाठ्यक्रम में निर्धारित पद्यांशों पर आधारित पांच प्रश्न। **2×5=10 अंक**
5. (क) पाठ्यक्रम में निर्धारित लेखकों का साहित्यिक परिचय एवं कृतियाँ। (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3+2=5 अंक**
   (ख) पाठ्यक्रम में निर्धारित कवियों का साहित्यिक परिचय एवं कृतियाँ। (शब्द सीमा अधिकतम 80) **3+2=5 अंक**
6. पाठ्यक्रम में निर्धारित कहानियों का सारांश एवं उद्देश्य पर आधारित प्रश्न। (शब्द सीमा अधिकतम 80) **1×5=5 अंक**
7. पाठ्यक्रम में निर्धारित नाटक की कथावस्तु एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण। (शब्द सीमा अधिकतम 80) **1×5=5 अंक**

खण्ड-ख

8. (क) पाठ्यक्रम में निर्धारित संस्कृत गद्यांश का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2+5=7 अंक**
   (ख) पाठ्यक्रम में निर्धारित संस्कृत पद्य का संदर्भ सहित हिन्दी में अनुवाद। **2+5=7 अंक**

9. लोकोक्तियों एवं मुहावरों के अर्थ एवं वाक्य प्रयोग। **1+1=2 अंक**
   (क्रम संख्या 11 एवं 12 से वस्तुनिष्ठ प्रश्न पूछे जायेंगे)

10. **(क) सन्धि–** दीर्घ, गुण, यण्, अयादि में से किन्हीं तीन सन्धियों से संबन्धित शब्दों का सन्धि विच्छेद। **1×3=3 अंक**
    (ख) संस्कृत शब्दों में विभक्ति की पहचान– **1+1=2 अंक**
    - **संज्ञा–** आत्मन् , नामन् , राजन् , जगत् , सरित् ।
    - **सर्वनाम–**सर्व इदम् , यद् ।

11. **(क)** शब्दों में सूक्ष्म अन्तर। **1+1=2 अंक**
    (ख) अनेकार्थी शब्द **1+1=2 अंक**
    (ग) अनेक शब्दों के लिए एक शब्द (केवल दो शब्द) **1+1=2 अंक**
    (घ) वाक्यों में त्रुटिमार्जन (लिंग, वचन, कारक, काल एवं वर्तनी संबंधी त्रुटियाँ)। **1+1=2 अंक**

12. **(क) रस–**शृंगार, करुण, हास्य, वीर एवं शान्त रस के लक्षण एवं उदाहरण। **1+1=2 अंक**
    (ख) अलंकार– (1) शब्दालंकार–अनुप्रास, यमक, श्लेष के लक्षण एवं उदाहरण। **1+1=2 अंक**
    (2) अर्थालंकार–उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, भ्रान्तिमान एवं सन्देह के लक्षण एवं उदाहरण। **1+1=2 अंक**
    (ग) छन्द– मात्रिक–चौपाई, दोहा, सोरठा, रोला, कुण्डलियां के लक्षण एवं उदाहरण। **2 अंक**

13. **पत्र-लेखन–** (निम्नलिखित में से किसी एक पर)– **2+4=6 अंक**
    (1) नियुक्ति-आवेदन-पत्र।
    (2) बैंक से किसी व्यवसाय के लिए ऋण प्राप्त करने का आवेदन-पत्र।
    (3) अपने नगर या गाँव की सफाई हेतु संबंधित अधिकारी को प्रार्थना-पत्र।

14. **निबन्ध–**(विज्ञान, वाणिज्य, शिक्षा, कृषि, सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना पर आधारित जनसंख्या, स्वास्थ्य, शिक्षा व पर्यावरण से सम्बन्धित)। **2+7=9 अंक**

● पाठ्य-वस्तु खण्ड-(क)

सामान्य हिन्दी विषय के लिए निम्नलिखित पाठ्य-वस्तु का अध्ययन करना होगा–

पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	पाठ का नाम
गद्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?
	2. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी	महाकवि माघ का प्रभात वर्णन
	3. सरदार पूर्णसिंह	आचरण की सभ्यता
	4. डॉ० सम्पूर्णानन्द	शिक्षा का उद्देश्य
	5. राहुल सांकृत्यायन	अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा
	6. रामवृक्ष बेनीपुरी	गेहूँ बनाम गुलाब
	7. सड़क सुरक्षा	गेहूँ बनाम गुलाब

काव्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. संत कबीरदास	साखी, पदावली
	2. सूरदास	विनय, वात्सल्य, भ्रमरगीत
	3. गोस्वामी तुलसीदास	भरत-महिमा, कवितावली, गीतावली, दोहावली, विनय पत्रिका
	4. कविवर बिहारी	भक्ति एवं शृंगार
	5. महाकवि भूषण	शिवा-शौर्य, छत्रसाल प्रशस्ति
कथा साहित्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु	1. प्रेमचन्द	बलिदान
	2. जयशंकर प्रसाद	आकाशदीप
	3. भगवतीचरण वर्मा	प्रायश्चित्त
	4. यशपाल	समय

● **नाटक (सहायक पुस्तक)**

क्र0सं0	पुस्तक तथा लेखक	प्रकाशक	अनुदानित जिले
1.	कुहासा और किरण लेखक– श्री विष्णु प्रभाकर	भारतीय साहित्य प्रकाशन, 204-ए, वेस्ट एण्ड रोड, सदर, मेरठ	मेरठ, आजमगढ़, मुरादाबाद, बलिया, रायबरेली, झांसी, सुल्तानपुर, लखीमपुर खीरी, बदायूँ, पीलीभीत।
2.	आन का मान लेखक– श्री हरिकृष्ण प्रेमी	कौशाम्बी प्रकाशन, दारागंज, इलाहाबाद	वाराणसी, लखनऊ, इटावा, बरेली, फर्रुखाबाद, एटा, शाहजहाँपुर, उन्नाव, हमीरपुर।
3.	गरुड़ध्वज लेखक– लक्ष्मी नारायण मिश्र	साहित्य भवन प्रा0लि0, 93, के0पी0 कक्कड़ रोड, इलाहाबाद	आगरा, गोरखपुर, जौनपुर, फैजाबाद, बिजनौर, फतेहपुर, गोण्डा, सीतापुर, प्रतापगढ़, बहराइच, ललितपुर।
4.	सूत पुत्र लेखक– डॉ0 गंगा सहाय 'प्रेमी'	राम प्रसाद एण्ड सन्स, अस्पताल रोड, आगरा	इलाहाबाद, सहारनपुर, अलीगढ़, मुजफ्फरनगर, गाजीपुर, मैनपुरी, जालौन, हरदोई, बाराबंकी।
5.	राज मुकुट लेखक– श्री व्यथित 'हृदय'	सिम्बुल लैंग्वेज कारपोरेशन अस्पताल रोड, आगरा	कानपुर, बुलन्दशहर, मथुरा, बस्ती, मिर्जापुर, देवरिया, बांदा, रामपुर।

नोट–इसके अतिरिक्त अन्य जिलों/नवसृजित जिलों में नाटक पूर्व की भाँति यथावत् पढ़ाये जायेंगे।

खण्ड-ख

● संस्कृत दिग्दर्शिका हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु–

(१) वन्दना
(२) प्रयाग:
(३) सदाचारोपदेश:
(४) हिमालय:
(५) गीतामृतम्
(६) लोभ: पापस्य कारणम्

●●

विषय-सूची

खण्ड - 'क'

गद्य

- यह संकलन 13
- भूमिका 15
- हिन्दी गद्य के विकास पर आधारित प्रश्न 26
- अध्ययन-अध्यापन 34

1. ***भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** 36
   भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?
2. ***आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी** 43
   महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन
3. **श्यामसुन्दरदास** 50
   भारतीय साहित्य की विशेषताएँ
4. ***सरदार पूर्णसिंह** 57
   आचरण की सभ्यता
5. ***डॉ0 सम्पूर्णानन्द** 66
   शिक्षा का उद्देश्य
6. **राय कृष्णदास** 74
   आनन्द की खोज, पागल पथिक
7. ***राहुल सांकृत्यायन** 79
   अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा
8. ***रामवृक्ष बेनीपुरी** 87
   गेहूँ बनाम गुलाब
9. ***सड़क सुरक्षा** 94
10. **गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण** 96

- परिशिष्ट (टिप्पणियाँ) 98

काव्य

- यह संकलन 101
- भूमिका 102
- काव्य साहित्य के विकास पर आधारित प्रश्न 117
- अध्ययन-अध्यापन 126

1. ***कबीरदास** 128
साखी, पदावली

2. **मलिक मुहम्मद जायसी** 137
नागमती-वियोग-वर्णन

3. ***सूरदास** 147
विनय, वात्सल्य, भ्रमर-गीत

4. ***गोस्वामी तुलसीदास** 157
भरत-महिमा, कवितावली, गीतावली, दोहावली, विनयपत्रिका

5. **केशवदास** 171
स्वयंवर-कथा, विश्वामित्र और जनक की भेंट

6. ***कविवर बिहारी** 181
भक्ति एवं श्रृंगार

7. ***महाकवि भूषण** 188
शिवा-शौर्य, छत्रसाल-प्रशस्ति

8. **विविधा** 196
सेनापति, देव, घनानन्द

- **परिशिष्ट (टिप्पणियाँ)** 205

कथा साहित्य

- यह संकलन 212
- भूमिका 213
- संकलित कहानियों का सारांश 221

1. ***प्रेमचन्द** 224
बलिदान

2. ***जयशंकर प्रसाद** 230
आकाशदीप

3. ***भगवतीचरण वर्मा** 237
प्रायश्चित

4. ***यशपाल** 242
समय

5. **जैनेन्द्र कुमार** 247
ध्रुव-यात्रा

नाटक

1. **कुहासा और किरण** 260
(विष्णु प्रभाकर)

2. **आन का मान** 262
(हरिकृष्ण 'प्रेमी')

3. **गरुड़ध्वज** 264
(पं. लक्ष्मी नारायण मिश्र)

4. **सूतपुत्र** 266
(डॉ. गंगा सहाय प्रेमी)

5. **राजमुकुट** 268
(व्यथित हृदय)

खण्ड - 'ख'

संस्कृत दिग्दर्शिका

प्रथमः पाठः *वन्दना 270

द्वितीयः पाठः *प्रयागः 272

तृतीयः पाठः *सदाचारोपदेशः 275

चतुर्थः पाठः *हिमालयः 278

पंचमः पाठः *गीतामृतम् 280

षष्ठः पाठः चरैवेति-चरैवेति 283

सप्तमः पाठः *लोभः पापस्य कारणम् 285

अष्टमः पाठः विश्ववन्द्याः कवयः 287

नवमः पाठः चतुरश्चौरः 289

दशमः पाठः सुभाषचन्द्रः 292

काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व 295

- *रस 295
- *छन्द 300
- *अलंकार 305
- *पत्र-लेखन 312
- *निबन्ध 315

1. **संस्कृत व्याकरण** 329
*(क) सन्धि 329
*(ख) शब्द-रूप 335
(ग) धातु-रूप 338
(घ) प्रत्यय 342
*(ङ) विभक्ति-परिचय 343
(च) समास 345
2. **हिन्दी वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद** 347
*3. **हिन्दी व्याकरण** 361
(**क**) शब्दों में सूक्ष्म अन्तर 361
(**ख**) अनेकार्थी शब्द 364
(**ग**) अनेक शब्दों के लिए एक शब्द 367
(**घ**) वाक्यों में त्रुटिमार्जन (लिंग, वचन, कारक, काल एवं वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियाँ) 372
(**ङ**) लोकोक्ति एवं मुहावरे 377
- **प्रतिदर्श प्रश्न-पत्र (साहित्यिक हिन्दी)** 379
- **प्रतिदर्श प्रश्न-पत्र (सामान्य हिन्दी)** 382

☞ **सामान्य हिन्दी के छात्रों के लिए :** सामान्य हिन्दी के छात्रों को '*' (स्टार) वाले पाठों का अध्ययन करना है।

●●

खण्ड-क

गद्य

यह संकलन

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश द्वारा निर्धारित नवीनतम पाठ्यक्रमानुसार कक्षा-11 के छात्र-छात्राओं के लिए हिन्दी विषय की अनिवार्य पाठ्य-पुस्तक के रूप में गद्य गरिमा का प्रणयन किया गया है। इस पुस्तक का प्रणयन करते समय सभी उद्देश्यों का पूरा ध्यान रखा गया है। इसका **पहला उद्देश्य** यह रहा है कि छात्र-छात्राएँ हिन्दी गद्य के विगत सौ-डेढ़ सौ वर्षों के विकास से पूर्णरूपेण परिचित हो जायँ।

वस्तुतः हिन्दी गद्य से यहाँ तात्पर्य खड़ीबोली गद्य से है जिसका साहित्य में अनवरत् प्रयोग भारतेन्दु से आरम्भ होता है। इसीलिए भारतेन्दु को आधुनिक युग का जनक कहा जाता है। उन्हें ही इस बात का श्रेय है कि वे हिन्दी साहित्य को मध्य युग से निकालकर आधुनिक युग में ले आये। भारतेन्दु-युग में हिन्दी गद्य का स्वरूप स्पष्ट और स्थिर होने लगा। द्विवेदी-युग में वह व्याकरण के नियमों से अनुशासित हुआ। उसका परिष्कार और परिमार्जन हुआ। छायावाद-युग में वह अलंकृत हुआ। उसमें लाक्षणिकता का समावेश हुआ। उसकी अभिव्यंजना शक्ति बढ़ी और वह सूक्ष्म, कोमल भावनाओं तथा सुकुमार एवं रंगीन कल्पना चित्रों को व्यक्त करने में समर्थ हुआ। प्रगतिवादी-युग में ठोस सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करने की प्रतिबद्धता के कारण उसमें कुछ परुषता और खरापन आया है और वह जीवन के बाह्य विस्तार को अभिव्यक्ति देने में समर्थ हुआ। इस युग की समाप्ति के साथ ही देश स्वतंत्र हुआ। हमारी आकांक्षाएँ बढ़ीं। हम देश-विदेश की साहित्यिक गतिविधियों से परिचित होने, आधुनिक जीवन के द्वंद्व, तनाव, संकुलता और बुद्धिवादिता को ग्रहण करने और जीवन की दौड़ में आगे बढ़ने के लिए व्यग्र हो उठे। इस पूरे परिवेश को अभिव्यक्ति देने के प्रयत्न में हिन्दी गद्य साहित्य में अनेक विधाओं का विकास हुआ। उसकी शब्द-सम्पदा में वृद्धि हुई। वह आधुनिक जीवन के बाह्य विस्तार को समेटने और आन्तरिक रहस्यों को व्यंजित करने में समर्थ हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के गद्य से आगे चलकर मोहन राकेश के गद्य तक की यात्रा के क्रम को छात्र-छात्राएँ भूमिका के अन्तर्गत विस्तार से पढ़ सकेंगे।

प्रस्तुत संकलन का **दूसरा उद्देश्य** कक्षा-11 के छात्रों को हिन्दी-गद्य की सभी प्रमुख विधाओं से परिचित कराना है। इसलिए इस संकलन में उन विधाओं को छोड़कर जिनका अध्ययन छात्रों को स्वतंत्र रूप से कराया जायेगा, शेष सभी को प्रतिनिधित्व दिया गया है। संस्मरण, शब्दचित्र, गद्यगीत, रिपोर्ताज, यात्रा-वृत्त आदि निबंधों की परम्परा में विकसित होनेवाली गद्य की अपेक्षाकृत नयी विधाएँ हैं। प्रस्तुत संकलन में रामवृक्ष बेनीपुरी का **'गेहूँ बनाम गुलाब'** शब्दचित्र का, राय कृष्णदास का **'आनन्द की खोज, पागल पथिक'** गद्यगीत का प्रतिनिधित्व करनेवाली रचनाएँ समाविष्ट हैं।

इस संकलन का **तीसरा उद्देश्य** निबंधों के सभी प्रकार के रूपों और शैलियों से छात्रों को परिचित कराना है। इसलिए निबंधों का चयन करते समय उनके सभी रूपों को समाविष्ट करने की चेष्टा की गयी है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का **'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?'** निबंध विचारात्मक होने के साथ ही तत्कालीन सुधारवादी चेतना को व्यक्त करनेवाला है। द्विवेदी जी का

'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' वर्णनात्मक निबंध है। वह इस तथ्य का भी साक्षी है कि द्विवेदी-युगीन लेखक हिन्दी के अभावों को दूर करने के लिए संस्कृत से सामग्री लेने में संकोच नहीं करता था। अध्यापक पूर्णसिंह ने हिन्दी-गद्य को लाक्षणिक बनाकर उसे एक नया आयाम दिया था। उनका **'आचरण की सभ्यता'** निबंध भावावेगपूर्ण प्रवाहमयी शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। महापंडित राहुल सांकृत्यायन हमारे देश के सबसे बड़े घुमक्कड़ थे। **'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा'** में घुमक्कड़ी के लिए आवश्यक प्रवृत्तियों और साधनों का उत्तम प्रतिपादन हुआ है।

डॉ० सम्पूर्णानन्द देश के जाने-माने विद्वान् और शिक्षाविद् थे। उनका **'शिक्षा का उद्देश्य'** निबंध शिक्षा के व्यावहारिक एवं नैतिक दोनों प्रकार के उद्देश्यों पर प्रकाश डालनेवाला विचारात्मक शैली का श्रेष्ठ निबंध है। बाबू श्यामसुन्दर दास हिन्दी के प्रख्यात विद्वान् और अनन्य सेवक थे। उन्होंने साहित्य के सभी पक्षों पर सुगम एवं सुबोध शैली में विचार किया है। उनका **'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ'** निबन्ध उनके व्यक्तित्व के अनुरूप है। इस प्रकार प्रस्तुत संग्रह में वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, आत्म-व्यंजक, व्यंग्यात्मक आदि सभी शैलियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले निबंध संगृहीत हैं।

छात्रों का मानसिक संस्कार करना, उनके जीवन के प्रति रचनात्मक, स्वस्थ एवं व्यापक दृष्टिकोण विकसित करना, मानवीय भावनाओं एवं मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करना तथा राष्ट्र की एकता और अखण्डता की चेतना जागृत करना साहित्य-शिक्षा का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की पूर्ति संकलन का **चौथा उद्देश्य** है। प्रस्तुत संकलन इस लक्ष्य की पूर्ति में पूर्णतः समर्थ है। निबंधों का चयन करते समय उनमें निहित मन्तव्यों एवं मूल्यों के प्रभाव और उपयोगिता पर भी विचार किया गया है। संकलन के सभी निबंध सुरुचिपूर्ण हैं। उनमें नैतिक एवं रचनात्मक दृष्टि को ही महत्त्व दिया गया है। वे देश की एकता के पोषक एवं व्यापक मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करनेवाले हैं।

जीवन के सभी उपादानों और तत्त्वों की भाँति भाषा एवं साहित्य भी गतिशील तत्त्व है। इनका स्वरूप समय एवं युग-प्रवृत्ति के परिवर्तन के साथ बदलता रहता है। इसलिए साहित्य के विद्यार्थी को संस्कारतः आग्रह-मुक्त होना चाहिए। न उसमें प्राचीन के प्रति मोह होना चाहिए और न नवीनता के प्रति आग्रह। प्रस्तुत संकलन में प्राचीन एवं नवीन के संतुलन पर भी ध्यान रखा गया है। हिन्दी भाषा और साहित्य का जो रूप आज है वह पहले नहीं था और आगे भी वह नहीं रहेगा, उसमें विकास और परिष्कार होता आया है और होता रहेगा। हर जीवित भाषा में यह विकास-प्रक्रिया चलती रहती है। इसलिए आज के मानदण्ड को आधार बनाकर भारतेन्दु-कालीन भाषा एवं वर्तनी को सुधारना या बदलना इतिहास के साथ अन्याय करना होगा। साथ ही भविष्य के लिए आज से ही कोई आग्रह बनाकर चलना भी अनुचित होगा।

विश्वास है कि छात्र-छात्राएँ इस पाठ्य-पुस्तक की सहायता से साहित्य और भाषा के प्रति संतुलित दृष्टि विकसित करने में समर्थ होंगे।

●●

भूमिका

गद्य क्या है?–छन्द, ताल, लय एवं तुकबन्दी से मुक्त तथा विचारपूर्ण एवं वाक्यबद्ध रचना को 'गद्य' कहते हैं। गद्य शब्द 'गद्' धातु के साथ 'यत्' प्रत्यय जोड़ने से बनता है। 'गद्' का अर्थ होता है—बोलना, बतलाना या कहना। सामान्यतः दैनिक जीवन में प्रयुक्त होनेवाली बोलचाल की भाषा में गद्य का ही प्रयोग किया जाता है। गद्य का लक्ष्य विचारों या भावों को सहज, सरल एवं सामान्य भाषा में विशेष प्रयोजन सहित संप्रेषित करना है। ज्ञान-विज्ञान से लेकर कथा-साहित्य आदि की अभिव्यक्ति का माध्यम साधारण व्यवहार की भाषा गद्य ही है, जिसका प्रयोग सोचने, समझने, वर्णन, विवेचन आदि के लिए होता है। वक्ता जो कुछ सोचता है, उसे तत्काल अनायास गद्य के रूप में व्यक्त भी कर सकता है। ज्ञान-विज्ञान की समृद्धि के साथ ही गद्य की उपादेयता और महत्ता में वृद्धि होती जा रही है। किसी कवि या लेखक के हृदयगत भावों को समझने के लिए ज्ञान की आवश्यकता है और गद्य ज्ञान-वृद्धि का एक सफल साधन है। इसीलिए इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, धर्म, दर्शन आदि के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु नाटक, कथा-साहित्य आदि में भी इसका एकच्छत्र प्रभाव स्थापित हो गया है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो आधुनिक हिन्दी-साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना गद्य का आविष्कार ही है और गद्य का विकास होने पर ही हमारे साहित्य की बहुमुखी उन्नति भी सम्भव हो सकी है।

हिन्दी गद्य के सम्बन्ध में यह धारणा है कि मेरठ और दिल्ली के आस-पास बोली जानेवाली खड़ीबोली के साहित्यिक रूप को ही हिन्दी गद्य कहा जाता है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ब्रजभाषा, खड़ीबोली, कन्नौजी, हरियाणवी, बुन्देलखण्डी, अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी इन आठ बोलियों को हिन्दी गद्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। हिन्दी गद्य के प्राचीनतम् प्रयोग हमें 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में मिलते हैं।

गद्य और पद्य में अन्तर–हिन्दी साहित्य को दो भागों में बाँटा गया है—(1) गद्य साहित्य तथा (2) पद्य (काव्य) साहित्य। विषय की दृष्टि से गद्य और पद्य में यह अन्तर है कि गद्य के विषय विचार-प्रधान और पद्य के विषय भाव-प्रधान होते हैं। दूसरी भाषाओं के समान इस भाषा के साहित्य में भी पद्य का अवतरण गद्य के बहुत पहले हुआ है। पद्य में कार्य की अनुभूति, उक्ति-वैचित्र्य, सम्प्रेषणीयता और अलंकार की प्रवृत्ति देखी जाती है, जबकि गद्य में लेखक अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है। गद्य में तर्क, बुद्धि, विवेक, चिन्तन का अंकुश होता है तो पद्य में स्वतन्त्र कल्पना की उड़ान होती है। गद्य में शब्द, वाक्य, अर्थ आदि सभी प्रायः सामान्य होते हैं, जबकि पद्य में विशिष्ट। कविता शब्दों की नयी सृष्टि है, इसलिए इसका कोई भी शब्द कोशीय अर्थ से प्रतिबन्धित नहीं होता, जीवन की अनुभूतियों से उसका भावात्मक सम्बन्ध होता है, जबकि गद्य भावात्मक सन्दर्भों के स्थान पर वस्तुनिष्ठ प्रतीकात्मक अर्थ ग्रहण करता है। गद्य को 'निर्माणात्मक अभिव्यक्ति' कहा गया है अर्थात् ऐसी अभिव्यक्ति जिसमें निर्माता के चारों ओर प्रयोग के लिए तैयार शब्द रहते हैं। गद्य की भाषा काव्य की अपेक्षा अधिक स्पष्ट, व्याकरणसम्मत और व्यवस्थित होती है। उक्ति-वैचित्र्य और अलंकरण की प्रवृत्ति भी गद्य की अपेक्षा काव्य में अधिक होती है। गद्य में विस्तार अधिक होने के कारण किसी बात को खोलकर कहने की प्रवृत्ति रहती है, जबकि काव्य में किसी बात को संकेत रूप में ही कहने की प्रवृत्ति होती है। गद्य में यथार्थ, वस्तुपरक और तथ्यात्मक वर्णन पाया जाता है, जबकि काव्य में वर्णन सूक्ष्म, संकेतात्मक होता है। गद्य में विरला ही वाक्य अपूर्ण होता है, काव्य में विरला ही वाक्य पूर्ण होता है। इस प्रकार गद्य और पद्य विषय, भाषा, प्रस्तुति, शिल्प आदि की दृष्टि से अभिव्यक्ति के सर्वथा भिन्न दो रूप हैं और दोनों के दृष्टिकोण एवं प्रयोजन भी भिन्न होते हैं। गद्य में व्याकरण के नियमों की अवहेलना नहीं की जा सकती, जबकि पद्य में व्याकरण के नियमों पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। यद्यपि ऐसा नहीं है कि गद्य में भावपूर्ण चिन्तनशील मनःस्थितियों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती और ऐसा भी नहीं है कि पद्य में विचारों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती, किन्तु मुख्य रूप से गद्य एवं पद्य की प्रकृति उपर्युक्त प्रकार की ही होती है।

हिन्दी गद्य का स्वरूप और विकास

विषय और परिस्थिति के अनुरूप शब्दों का सही स्थान-निर्धारण तथा वाक्यों की उचित योजना ही उत्तम गद्य की कसौटी है। यद्यपि वर्तमान में प्रचलित हिन्दी भाषा खड़ीबोली का परिनिष्ठित एवं साहित्यिक रूप है, परन्तु खड़ीबोली स्वयं अपने आपमें कोई बोली नहीं है। इसका विकास कई क्षेत्रीय बोलियों के समन्वय के फलस्वरूप हुआ है। विद्वानों ने इसके प्राचीन रूप पर आधारित तत्त्वों की खोज करने के बाद यह माना है कि खड़ीबोली का विकास मुख्यतः ब्रजभाषा एवं राजस्थानी गद्य से हुआ है। कुछ विद्वान् इसको दक्खिनी एवं अवधी गद्य का सम्मिश्रित रूप भी मानते हैं। आज हिन्दी गद्य का जो साहित्यिक रूप है; उसमें कई क्षेत्रीय बोलियों का विकास दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दी गद्य के आविर्भाव के सम्बन्ध में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। कुछ दसवीं शताब्दी मानते हैं तो बहुतेरे तेरहवीं शताब्दी। 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में हमें गद्य के प्राचीनतम् प्रयोग मिलते हैं। राजस्थानी गद्य की समय-सीमा ग्यारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तथा ब्रजभाषा गद्य की समय-सीमा चौदहवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक मानना उचित प्रतीत होता है। अतः यह स्पष्ट है कि दसवीं-ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य ही हिन्दी गद्य का आविर्भाव हुआ था। अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी गद्य साहित्य के विकास को निम्नलिखित कालक्रमों में विभाजित किया जा सकता है—

1. पूर्व भारतेन्दु-युग अथवा प्राचीन युग — 13वीं शताब्दी से 1868 ई० तक
2. भारतेन्दु-युग — सन् 1868 ई० से 1900 ई० तक
3. द्विवेदी-युग — सन् 1900 ई० से 1922 ई० तक
4. शुक्ल-युग (छायावादी युग) — सन् 1922 ई० से 1938 ई० तक
5. शुक्लोत्तर युग (छायावादोत्तर युग) — सन् 1938 ई० से 1947 ई० तक
6. स्वातन्त्र्योत्तर युग — सन् 1947 ई० से अब तक।

➡ प्राचीन-युगीन गद्य

इस युग के अन्तर्गत हिन्दी गद्य के उद्भव से भारतेन्दु युग के पूर्व तक का समय लिया गया है। वस्तुतः हिन्दी गद्य-साहित्य के आदिकाल में हिन्दी गद्य के प्राचीन रूप ही यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। राजस्थान व दक्षिण भारत में तो अवश्य हिन्दी गद्य के प्रारम्भिक रूप की झलक मिलती है। उत्तर भारत में ब्रजभाषा गद्य के ही उदाहरण अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। प्राचीन युग में काव्य-रचना के साथ-साथ गद्य-रचना की दिशा में भी कुछ स्फुट प्रयास लक्षित होते हैं। 'राउलवेल' (चम्पू), 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' और 'वर्णरत्नाकर' इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। कुछ विद्वान 'राउलवेल' को ही राजस्थानी गद्य की प्राचीनतम रचना मानते हैं। 'राउलवेल' एक शिलांकित कृति है, जिसका पाठ मुम्बई के 'प्रिंस ऑफ वेल्स' संग्रहालय से उपलब्ध कर प्रकाशित कराया गया है। विद्वानों ने इसका रचनाकाल दसवीं शताब्दी माना है। इसकी रचना 'राउल' नायिका के नख-शिख वर्णन के प्रसंग में हुई है। आरम्भ में इस कृति के रचयिता 'रोडा' ने राउल के सौन्दर्य का वर्णन पद्य में किया है और फिर गद्य का प्रयोग किया गया है। दूसरी रचना 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' है, जिसकी रचना महाराज गोविन्द चन्द्र के सभा-पण्डित दामोदर शर्मा ने बारहवीं शताब्दी में की थी। इस ग्रन्थ की भाषा का एक उदाहरण इस प्रकार है—"वेद पढ़ब, स्मृति अभ्यासिब, पुराण देखब, धर्म करब।" इससे गद्य और पद्य दोनों शैलियों की हिन्दी भाषा में तत्सम शब्दावली के प्रयोग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति का पता चलता है। मैथिली के प्राप्त ग्रन्थों में ज्योतिरीश्वर का वर्णरत्नाकर ग्रन्थ ऐसी तीसरी रचना है। मैथिली हिन्दी में रचित गद्य की यह पुस्तक डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी और पण्डित बबुआ मिश्र के सम्पादन में बंगाल एशियाटिक सोसायटी से प्रकाशित हो चुकी है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार इसकी रचना चौदहवीं शताब्दी में हुई होगी।

इसके उपरान्त तो राजस्थानी गद्य, ब्रजभाषा गद्य और खड़ीबोली का प्रारम्भिक गद्य-साहित्य आदि ही विचारणीय सामग्री है। हिन्दी-परिवार की भाषाओं में गद्य का उन्मेष सर्वप्रथम **राजस्थानी गद्य** में प्राप्त होता है। राजस्थानी में गद्य-परम्परा निश्चित रूप से ईसा की तेरहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होती है। राजस्थानी गद्य के प्रारम्भिक विकास में जैन विद्वानों का विशेष योग रहा है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह ब्रजभाषा के गद्य-साहित्य की अपेक्षा अधिक प्राचीन व समृद्ध है। राजस्थानी गद्य दानपत्रों, पट्टे, परवानों, सनदों, वार्त्ताओं और टीकाओं आदि के रूप में उपलब्ध होता है। उस पर संस्कृत अपभ्रंश की परम्परा का प्रभाव स्वाभाविक रूप से पड़ा है। राजस्थानी की प्रमुख गद्य रचनाएँ हैं—'आराधना', 'बालशिक्षा टीका', 'जगत् सुन्दरी प्रयोगमाला', 'अतिचार', 'नवकार', 'व्याख्यान टीका', 'सबतीर्थ नमस्कार स्तवन', 'तत्त्वविचार प्रकरण', 'पृथिवीचन्द्र चरित्र', 'धनपाल कथा', 'तपोगच्छ गुर्वावली', 'अंजनासुन्दरी कथा' आदि।

ब्रजभाषा गद्य का सूत्रपात संवत् 1400 वि० के आस-पास माना जाता है। ब्रजभाषा गद्य का प्राचीनतम् रूप आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार सन् 1457 ई० तक का ही उपलब्ध होता है और उन्होंने योगियों के धार्मिक उपदेशों में से कुछ उद्धृत कर उसे संवत् 1400 वि० के आस-पास का ब्रजभाषा गद्य मान लिया है। किन्तु भाषा-प्रयोग की दृष्टि से ब्रजभाषा गद्य के प्राचीनतम नमूने सन् 1513 ई० के पूर्व के नहीं हैं। धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों के साथ वैद्यक, ज्योतिष, इतिहास, भूगोल, गणित, धनुर्वेद, शकुन आदि विषयों का प्रतिपादन ब्रजभाषा गद्य में हुआ है। ब्रजभाषा गद्य-साहित्य स्थूलतः चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—मौलिक, टीकात्मक, अनूदित और पद्य-प्रधान रचनाओं में यत्र-तत्र प्रयुक्त टिप्पणीपरक गद्य। मौलिक (स्वतन्त्र) गद्य वल्लभ सम्प्रदाय के वचनामृतों, वार्त्ताग्रन्थों, कथा पुस्तकों, दर्शन विषयक ग्रन्थों, वैद्यक, ज्योतिष आदि उपयोगी विषयों, रचनाओं और पत्रों, शिलालेखों तथा कागज-पत्रों के रूप में उपलब्ध होता है। टीका, टिप्पणी, तिलक और भावना शीर्षक से व्याख्यात्मक गद्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार अनुवाद अथवा छायानुवाद रूप में लिखित ग्रन्थ भी प्राप्त हैं। गद्य-प्रधान ग्रन्थों में टिप्पणीपरक गद्य चर्चा, वार्त्ता, तिलक या वचनिका शीर्षक लिखा गया है। सत्रहवीं शताब्दी तक की लिखी हुई जो रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनमें गोस्वामी विट्ठलनाथ का 'शृंगार रस-मण्डन', गोकुलनाथ जी की 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता', नाभादास जी का 'अष्टयाम', बैकुण्ठमणि शुक्ल के 'अगहन महातम' एवं 'वैसाख महातम', ध्रुवदास कृत 'सिद्धान्त विचार' तथा लल्लूलाल कृत 'माधव विलास' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हीं के साथ टीकाओं की परम्परा भी चलती रही। प्रमुख टीकाएँ भुवनदीपिका टीका, एकादशस्कन्ध टीका, हितसंवर्धिनी टीका, धरनी-धरदास की टीका और लोकनाथ की गद्य-पद्यमयी टीका।

खड़ीबोली गद्य की प्रामाणिक रचनाएँ सत्रहवीं शताब्दी ई० से प्राप्त होती हैं। इस सन्दर्भ में सन् 1623 में लिखित जटमल कृत 'गोरा बादल की कथा' उल्लेख्य है। आरम्भिक खड़ीबोली गद्य ब्रजभाषा से प्रभावित है। खड़ीबोली नाम पड़ने का कारण सम्भवतः इसका 'खरा' होना है। कुछ लोग मधुर ब्रजभाषा की तुलना में इसके कर्कश होने के कारण इसे 'खड़ीबोली' कहना उपयुक्त समझते हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि मेरठ के आसपास की पड़ी बोली को खड़ी बनाकर लश्करों में प्रयोग किया गया, इसलिए इसे 'खड़ीबोली' कहते हैं। ब्रजभाषा के प्रभाव से मुक्त खड़ीबोली गद्य का आरम्भ उन्नीसवीं शताब्दी से माना जा सकता है। 'खड़ीबोली' गद्य का एक रूप 'दक्खिनी गद्य' का है। मुहम्मद तुगलक के समय में अच्छी संख्या में उत्तर के मुसलमान दक्षिण में जाकर बस गये। इसके साथ इनकी भाषा भी दक्षिण पहुँची और वहाँ 'दक्खिनी हिन्दी' का विकास हुआ। दक्खिनी हिन्दी में गद्य और पद्य दोनों ही लिखे गये हैं। दक्खिनी खड़ीबोली गद्य का प्रामाणिक रूप सन् 1580 से प्राप्त है। इनमें प्रायः सूफी धर्म के सिद्धान्त लिखे गये हैं।

खड़ीबोली गद्य का विकास

खड़ीबोली गद्य के प्रारम्भिक उन्नायकों में विशेष रूप से चार लेखकों का उल्लेख किया जाता है—मुंशी सदासुख लाल (राय), मुंशी इंशा अल्ला खाँ, सदल मिश्र, पंडित लल्लूलाल। इन लेखकों से कुछ पहले पटियाला दरबार के रामप्रसाद निरंजनी और मध्य प्रदेश के पं० दौलतराम ने साधु और व्यवस्थित खड़ीबोली का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया था। रामप्रसाद निरंजनी के **'भाषा योग वाशिष्ठ'** की भाषा अधिक परिष्कृत है। मुंशी सदासुख लाल (राय) दिल्ली के रहनेवाले थे। इन्होंने विष्णुपुराण का एक अंश लेकर उसे खड़ीबोली गद्य में प्रस्तुत किया। सदा सुखलाल की रचना 'सुखसागर' है। धार्मिक ग्रंथ होने के कारण इसमें पंडिताऊपन अधिक है। वाक्य-रचना पर फारसी शैली का प्रभाव है। मुंशी इंशा अल्ला खाँ ने **'रानी केतकी की कहानी'** लिखी है। इनकी शैली हास्य प्रधान और चटपटी है। तुकान्त वाक्यों का प्रयोग अधिक है। मुंशीजी लखनऊ के नवाब सआदत अली खाँ के दरबार में रहते थे। इसलिए उनकी शैली में तड़क-भड़क, शोखी और रंगीनी अधिक है। सदल मिश्र जिला आरा (बिहार) के निवासी थे। यह कलकत्ता के फोर्ट विलियम कालेज में हिन्दी के शिक्षक के रूप में कार्य करते थे। **'नासिकेतोपाख्यान'** इनकी प्रसिद्ध रचना है। इसमें पूर्वीपन अधिक है और वाक्य-रचना शिथिल है। पं० लल्लूलाल आगरा में रहनेवाले गुजराती ब्राह्मण थे। यह भी फोर्ट विलियम कालेज में नियुक्त थे। इनकी प्रसिद्ध रचना **'प्रेमसागर'** है। इसका गद्य ब्रजभाषा के प्रभाव से मुक्त नहीं है। कहीं-कहीं तुक-मैत्री का मोह खटकता है। भाषा परिमार्जित नहीं है। जिस समय ये लेखक हिन्दी खड़ीबोली गद्य में कहानी और आख्यान लिख रहे थे, उसी समय ईसाई मिशनरी भी ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए बाइबिल का हिन्दी खड़ीबोली गद्य में अनुवाद कराकर उसका प्रचार कर रहे थे। जनता के जीवन में घुलमिल कर उसे अपने अनुकूल बनाने के प्रयत्न में इन लोगों ने हिन्दी भाषा की सेवा की और हिन्दी गद्य के विकास में विशेष योग दिया। सामान्यतः ईसाई मिशनरियों की भाषा भी अपरिमार्जित और ऊबड़-खाबड़ है। तात्पर्य यह है कि अठारहवीं शताब्दी ई० के अन्तिम चरण और उन्नीसवीं शताब्दी ई० के प्रथम चरण में खड़ीबोली गद्य के किसी भी लेखक की भाषा पूर्णतः परिमार्जित नहीं है। इन लेखकों का खड़ीबोली गद्य के विकास-क्रम में ऐतिहासिक महत्त्व अवश्य है।

भारतीय जागरण

उन्नीसवीं शताब्दी ई0 के द्वितीय एवं तृतीय चरण में हमारे देश में सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचे में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। शिक्षा का पश्चिमीकरण हुआ। यातायात के साधनों में वृद्धि हुई। सामन्तवादी शासन-व्यवस्था का अन्त हुआ। अंग्रेजों की नौकरशाही पर आधृत नवीन शासन व्यवस्था ने अराजकता की स्थिति को दूर कर देश में शान्ति स्थापित की। 'प्रेसों' की स्थापना के साथ अनेक प्रकार की पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ हुआ। अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार से नवीन चेतना की लहर दौड़ गयी और अनेक सामाजिक, धार्मिक आन्दोलनों ने देश के जन-मानस को मथकर उसे आधुनिक विचारधाराओं को ग्रहण करने की स्थिति में ला दिया। इस नवीन चेतना के अभ्युदय को भारतीय जागरण (रेनेसाँ) की संज्ञा दी गयी है। इस जागरण को देशव्यापी रूप देने और इसकी गति को तीव्र करने में 'ब्रह्म समाज' (सन् 1828), 'रामकृष्ण मिशन', 'प्रार्थना समाज' (सन् 1867), 'आर्य समाज' (सन् 1867) और 'थियोसॉफिकल सोसाइटी' (सन् 1882) जैसी संस्थाओं का विशेष योगदान माना जाता है। उत्तर भारत में इस नये जागरण का आरम्भ अंग प्रदेश से हुआ। यहीं से समाचार-पत्रों के प्रकाशन की शुरुआत भी हुई। यह प्रदेश ब्रजभाषा केन्द्र से बहुत दूर पड़ता था। इसलिए नवीन चेतना को व्यक्त करने का दायित्व खड़ीबोली गद्य को ही वहन करना पड़ा। यह स्मरणीय है कि इस समय तक उत्तर भारत में पंजाब से लेकर बंग प्रदेश तक खड़ीबोली गद्य का प्रसार हो चुका था।

भारतेन्दु-युगीन गद्य

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में हिन्दी साहित्य का आकाश **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** (सन् 1850-1885) के पूर्ण प्रकाश से जगमगा उठा। उससे कुछ वर्ष पूर्व हिन्दी खड़ीबोली गद्य के क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण व्यक्ति गद्य की दो भिन्न-भिन्न शैलियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। एक थे राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द (सन् 1823-1895), दूसरे थे राजा लक्ष्मणसिंह (सन् 1826-1896)। राजा शिवप्रसाद ने हिन्दी को पाठशालाओं के पाठ्यक्रम में स्थान दिलाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। वे हिन्दी का प्रचार तो चाहते थे किन्तु उसे अधिक नफ़ीस बनाकर उर्दू जैसा रूप प्रदान करने के पक्ष में थे। दूसरी ओर राजा लक्ष्मणसिंह संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के पक्षपाती थे। भारतेन्दु ने इन दोनों सीमान्तों के बीच का मार्ग ग्रहण किया। उन्होंने हिन्दी गद्य को वह रूप प्रदान किया जो हिन्दी-प्रदेश की जनता की मनोभावना के अनुकूल था। उनका गद्य व्यावहारिक, सजीव और प्रवाहपूर्ण है। उन्होंने यथासंभव लोक-प्रचलित शब्दावली का प्रयोग किया है। उनके वाक्य छोटे-छोटे और व्यंजक हैं। कहावतों, लोकोक्तियों और मुहावरों के यथोचित प्रयोग से उनकी भाषा प्राणवान् और स्वाभाविक बन गयी है। इतना होने पर भी भारतेन्दु का गद्य पूर्ण परिमार्जित नहीं है। उनका गद्य भी ब्रजभाषा के प्रयोगों से प्रभावित है और कहीं-कहीं व्याकरण की त्रुटियाँ खटकती हैं।

भारतेन्दु के सहयोगी

भारतेन्दुजी का व्यक्तित्त्व अत्यन्त प्रभावशाली था। वे सुलझे हुए व्यक्ति थे। लोक की गति को पहचानते थे। जनता की भावनाओं को समझते थे और देश एवं जाति की उन्नति के लिए सर्वस्व अर्पित करने के लिए तत्पर रहते थे। उनके समकालीन लेखक उन्हें अपना आदर्श मानते थे। बालकृष्ण भट्ट (सन् 1844-1914), पं0 प्रतापनारायण मिश्र (सन् 1856-1894), राधाचरण गोस्वामी (सन् 1859-1925), बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' (सन् 1855-1923), ठाकुर जगमोहन सिंह (सन् 1857-1899), राधाकृष्णदास (सन् 1865-1907), किशोरीलाल गोस्वामी (सन् 1865-1932) आदि गद्य लेखक उनसे प्रेरित और प्रभावित थे। इन सभी लेखकों ने हिन्दी गद्य के विकास में पूरा सहयोग दिया। ये सभी गद्य लेखक पत्रकार भी थे। इनका उद्देश्य उद्बोधन, आह्वान, व्याख्या, टिप्पणी आदि के द्वारा जनता को शिक्षित और प्रबुद्ध करना था। पं0 बालकृष्ण भट्ट इलाहाबाद से 'हिन्दी प्रदीप' नामक मासिक पत्र निकालते थे। इस पत्र में उनके निबंध प्रकाशित होते थे। भट्टजी संस्कृत के पंडित और अंग्रेजी के जानकार थे। उनकी भाषा-नीति उदार थी। आवश्यकतानुसार उन्होंने अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत एवं लोकभाषा सभी से शब्द लिये हैं। उनका व्यक्तित्त्व खरा था। इसलिए उनकी शैली में भी मृदुता के स्थान पर खरापन है। प्रतापनारायण मिश्र कानपुर से 'ब्राह्मण' पत्र निकालते थे। वे मनमौजी व्यक्ति थे। उनकी शैली में उनका फक्कड़पन स्पष्ट है। उनकी भाषा पर बैसवाड़ी बोली का विशेष प्रभाव है। उनकी भाषा में ठेठ ग्रामीण प्रयोग अधिक मिलते हैं। बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' 'आनन्दकादम्बिनी' का सम्पादन करते थे। उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ और शैली काव्यात्मक एवं अलंकृत है। उनके वाक्य लम्बे और समास-बहुल हैं। भारतेन्दु के अन्य सहयोगियों ने भाषा एवं शैली के सम्बन्ध में इन्हीं लेखकों का आदर्श सामने रखा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दी गद्य के विकास की दृष्टि से भारतेन्दु युग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

द्विवेदी-युगीन गद्य

सन् 1900 तक भारतेन्दु युग की समाप्ति मानी जाती है। सन् 1900 से 1922 तक अर्थात् शताब्दी के प्रथम चरण को हिन्दी साहित्य में द्विवेदी-युग माना जाता है। इस युग को जागरण-सुधार काल भी कहा गया है। हिन्दी गद्य साहित्य के इतिहास में **पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी** (सन् 1864-1938) का आविर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना है। द्विवेदीजी रेलवे के एक साधारण कर्मचारी थे। उन्होंने स्वेच्छा से हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, मराठी और बंगला भाषाओं का अध्ययन किया था। सन् 1903 में आपने रेलवे की नौकरी छोड़कर 'सरस्वती' पत्रिका का संपादन आरम्भ किया। 'सरस्वती' के माध्यम से आपने हिन्दी साहित्य की अभूतपूर्व सेवा की। द्विवेदीजी ने व्याकरणनिष्ठ, संयमित, सरल, स्पष्ट और विचारपूर्ण गद्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की, भाषा के प्रयोगों में एकरूपता लाने और उसे व्याकरण के अनुशासन में लाकर व्यवस्थित करने में द्विवेदीजी ने स्तुत्य प्रयास किया। इसी समय बाबू बालमुकुन्द गुप्त उर्दू से हिन्दी में आये। उन्होंने हिन्दी गद्य को मुहावरेदार सजीव और परिष्कृत करने में पूरा-पूरा ध्यान दिया। 'अनस्थिरता' शब्द के प्रयोग को लेकर द्विवेदीजी से उनका विवाद प्रसिद्ध है। इस युग में द्विवेदीजी के अतिरिक्त माधव मिश्र, गोविन्द नारायण मिश्र, पद्मसिंह शर्मा, सरदार पूर्णसिंह, बाबू श्यामसुन्दर दास, मिश्रबन्धु, लाला भगवानदीन, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि लेखकों ने हिन्दी गद्य के विकास में योग दिया। इस युग में गद्य साहित्य के विभिन्न रूपों का विकास हुआ और गंभीर निबंध, विवेचनापूर्ण आलोचनाएँ तथा मौलिक कहानियाँ, उपन्यास और नाटक लिखे गये। इसी युग में काशी में बाबू श्यामसुन्दर दास ने 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की और हिन्दी के उपयोगी एवं गंभीर साहित्य के निर्माण की दिशा में स्तुत्य प्रयास किया। 'सरस्वती' के अतिरिक्त 'इन्दु', 'सुदर्शन', 'समालोचक', 'प्रभा', 'मर्यादा', 'माधुरी' आदि पत्रिकाएँ इसी युग में प्रकाशित हुईं। द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और बाबू गुलाब राय ने चिन्तन-प्रधान गद्य के विकास में उल्लेखनीय कार्य किया। द्विवेदी युग में गद्य शैली के अनेक रूप सामने आये। पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी की साफ-सुथरी, संयमित, परिमार्जित प्रसन्न-शैली; बाबू श्यामसुन्दर दास की औदात्यपूर्ण व्यास शैली; गोविन्द नारायण मिश्र की तत्सम प्रधान, समास बहुल, पांडित्यपूर्ण शैली; बालमुकुन्द गुप्त की ओजस्वी, प्रवाहपूर्ण, तीखी, व्यंग्य शैली; मिश्र बन्धुओं की सूचना-प्रधान, तथ्यान्वेषिणी शैली; पद्मसिंह शर्मा की प्रशंसात्मक शैली; सरदार पूर्णसिंह की लाक्षणिक एवं आवेगशील शैली; चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की पांडित्यपूर्ण, व्यंग्यमयी शैली; गणेश शंकर विद्यार्थी की मर्मस्पर्शी, ओजस्विता, मूर्तविधायिनी शैली; पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की सुबोध और रमणीय गद्य-शैली; आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की चिन्तन-प्रधान, आत्मविश्वासमंडित, तत्त्वान्वेषिणी, समास शैली और बाबू गुलाब राय की सहज हास्यपूर्ण तथा विषयानुसार विचार-प्रधान एवं संयमित शैली के वैविध्य-पूर्ण विधान से द्विवेदी-युगीन गद्य-साहित्य अद्भुत गरिमा से मंडित हो गया है।

छायावाद-युगीन गद्य

सन् 1919 में पंजाब के जलियाँवाला बाग में आयोजित सभा में निहत्थी तथा असहाय जनता को गोलियों से भून दिया गया। 1920 ई0 में गाँधीजी ने व्यापक असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया, किन्तु लगभग दो वर्ष बाद ही यह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया। कुछ वर्ष बाद सन् 1931 में सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी भगतसिंह को फाँसी दी गयी। इन घटनाओं ने राष्ट्रीय चेतना को और दृढ़ किया। युवकों का कल्पनाशील मानस कुछ कर गुजरने के लिए तड़पने लगा। इस युग में पराधीनता और विवशता की अनुभूति से आकुल होकर यदि कभी वेदना और पीड़ा के गीत गाये गये, तो दूसरे ही क्षण स्वाधीनता के लिए सतत संघर्ष की बलवती प्रेरणा से उत्साहित होकर स्फूर्ति और आत्म-विश्वास की भावना को मुखरित किया गया। द्विवेदी युग सब मिलाकर नैतिक मूल्यों के आग्रह का युग था। इसलिए नवीन भावनाओं से प्रेरित युग-लेखक इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप भाव-तरल, कल्पना-प्रधान एवं स्वच्छन्द चेतना से युक्त साहित्य रचना में प्रवृत्त हुए। यह प्रवृत्ति कविता और गद्य दोनों ही क्षेत्रों में लक्षित होती है। सन् 1919 से 1938 तक के काल-खण्ड को हिन्दी साहित्य के इतिहास में छायावाद-युग नाम दिया गया है। इस युग की सीमा में रचित गद्य अधिक कलात्मक हो गया है। उसकी अभिव्यंजना-शक्ति विकसित हुई है। वह चित्रण-प्रधान, लाक्षणिक, अलंकृत और कवित्वपूर्ण हो गया है। उसमें अनुभूति की सघनता और भावों की तरलता है। उसकी प्रकृति अन्तर्मुखी हो गयी है। रायकृष्णदास, वियोगी हरि, महाराजकुमार डॉ0 रघुवीर सिंह, पं0 माखनलाल चतुर्वेदी, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, 'पंत', 'निराला', नन्ददुलारे वाजपेयी, बेचन शर्मा 'उग्र', शिवपूजन सहाय आदि गद्य-लेखकों ने छायावाद-युगीन गद्य-साहित्य को समृद्ध किया है। द्विवेदी युग के उत्तरार्द्ध में जो लेखक सामने आये थे वे छायावाद-युग में भी लिखते रहे और उनकी प्रौढ़तम रचनाएँ इसी युग में पुस्तकाकार प्रकाशित हुईं। इनमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बाबू गुलाब

राय तथा पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी प्रमुख हैं। इनकी साहित्य चेतना का मूल स्वर द्विवेदी-युगीन ही है, किन्तु छायावाद युग के अतीत प्रेम, सहज रहस्यमयता और लाक्षणिकता के महत्त्व को इन लेखकों ने भी स्वीकार किया है। उपर्युक्त लेखकों में राय कृष्णदास और वियोगी हरि अपने भावपूर्ण प्रतीकात्मक गद्यगीतों के लिए, महाराजकुमार डॉ0 रघुवीर सिंह अपनी अतीतोन्मुखी भावतरल रहस्यात्मक कल्पना के लिए, माखनलाल चतुर्वेदी अपनी प्रखर राष्ट्रीयता एवं स्वच्छन्द आलंकारिक-शैली के लिए, जयशंकर प्रसाद अपने मर्मस्पर्शी कल्पनाचित्र के लिए, 'पंत' अपनी सुकुमार कल्पना और नाद-सौन्दर्य-प्रधान गद्य के लिए, 'निराला' अपनी अद्भुत व्यंग्यात्मकता और सहानुभूतिप्रवण रेखांकन क्षमता के लिए, महादेवी वर्मा अपनी करुण, संवेदना एवं मर्मस्पर्शी चित्र-विधान के लिए, नन्ददुलारे वाजपेयी अपने गंभीर अध्ययन और स्वतंत्र चिन्तन के लिए, बेचन शर्मा 'उग्र' अपनी तीखी प्रतिक्रिया और आवेगपूर्ण नाटकीय शैली के लिए तथा शिवपूजन सहाय अपनी ग्रामीण सरलता के लिए स्मरणीय हैं।

➡ छायावादोत्तर-युगीन गद्य

सन् 1936 के बाद देश की स्थिति में तेजी से परिवर्तन आरम्भ हुआ। सन् 1937 में कांग्रेस ने पूरे देश में अपने व्यापक प्रभाव का परिचय देते हुए छह प्रान्तों में अपना मंत्रिमंडल बना लिया। एक बार ऐसा लगा कि हम स्वतंत्रता के द्वार पर खड़े हैं। किन्तु शीघ्र ही निराश होना पड़ा। सन् 1939 में द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हो गया। कांग्रेस ने इंग्लैण्ड को युद्ध में सहायता देना इस शर्त पर स्वीकार किया कि वह शीघ्र भारत में एक स्वतंत्र जनतंत्रवादी सरकार की स्थापना करे। ब्रिटिश सरकार की ओर से कोई संतोषजनक प्रतिक्रिया न होने पर सन् 1939 में कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने त्यागपत्र दे दिया। सन् 1940 में आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया गया। सन् 1942 में 'क्रिप्स-मिशन' भारत आया और अपने उद्देश्य में असफल रहा। इसी वर्ष कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया। देश में उग्र आन्दोलन हुआ और ब्रिटिश सरकार ने उसका पूरी शक्ति से दमन किया। सन् 1945 में महायुद्ध समाप्त हुआ। सन् 1947 में भारत में विदेशी सत्ता का अन्त हुआ किन्तु इसके साथ ही देश का विभाजन भी हो गया। विभाजन के परिणामस्वरूप भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए और देश की जनता तबाह हुई। इन घटनाओं ने हिन्दी साहित्य को बहुत दूर तक प्रभावित किया। सन् 1936 के बाद से ही हम कल्पना के लोक से उतर कर ठोस जमीन पर आने की चेष्टा करने लगे थे। मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित लेखकों ने प्रगतिवादी साहित्य-सृजन के प्रति प्रतिबद्धता दिखायी थी।

राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना से प्रेरित लेखकों ने भी क्रमशः यथार्थवादी जीवन-दर्शन को महत्त्व देना आरम्भ किया। छायावादी युग के कई लेखक नयी भूमि पर पदार्पण कर नवीन युग-चेतना के अनुसार साहित्य रचना में प्रवृत्त हुए। फलस्वरूप सन् 1938 के बाद 'छायावाद' का अन्त हुआ। उसके बाद के साहित्य को छायावादोत्तर साहित्य कहा गया है। छायावादोत्तर-युग के साहित्यकार स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व से लिखते आ रहे थे और उसके बाद भी सक्रिय रहे हैं। इनमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, रामधारीसिंह 'दिनकर', यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, जैनेन्द्र, 'अज्ञेय', नगेन्द्र, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, वासुदेवशरण अग्रवाल, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', भगवतशरण उपाध्याय आदि गद्य-लेखक हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के गद्य में पांडित्य और चिन्तन के साथ ही सहजता एवं सरसता का अद्भुत समन्वय है। भाषा पर द्विवेदीजी का असाधारण अधिकार है। उन्होंने हिन्दी गद्य में बाणभट्ट की समास-गुंफित ललित पदावली अवतरित कर उसे अद्भुत गरिमा प्रदान की है। शान्तिप्रिय द्विवेदी अपनी प्रभावग्राहिणी प्रज्ञा और भावोच्छ्वसित शैली के लिए प्रसिद्ध हैं। दिनकर के गद्य में विचारशीलता, विषयवैविध्य एवं व्यक्तित्त्व-व्यंजना तीनों का समन्वय है। यशपाल और 'अश्क' का गद्य सामाजिक यथार्थ के विविध स्तरों को व्यक्त करने से समर्थ है। भगवतीचरण वर्मा का गद्य सामाजिक, सहज, व्यावहारिक, प्रवाहपूर्ण एवं व्यंग्यगर्भित है। अमृतलाल नागर के गद्य में लखनवी तर्ज की एक विशेष प्रकार की रवानी है। मूलतः कथाकार होने के नाते इन लेखकों में वर्णनात्मक शैली का विशेष आकर्षण है। जैनेन्द्र का गद्य उनकी दार्शनिक मुद्रा और मनोवैज्ञानिक निगूढ़ता के लिए विख्यात है। 'अज्ञेय' अपनी बौद्धिकता के लिए प्रसिद्ध हैं। उनका गद्य चिन्तन-प्रधान एवं परिष्कृत होने के साथ ही व्यक्तित्व-व्यंजक और व्यंग्यगर्भित भी है। उन्होंने हिन्दी गद्य को आधुनिक परिवेश से जोड़ने का सफल प्रयास किया है। डॉ0 नगेन्द्र का गद्य सामान्यतः तर्क-प्रधान, विश्लेषण-परक और आत्मविश्वास की गरिमा से पूर्ण होता है किन्तु उसमें सन्दर्भ के अनुकूल नाटकीयता, व्यंग्य तथा बिम्ब-विधान भी लक्षित किया जा सकता है। रामवृक्ष बेनीपुरी अपने शब्द-चित्रों के लिए प्रसिद्ध हैं। ग्रामीण जीवन की निश्छल अभिव्यक्ति उनके गद्य को प्राणवान् बना देती है। बनारसीदास चतुर्वेदी की ख्याति उनके संस्मरणों, जीवनियों और रेखाचित्रों के लिए है। उनकी शैली रोचक और भाषा प्रवाहपूर्ण है। उनके छोटे-छोटे वाक्य अनुभव खण्डों को चित्रवत् प्रस्तुत करते चलते हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल का गद्य सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक गरिमा से मंडित है। उसमें विद्वत्ता, विचारशीलता और सरसता का अद्भुत समन्वय है। कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' अपने राजनीतिक संस्मरणों और रिपोर्ताजों के लिए प्रसिद्ध हैं। करुणा, व्यंग्य और भावुकता के समावेश से उनका

गद्य अत्यन्त आकर्षक हो गया है। भगवतशरण उपाध्याय इतिहास के चिरस्मरणीय घटनाओं को भावपूर्ण नाटकीय शैली में प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। उनका गद्य उनके इतिहास-ज्ञान एवं संस्कृति-बोध का परिचायक है।

➥ स्वातन्त्र्योत्तर-युगीन गद्य

इस युग के लेखकों में विद्यानिवास मिश्र, हरिशंकर परसाई, फणीश्वरनाथ 'रेणु', कुबेरनाथ राय, धर्मवीर भारती, शिवप्रसाद सिंह आदि उल्लेखनीय हैं। विद्यानिवास मिश्र अपनी मांगलिक दृष्टि, सांस्कृतिक चेतना, लोक-सम्पृक्ति एवं आधुनिक जीवन-बोध के लिए प्रसिद्ध हैं। उनका गद्य उनके व्यक्तित्त्व को साकार कर देता है। हरिशंकर परसाई ने सामाजिक और राजनीतिक जीवन की विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य किया है। उन्होंने हिन्दी गद्य की व्यंग्य क्षमता को निखारा है। 'रेणु' का गद्य ध्वनि-बिम्बों के माध्यम से वातावरण को सजीव बनाने में सक्षम है। कुबेरनाथ राय ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की गद्य-परम्परा को आगे बढ़ाया है। प्राचीन सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सन्दर्भों को नयी अर्थवत्ता प्रदान करके श्री राय ने हिन्दी गद्य को नयी भाव-भूमि प्रदान की है। धर्मवीर भारती गंभीर एवं विचारपूर्ण गद्य लिखते रहे हैं। यात्रावृत्त, रिपोर्ताज तथा व्यंग्य-विद्रूप लिखकर उन्होंने अपने गद्य को अपेक्षाकृत हल्की मनःस्थितियों से जोड़ने की चेष्टा की है। शिवप्रसाद सिंह लोक-चेतना से सम्पृक्त होते हुए भी व्यापक दृष्टि-सम्पन्न लेखक हैं। उनका गद्य मानव सम्बन्धी चेतना का वाहक है। इन लेखकों ने हिन्दी गद्य को सशक्त बनाया है, उसकी शब्द-सम्पदा में वृद्धि की है। उसे जीवन की बाह्य परिस्थितियों, सामाजिक सम्बन्धों, विसंगतियों, आधुनिक मानव के आंतरिक द्वन्द्वों एवं तनावों को व्यक्त करने में सक्षम बनाया है, अनेक नवीन कलात्मक गद्य-विधाओं का विकास किया है और सब मिला कर उसे राष्ट्रीय गरिमा प्रदान की है। अब हिन्दीतर प्रदेशों के लेखक भी हिन्दी में रुचि लेने लगे हैं। विदेशों में भी हिन्दी का प्रचार बढ़ रहा है। हिन्दी का भविष्य अब उज्ज्वल है और उसके विश्व-स्तर पर प्रतिष्ठित होने की संभावना बढ़ गयी है।

हिन्दी गद्य की विधाएँ

हिन्दी गद्य की विधाओं को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। एक वर्ग प्रमुख विधाओं का है। इसमें नाटक, एकांकी, उपन्यास, कहानी, निबंध और आलोचना को रखा जा सकता है। दूसरा वर्ग गौण या प्रकीर्ण गद्य-विधाओं का है। इसके अन्तर्गत जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत्त, गद्य-काव्य, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, डायरी, भेंटवार्त्ता, पत्र-साहित्य आदि का उल्लेख किया जा सकता है। प्रमुख विधाओं में 'नाटक', 'उपन्यास', 'कहानी' तथा 'निबंध' और 'आलोचना' का आरम्भ तो भारतेन्दु युग (सन् 1870-1900) में ही हो गया था। किन्तु गौण या प्रकीर्ण गद्य-विधाओं में कुछ का विकास द्विवेदी-युग और शेष का छायावाद और छायावादोत्तर-युग में हुआ है। द्विवेदी युग में 'जीवनी', 'यात्रावृत्त', 'संस्मरण' और 'पत्र साहित्य' का आरम्भ हो गया था। छायावाद-युग में 'गद्य-काव्य', 'संस्मरण' और 'रेखाचित्र' की विधाएँ विशेष समृद्ध हुईं। छायावादोत्तर-युग में प्रकीर्ण गद्य-विधाओं का अभूतपूर्व विकास हुआ है। 'आत्मकथा', 'रिपोर्ताज', 'भेंटवार्त्ता', 'व्यंग्य-विद्रूप-लेखन', 'डायरी', 'एकालाप' आदि अनेक विधाएँ छायावादोत्तर-युग में विकसित और समृद्ध हुई हैं। यहाँ यह स्मरणीय है कि प्रमुख गद्य विधाएँ अपनी रूप-रचना में एक दूसरे से सर्वथा स्वतंत्र हैं, किन्तु प्रकीर्ण गद्य-विधाओं में से अनेक निबंध विधा से पारिवारिक सम्बन्ध रखती हैं। एक ही परिवार से सम्बद्ध होने के कारण यह एक-दूसरे के पर्याप्त निकट प्रतीत होती हैं।

(क) प्रमुख विधाएँ

➥ नाटक

रंगमंच पर अभिनय द्वारा प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखी गयी तथा पात्रों एवं संवादों पर आधारित एक से अधिक अंकोंवाली दृश्यात्मक साहित्यिक रचना को नाटक कहते हैं। नाटक वस्तुतः रूपक का एक भेद है। रूप का आरोप होने के कारण नाटक को रूपक कहा गया है। अभिनय के समय नट पर दुष्यन्त या राम जैसे ऐतिहासिक पात्र का आरोप किया जाता है, इसीलिए इसे रूपक कहते हैं। नट (अभिनेता) से सम्बद्ध होने के कारण इसे नाटक कहते हैं। नाटक में ऐतिहासिक पात्र-विशेष की शारीरिक एवं मानसिक अवस्था का अनुकरण किया जाता है। आज नाटक शब्द अंग्रेजी 'ड्रामा' या 'प्ले' का पर्याय बन गया है। हिन्दी में मौलिक नाटकों का आरम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। द्विवेदी युग में इसका अधिक विकास नहीं हुआ। छायावाद-युग में जयशंकर प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों के विकास में महत्त्वपूर्ण योग दिया। छायावादोत्तर-युग में लक्ष्मी नारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क, सेठ गोविन्ददास, डॉ० रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश आदि ने इस विधा को विकसित

किया है। नाटकों का एक महत्त्वपूर्ण रूप एकांकी है। 'एकांकी' किसी एक महत्त्वपूर्ण घटना, परिस्थिति या समस्या को आधार बनाकर लिखा जाता है और उसकी समाप्ति एक ही अंक में उस घटना के चरम क्षणों को मूर्त करते हुए कर दी जाती है। हिन्दी में एकांकी नाटकों का विकास छायावाद युग से माना जाता है। सामान्यतः श्रेष्ठ नाटककारों ने ही श्रेष्ठ एकांकियों की भी रचना की है।

➥ उपन्यास

हिन्दी में 'उपन्यास' शब्द का आविर्भाव संस्कृत के 'उपन्यस्त' शब्द से हुआ है। उपन्यास शब्द का शाब्दिक अर्थ है—सामने रखना। उपन्यास में 'प्रसादन' अर्थात् प्रसन्न करने का भाव भी निहित है। किसी घटना को इस प्रकार सामने रखना कि उससे दूसरों को प्रसन्नता हो, उपन्यस्त करना कहा जायेगा। किन्तु इस अर्थ में 'उपन्यास' का प्रयोग आजकल नहीं होता। हिन्दी में 'उपन्यास' अंग्रेजी 'नावेल' का पर्याय बन गया है। हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास कृत **'परीक्षा गुरु'** माना जाता है। प्रेमचन्दजी ने हिन्दी उपन्यास को सामयिक-सामाजिक-जीवन से सम्बद्ध करके एक नया मोड़ दिया था। वे 'उपन्यास' को मानव-चरित्र का चित्र समझते थे। उनकी दृष्टि में 'मानव-चरित्र' पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है। वस्तुतः उपन्यास गद्य साहित्य की वह महत्त्वपूर्ण कलात्मक विधा है जो मनुष्य को उसकी समग्रता में व्यक्त करने में समर्थ है। प्रेमचन्द के बाद जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, नरेश मेहता, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, राजेन्द्र यादव आदि लेखकों ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को समृद्ध किया है।

➥ कहानी

जीवन के किसी मार्मिक तथ्य को नाटकीय प्रभाव के साथ व्यक्त करनेवाली, अपने में पूर्ण कलात्मक गद्य-विधा को कहानी कहा जाता है। हिन्दी में मौलिक कहानियों का आरम्भ 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के बाद हुआ। कहानी या आख्यायिका हमारे देश के लिए नयी चीज नहीं है। पुराणों में शिक्षा, नीति एवं हास्य-प्रधान अनेक आख्यायिकाएँ उपलब्ध होती हैं, किन्तु आधुनिक साहित्यिक कहानियाँ उद्देश्य और शिल्प में उनसे भिन्न हैं। आधुनिक कहानी जीवन के किसी मार्मिक तथ्य को नाटकीय प्रभाव के साथ व्यक्त करनेवाली अपने में पूर्ण एक कलात्मक गद्य-विधा है जो पाठक को अपनी यथार्थपरता और मनोवैज्ञानिकता के कारण निश्चित रूप से प्रभावित करती है। हिन्दी कहानी के विकास में प्रेमचन्द का महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्रेमचन्दोत्तर या छायावादोत्तर युग में जैनेन्द्र, 'अज्ञेय', इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, अमरकान्त, मोहन राकेश, फणीश्वरनाथ 'रेणु', द्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण', शिवप्रसाद सिंह, धर्मवीर भारती, मन्नू भण्डारी, शिवानी, निर्मल वर्मा आदि लेखकों ने इस दिशा को अधिक कलात्मक और समृद्ध बनाया है।

➥ आलोचना

आलोचना का शाब्दिक अर्थ है—किसी वस्तु को भली प्रकार देखना। भली प्रकार देखने से किसी वस्तु के गुण-दोष प्रकट होते हैं। इसलिए किसी साहित्यिक रचना को भली प्रकार देखकर उसके गुण-दोषों को प्रकट करना उसकी आलोचना करना है। आलोचना के लिए 'समीक्षा' शब्द भी प्रचलित है। इसका भी लगभग यही अर्थ है। हिन्दी में आलोचना अंग्रेजी के 'क्रिटिसिज्म' शब्द का पर्याय बन गया है। भारतीय काव्य-चिन्तन के क्षेत्र में सैद्धान्तिक या शास्त्रीय आलोचना का विशेष महत्त्व रहा है। हमारा यह पक्ष अत्यन्त समृद्ध और पुष्ट है। हिन्दी में आधुनिक पद्धति की आलोचना का आरम्भ भारतेन्दु युग में बालकृष्ण भट्ट और बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' द्वारा लाला श्रीनिवासदास कृत 'संयोगिता स्वयंवर' नाटक की आलोचना से माना जाता है। आगे चलकर द्विवेदी युग में पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, मिश्र बन्धु, बाबू श्यामसुन्दर दास, पद्मसिंह शर्मा, लाला भगवानदीन आदि ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया। हिन्दी आलोचना का उत्कर्ष आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना कृतियों के प्रकाशन से मान्य है। आचार्य शुक्ल के बाद बाबू गुलाब राय, पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० नगेन्द्र और डॉ० रामविलास शर्मा की हिन्दी आलोचना के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

➥ निबंध

हिन्दी में निबंध शब्द अंग्रेजी के 'एसे' शब्द के पर्याय के रूप में व्यवहृत होता है। 'एसे' शब्द का अर्थ है—प्रयास। अर्थात् किसी विषय के सम्बन्ध में कुछ कहने का प्रयास ही 'एसे' है। 'प्रयास' होने के कारण 'एसे' या निबंध अपने मूलरूप में प्रौढ़ रचना नहीं मानी गयी है। यह शिथिल मनःस्थिति में लिखित अव्यवस्थित और ढीली-ढाली रचना समझी जाती है। व्यवहार में विचार-प्रधान गंभीर लेखों तथा भाव-प्रधान आत्म-व्यंजक रचनाओं, दोनों के लिए निबंध शब्द का प्रयोग होता है। निबंध को परिभाषित करते हुए बाबू गुलाबराय ने कहा है—"निबंध उस गद्य-रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या

प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और सम्बद्धता के साथ किया गया हो।''
निबंध मुख्यतः चार प्रकार के माने गये हैं–

1. वर्णनात्मक—इसमें किसी वस्तु को स्थिर रूप में देखकर उसका वर्णन किया जाता है।

2. विवरणात्मक—इसमें किसी वस्तु को उसके गतिशील रूप में देखकर उसका वर्णन किया जाता है।

3. विचारात्मक—इसमें विचार और तर्क की प्रधानता होती है।

4. भावात्मक—यह भाव-प्रधान होता है। इसमें आवेगशीलता होती है।

वस्तुतः निबंध-लेखक के व्यक्तित्त्व के अनुसार निबंध-रचना के अनेक प्रकार हो सकते हैं। यह भेद सुविधा की दृष्टि से निबंधों को मोटे तौर पर वर्गीकृत करने के लिए किये गये हैं।

हिन्दी में निबंध-रचना का आरम्भ भारतेन्दु-युग से ही माना जाता है। भारतेन्दु-युग में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट और बालमुकुन्द गुप्त ने अनेक विषयों से सम्बन्धित सुन्दर निबंध लिखे थे। उसके बाद महावीरप्रसाद द्विवेदी, बाबू श्यामसुन्दर दास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, बाबू गुलाबराय, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी आदि ने इस विधा को विकसित और समृद्ध किया। आचार्य शुक्ल के बाद आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, रामधारीसिंह 'दिनकर', वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ० नगेन्द्र, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय आदि लेखकों ने हिन्दी निबंध की परम्परा को आगे बढ़ाया।

(ख) गौण या प्रकीर्ण विधाएँ

गौण विधाओं का एक-दूसरे से निकट का सम्बन्ध है। ये सभी एक प्रकार से निबंध-परिवार में आती हैं। प्रायः सभी का सम्बन्ध लेखक के व्यक्तिगत जीवन और उसके परिवेश से है। लेखक अपने देश-काल और परिवेश के प्रति जितने ही संवेदनशील होंगे, गौण कही जानेवाली विधाओं का उतना ही विकास होगा। सम्प्रति हिन्दी गद्य में इन विधाओं की रचना प्रचुर परिमाण में हो रही है। इसलिए हिन्दी गद्य के साम्प्रतिक स्वरूप को समझने के लिए इन विधाओं के विकास का ज्ञान आवश्यक है।

➡ जीवनी

सफल जीवनी के लिए आवश्यक है कि किसी महान् व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक की घटनाओं को काल-क्रम से इस रूप में प्रस्तुत करना कि उस व्यक्ति का व्यक्तित्व निखर उठे। जीवनी-लेखक तटस्थ रहता है। वह अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त नहीं करता। यों तो हिन्दी में जीवनी लेखन का कार्य भारतेन्दु युग में ही आरम्भ हो गया था, किन्तु आदर्श जीवनियाँ बहुत बाद में लिखी गयीं। द्विवेदी-युग में ऐतिहासिक पुरुषों और धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ अधिक लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में लक्ष्मीधर वाजपेयी, सम्पूर्णानन्द, नाथूराम प्रेमी, मुकुन्दीलाल वर्मा उल्लेखनीय हैं। छायावाद युग में राष्ट्रीय महापुरुषों—लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, गाँधी, जवाहरलाल नेहरू आदि की जीवनियाँ अधिक लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में रामनरेश त्रिपाठी, गणेश शंकर विद्यार्थी, मन्मथनाथ गुप्त, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद और मुंशी प्रेमचन्द उल्लेखनीय हैं। छायावादोत्तर-युग में लोकप्रिय नेताओं, संत-महात्माओं, विदेशी महापुरुषों, वैज्ञानिकों, खिलाड़ियों और साहित्यकारों की जीवनियाँ लिखी गयीं। इस युग के जीवनी-लेखकों में काका कालेलकर, जैनेन्द्र कुमार, रामनाथ सुमन, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इधर अमृत राय, शान्ति जोशी, रामविलास शर्मा और विष्णु प्रभाकर ने क्रमशः 'कलम का सिपाही', 'सुमित्रानन्दन पंत—जीवनी और साहित्य', 'निराला की साहित्य साधना' तथा 'आवारा मसीहा' लिखकर साहित्यकारों की आदर्श जीवनियाँ प्रस्तुत करने की परम्परा का श्रीगणेश किया है।

➡ आत्मकथा

जब लेखक अपने जीवन को स्वयं प्रस्तुत करता है तो वह 'आत्मकथा' लिखता है। स्वयं अपने को निर्मम भाव से प्रस्तुत करना कठिन कार्य है। इसलिए आदर्श आत्मकथा लिखना भी कठिन कार्य है। बीती हुई घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में स्मृति के आधार पर प्रस्तुत करना और उनके साथ ही तटस्थ रहकर आत्म-निरीक्षण करना सरल नहीं है, हिन्दी में यों तो स्वयं भारतेन्दु ने 'एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती' लिखकर इस दिशा में प्रयोग आरम्भ किया भी, किन्तु यह प्रयोग अधूरा रह गया। हिन्दी की आदर्श आत्मकथाएँ छायावाद और छायावादोत्तर युग में लिखी गयी हैं। इस क्षेत्र में बाबू श्यामसुन्दर दास कृत 'मेरी आत्म कहानी', वियोगी हरि कृत 'मेरा जीवन प्रवाह', राजेन्द्र बाबू कृत 'मेरी आत्मकथा', यशपाल कृत 'सिंहावलोकन', पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' कृत 'अपनी

खबर', बाबू गुलाब राय कृत 'मेरी असफलताएँ, वृन्दावनलाल वर्मा कृत 'अपनी कहानी', 'पन्त' कृत 'साठ वर्ष एक रेखांकन' और लोकप्रिय कवि बच्चन कृत 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' तथा 'नीड़ का निर्माण फिर' उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

➥ यात्रावृत्त

जब लेखक अपने जीवन की अविस्मरणीय यात्राओं का विवरण आत्म-कथात्मक शैली में प्रस्तुत करता है तो वह 'यात्रा साहित्य' की सृष्टि करता है। आदर्श यात्रावृत्त वह माना जाता है जिसमें यात्रा-क्रम में आये हुए स्थान और बीती हुई घटनाएँ लेखक की स्मृति संवेदना का अंग बनकर चित्रवत् अंकित होती जाती हैं। यात्रावृत्त आत्मकथा का अंश भी हो सकता है और स्वतंत्र रूप से भी लिखा जा सकता है। यात्रावृत्त में 'आत्मकथा', 'संस्मरण' और 'रिपोर्ताज' तीनों के तत्त्व पाये जाते हैं। हिन्दी में 'यात्रावृत्त' लिखने का क्रम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से प्रारम्भ होता है किन्तु कलात्मक यात्रावृत्त छायावाद और छायावादोत्तर-युग में लिखे गये हैं। इस क्षेत्र में राहुल सांकृत्यायन, देवेन्द्र सत्यार्थी, 'अज्ञेय', यशपाल, नगेन्द्र, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा आदि के द्वारा प्रस्तुत यात्रावृत्त उल्लेखनीय हैं।

➥ गद्यगीत या गद्यकाव्य

गद्यगीत में भक्ति, प्रेम, करुणा आदि भावनाएँ छोटे-छोटे कल्पना-चित्रों के माध्यम से अन्योक्ति या प्रतीक पद्धति पर व्यक्त की जाती हैं। अनुभूति की सघनता, भावाकुलता, संक्षिप्तता, रहस्यमयता तथा सांकेतिकता श्रेष्ठ गद्यगीत की विशेषताएँ हैं। हिन्दी में गद्य-गीतों का आरम्भ राय कृष्णदास के 'साधना संग्रह' के प्रकाशन से हुआ। इसके बाद वियोगी हरि का 'तरंगिणी' संग्रह प्रकाशित हुआ। ये दोनों कृतियाँ द्विवेदी-युग की सीमा में आती हैं। इसके बाद छायावाद-युग में गद्य-गीतों की रचना अधिक हुई। राय कृष्णदास और वियोगी हरि के अतिरिक्त चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, 'अज्ञेय' और डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी गद्यगीतों के क्षेत्र में अच्छे प्रयोग किये। छायावादोत्तर-युग में दिनेशनंदिनी डालमिया, डॉ० रघुवीर सिंह, तेज नारायण काक, रामवृक्ष बेनीपुरी आदि ने सुन्दर गद्य-गीतों की रचना की।

➥ संस्मरण

जब लेखक अपने निकट सम्पर्क में आनेवाले महत् विशिष्ट, विचित्र, प्रिय और आकर्षक व्यक्तियों, घटनाओं या दृश्यों को स्मृति के सहारे पुनः कल्पना में मूर्त करता है और उसे शब्दांकित करता है तब वह संस्मरण लिखता है। संस्मरण लिखते समय लेखक पूर्णतः तटस्थ नहीं रह पाता। याद आनेवाले का अंकन करते हुए वह स्वयं भी अंकित हो जाता है। संस्मरण-लेखक के लिए संवेदनशील, प्रभावग्राही और व्यक्ति या वस्तु के वैशिष्ट्य को लक्षित करनेवाला होना चाहिए। हिन्दी में आदर्श संस्मरण छायावादोत्तर-युग में लिखे गये हैं। इस क्षेत्र में श्रीराम शर्मा, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', देवेन्द्र सत्यार्थी, बनारसीदास चतुर्वेदी आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

➥ रेखाचित्र

रेखाचित्र में भी किसी व्यक्ति, वस्तु या सन्दर्भ का चित्रांकन किया जाता है। इसमें सांकेतिकता अधिक होती है। जिस प्रकार रेखा-चित्रकार थोड़ी सी रेखाओं को प्रयोग करके किसी व्यक्ति, वस्तु या सन्दर्भ की मूलभूत विशेषता को उभार देता है उसी प्रकार लेखक कम से कम शब्दों का प्रयोग करके किसी व्यक्ति या वस्तु की मूलभूत विशेषता को उभार देता है। रेखाचित्र में लेखक का पूर्णतः तटस्थ होना आवश्यक है। वस्तुतः संस्मरण और रेखाचित्र एक-दूसरे से मिलती-जुलती विधाएँ हैं। संस्मरण में भी चित्र-शैली का ही प्रयोग किया जाता है किन्तु रेखाचित्र में चित्र अधूरा या खंडित भी हो सकता है, जबकि संस्मरण में चित्र छोटा या लघु भले हो उसे अपने आप में पूर्ण बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। संस्मरण अभिधामूलक होता है किन्तु रेखाचित्र सांकेतिक और व्यंजक होता है। वस्तुतः रेखाचित्र संस्मरण का कलात्मक विकास है। हिन्दी में महादेवी वर्मा, प्रकाश चन्द्र गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', विनयमोहन शर्मा, विष्णु प्रभाकर और डॉ० नगेन्द्र के रेखाचित्र उल्लेखनीय हैं।

➥ रिपोर्ताज

रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को ही रिपोर्ताज कहते हैं। रिपोर्ताज में समसामयिक घटनाओं को उनके वास्तविक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। रिपोर्ताज लेखक का घटना से प्रत्यक्ष साक्षात्कार आवश्यक है। इसलिए युद्ध की विभीषिका, अकाल की छाया या पूरे मानव समाज को प्रभावित करनेवाली अन्य महत्त्वपूर्ण घटनाओं के घटित होने पर पत्रकार और साहित्यकार उस घटना के अनेक संदर्भों की प्रत्यक्ष जानकारी हासिल करते हैं और उन्हें रिपोर्ताज शैली में प्रस्तुत करके पाठक के मन को झकझोर

देते हैं। हिन्दी में रिपोर्ताज लिखने का प्रचलन छायावादोत्तर युग में हुआ है। इस क्षेत्र में रांगेय राघव, बालकृष्ण राव, धर्मवीर भारती, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', 'विष्णुकांत शास्त्री आदि लेखकों के नाम उल्लेखनीय हैं।

➡ डायरी

जब लेखक तिथि-विशेष में घटित घटना-चक्र को यथातथ्य रूप में अथवा अपनी संक्षिप्त प्रतिक्रिया या टिप्पणी के साथ लिख लेता है तो यह लेखन डायरी विधा के रूप में स्वीकार किया जाता है। डायरी कुछ महत्त्वपूर्ण तिथियों में घटित घटनाओं को लेकर भी लिखी जा सकती है और क्रमबद्ध रूप में रोजनामचा के रूप में भी लिखी जा सकती है। उसका आकार कुछ पंक्तियों तक ही सीमित हो सकता है और कई पृष्ठों तक विस्तृत भी। वह स्वतंत्र रूप से भी लिखी जा सकती है और कहानी, उपन्यास या यात्रावृत्त के अंग के रूप में भी। डायरी मूलतः लेखक की निजी वस्तु है। इसमें उसे अपने निजी विचार, दृष्टि, उद्भावना और प्रतिक्रिया व्यक्त करने की छूट है। यह दूसरी बात है कि जिस लेखक का सारा जीवन ही सार्वजनिक हो, उसकी डायरी भी सार्वजनिक बातों को लेकर लिखी जाय। कभी-कभी डायरी घटित तथ्य को आधार न बनाकर संभावित और काल्पनिक सत्य को लेकर भी लिखी जाती है। इसमें शिल्प डायरी का होता है किन्तु तथ्याधार सार्वजनिक होता है। हिन्दी में डायरी विधा का आरम्भ छायावादी-युग से मान्य है। इस सन्दर्भ में धीरेन्द्र वर्मा कृत 'मेरी कालेज डायरी' उल्लेखनीय है। छायावादोत्तर-युग में इलाचन्द्र जोशी, रामधारीसिंह 'दिनकर, शमशेर बहादुर सिंह, मोहन राकेश आदि की डायरियाँ प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी में गद्य की इस कलात्मक विधा का अभी पूर्ण विकास नहीं हुआ है।

➡ भेंटवार्त्ता

जब किसी महान् दार्शनिक, राजनीतिज्ञ या साहित्यकार से मिलकर साहित्य, दर्शन या राजनीति के विषय में कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न किये जाते हैं और उनसे प्राप्त उत्तरों को व्यवस्थित ढंग से लिपिबद्ध कर लिया जाता है तो भेंटवार्त्ता की सृष्टि होती है। भेंटवार्त्ता वास्तविक भी होती है और काल्पनिक भी। भेंट-वार्त्ताओं में जिस व्यक्ति से भेंट की जाती है उसके स्वभाव, रुचि, कार्य-कुशलता, बुद्धिमत्ता तथा अपनी उत्सुकता, संभ्रमता आदि का उल्लेख करके लेखक भेंट-वार्त्ताओं को अधिक रुचिकर बना सकता है। हिन्दी में वास्तविक और काल्पनिक दोनों ही प्रकार की भेंट-वार्त्ताएँ लिखी गयी हैं। वास्तविक भेंटवार्त्ता लिखनेवालों में पद्मसिंह शर्मा और रणवीर साँगा के नाम उल्लेखनीय हैं। काल्पनिक भेंट-वार्त्ता लिखनेवालों में राजेन्द्र यादव (चैखव : एक इण्टरव्यू) और श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन (भगवान् महावीर : एक इण्टरव्यू) उल्लेखनीय हैं। भेंट-वार्त्ताएँ छायावादोत्तर-युग में ही लिखी गयी हैं। अभी हिन्दी में इस विधा के विकास की पूरी संभावना है।

➡ पत्र-साहित्य

जब लेखक अपने किसी मित्र, परिचित या अल्प परिचित व्यक्ति को अपने सम्बन्ध में या किसी महत्त्वपूर्ण समस्या के सम्बन्ध में उसकी और अपनी सामाजिक स्थिति को ध्यान में रखकर उचित आदर, सम्मान या स्नेह का भाव प्रकट करते हुए निजी तौर पर मात्र सूचना, जिज्ञासा या समाधान लिखकर भेजता है और उत्तर की अपेक्षा रखता है तो वह पत्र-साहित्य का सृजन करता है। पत्र नितांत निजी हो सकते हैं और सार्वजनिक भी। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ भेजे जानेवाले पत्र प्रायः सार्वजनिक प्रश्नों को लेकर लिखे जाते हैं। साहित्यिक दृष्टि से वे पत्र अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं जो प्रकाशनार्थ नहीं लिखे जाते और मात्र दो व्यक्तियों की बीच की वस्तु होते हैं। हिन्दी साहित्य में पत्र-प्रकाशन का आरम्भ द्विवेदी युग में ही हो गया था। महात्मा मुंशीराम ने स्वामी दयानन्द सम्बन्धी पत्रों का संकलन सन् 1904 में प्रकाशित कराया था। छायावाद-युग में रामकृष्ण आश्रम, देहरादून से 'विवेकानन्द पत्रावली' का प्रकाशन किया गया। छायावादोत्तर युग में पत्र-साहित्य के संकलन और प्रकाशन की दिशा में कई महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं। इस क्षेत्र में बैजनाथ सिंह 'विनोद' द्वारा संकलित 'द्विवेदी पत्रावली' (सन् 1954), बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा संकलित 'पद्मसिंह शर्मा के पत्र' (सन् 1956), वियोगी हरि द्वारा संकलित 'बड़ों के प्रेरणादायक कुछ पत्र' (सन् 1960), जानकीवल्लभ शास्त्री द्वारा संकलित 'निराला के पत्र' (सन् 1971), हरिवंश राय बच्चन द्वारा संकलित 'पंत के दो सौ पत्र बच्चन के नाम' (सन् 1971) उल्लेखनीय पत्र संकलन हैं। उक्त विधाओं के अतिरिक्त संप्रति हिन्दी गद्य-साहित्य में 'अभिनन्दन एवं स्मृति ग्रंथ', 'टिप्पणी लेखन', 'लघु कथा', 'एकालाप' आदि अनेक गद्य विधाएँ विकसित हो रही हैं।

आज जीवन की संकुलता और मानवीय सम्बन्धों की जटिलता के कारण अनेक छोटी-छोटी गद्य-विधाओं के विकसित होने की सम्भावना बढ़ गयी है। इसके साथ ही गद्य-शैली में विविधता और उसकी अभिव्यक्ति-भंगिमा में अनेकरूपता आयी है। हिन्दी-गद्य यथार्थोन्मुख हुआ है। उसकी शब्द-सम्पदा में निरन्तर वृद्धि हो रही है। वाक्य-रचना में लचीलापन आया है। आज वह बाह्य-जगत् की विराटता और आन्तरिक जीवन की गहनता, जटिलता और सूक्ष्मता को व्यक्त करने में समर्थ है। यह हिन्दी गद्य के सशक्त और समृद्ध होने का शुभ लक्षण है।

●●

हिन्दी गद्य के विकास पर आधारित प्रश्न

● **निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनिए–**

1. 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' के रचयिता हैं–
(i) विट्ठलनाथ (ii) गोकुलनाथ (iii) नाभादास (iv) चतुर्भुजदास।

2. 'आनन्द कादम्बिनी' के सम्पादक थे–
(i) बालकृष्ण भट्ट (ii) प्रतापनारायण मिश्र
(iii) राधाचरण गोस्वामी (iv) बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'।

3. बाबू गुलाबराय की आत्मकथा है–
(i) कुछ आपबीती, कुछ जगबीती (ii) मेरा जीवन प्रवाह
(iii) मेरी असफलताएँ (iv) अपनी खबर।

4. राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' की रचना है–
(i) भाग्यवती (ii) नासिकेतोपाख्यान (iii) राजा भोज का सपना (iv) प्रेमसागर।

5. 'तट की खोज' रचना है–
(i) राय कृष्णदास की (ii) सरदार पूर्णसिंह की (iii) हरिशंकर परसाई की (iv) मोहन राकेश की।

6. खड़ीबोली गद्य की प्रथम रचना है–
(i) कृष्णावतार स्वरूप निर्णय (ii) गोरा-बादल की कथा
(iii) वर्ण रत्नाकर (iv) भाषा योगवाशिष्ठ।

7. 'सौ अजान एक सुजान' के लेखक हैं–
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) प्रतापनारायण मिश्र
(iii) अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (iv) बालकृष्ण भट्ट।

8. 'ब्राह्मण' पत्रिका प्रकाशित हुई–
(i) द्विवेदी युग में (ii) छायावाद युग में (iii) भारतेन्दु युग में (iv) पूर्व-भारतेन्दु युग में।

9. 'अपनी खबर' पुस्तक की विधा है–
(i) संस्मरण (ii) रेखाचित्र (iii) जीवनी (iv) आत्मकथा।

10. हिन्दी की प्रथम डायरी है–
(i) मेरी कालिज-डायरी (ii) डायरी के पन्ने
(iii) नरदेव शास्त्री की जेल-डायरी (iv) तूफानों के बीच।

11. 'अमेरिका का मस्त योगी वाल्ट ह्विटमैन' निबन्ध है–
(i) हरिशंकर परसाई का (ii) राय कृष्णदास का
(iii) सरदार पूर्णसिंह का (iv) प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी का।

12. 'निस्सहाय हिन्दू' रचना है–
(i) राय कृष्णदास (ii) बालकृष्ण भट्ट (iii) श्रीनिवास दास (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

13. 'चन्द्रावली' के रचयिता हैं–
(i) रामचन्द्र शुक्ल (ii) सेठ गोविन्द दास (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

14. 'साहित्य-सहचर' के लेखक हैं–
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) बाबू गुलाबराय (iv) जयशंकर 'प्रसाद'।

15. 'माधुरी' पत्रिका किस युग से सम्बन्धित है?
(i) शुक्ल युग से (ii) शुक्लोत्तर युग से (iii) द्विवेदी युग से (iv) भारतेन्दु युग से।

16. 'एकांकी-सम्राट' कहा जाता है–
(i) रामकुमार वर्मा को (ii) सेठ गोविन्द दास को (iii) हरिकृष्ण प्रेमी को (iv) मोहन राकेश को।

17. 'आवारा मसीहा' गद्य-विधा की रचना है–
(i) उपन्यास (ii) कहानी (iii) नाटक (iv) जीवनी।

18. 'रानी केतकी की कहानी' के रचनाकार हैं–
(i) लल्लूलाल (ii) सदल मिश्र
(iii) इंशा अल्ला खाँ (iv) मुंशी सदासुख लाल।

19. रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है–
(i) हिन्दी साहित्य का आदिकाल (ii) हिन्दी भाषा का इतिहास
(iii) हिन्दी साहित्य का इतिहास (iv) देवनागरी का इतिहास।

20. 'नागरी प्रचारिणी सभा' के संस्थापक हैं–
(i) पुरुषोत्तमदास टंडन (ii) मदनमोहन मालवीय (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

21. 'सरस्वती' के प्रथम सम्पादक हैं–
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) श्यामसुन्दर दास
(iii) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी (iv) हरदेव बाहरी।

22. निम्नलिखित रचनाओं में से कौन-सी रचना कहानी है?
(i) त्याग-पत्र (ii) भाग्य और पुरुषार्थ (iii) पुरस्कार (iv) आन का मान।

23. निम्नलिखित में से कौन द्विवेदीकालीन गद्य लेखक/लेखिका हैं?
(i) महादेवी वर्मा (ii) सरदार पूर्णसिंह (iii) सियारामशरण गुप्त (iv) अज्ञेय।

24. 'आवारा मसीहा' के रचनाकार कौन हैं?
(i) रामवृक्ष बेनीपुरी (ii) रांगेय राघव (iii) विष्णु प्रभाकर (iv) राहुल सांकृत्यायन।

25. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी द्वारा सम्पादित कौन-सी पत्रिका थी?
(i) हंस (ii) सरस्वती (iii) ब्राह्मण (iv) इन्दु।

26. 'मेरी असफलताएँ' किस विधा की रचना है?
(i) जीवनी साहित्य (ii) कहानी (iii) डायरी (iv) आत्मकथा।

27. 'अम्बपाली' किस विधा की रचना है?
(i) कहानी (ii) उपन्यास (iii) नाटक (iv) संस्मरण।

28. निम्नलिखित रचनाओं में से कौन-सी रचना नाटक है?
(i) नमक का दरोगा (ii) गोदान (iii) आखिरी चट्टान (iv) राजमुकुट।

29. निम्नलिखित रचनाओं में कौन छायावादी युग का गद्य लेखक है?
(i) प्रतापनारायण मिश्र (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी
(iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) नन्ददुलारे वाजपेयी।

30. 'बहू की विदा' के रचनाकार हैं–
(i) सेठ गोविन्ददास (ii) हरिकृष्ण प्रेमी (iii) मोहन राकेश (iv) विनोद रस्तोगी।

31. बालकृष्ण भट्ट द्वारा सम्पादित पत्रिका है–
(i) कवि वचन सुधा (ii) हिन्दी प्रदीप (iii) विशाल भारत (iv) साहित्य संदेश।

32. 'ध्रुवस्वामिनी' किस विधा की रचना है?
(i) उपन्यास (ii) नाटक (iii) एकांकी (iv) कहानी।

33. निम्नलिखित में से भारतेन्दुयुगीन गद्य लेखक हैं–
(i) रघुवीर सिंह (ii) जयशंकर प्रसाद
(iii) भगवन शरण उपाध्याय (iv) प्रतापनारायण मिश्र।

34. 'साधना' के रचनाकार कौन हैं?
(i) वृन्दावनलाल वर्मा (ii) मोहन राकेश (iii) राय कृष्णदास (iv) विनयमोहन शर्मा।

35. जैनेन्द्र कुमार द्वारा रचित निबंध है–
(i) पृथिवीपुत्र (ii) पूर्वोदय (iii) कुली (iv) पथ के साथी।

36. 'रूपक रहस्य' के लेखक कौन हैं? अथवा
'रूपक रहस्य' किसकी रचना है?
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) वियोगी हरि (iii) रामचन्द्र शुक्ल (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

37. बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' द्वारा सम्पादित पत्रिका है–
(i) सरस्वती (ii) आनन्द कादम्बिनी (iii) प्रथा (iv) हिन्दी प्रदीप।

38. 'अंधेर नगरी' के रचनाकार कौन हैं?
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) जयशंकर प्रसाद
(iii) हरिकृष्ण प्रेमी (iv) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।

39. 'शेखर एक जीवनी' के लेखक कौन हैं?
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) भीष्म साहनी (iii) भगवतीचरण वर्मा (iv) अज्ञेय।

40. निम्न में से 'ब्राह्मण' पत्रिका के सम्पादक कौन हैं?
(i) बालकृष्ण भट्ट (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iii) प्रतापनारायण मिश्र (iv) श्यामसुन्दर दास।

41. इनमें से कौन नाटक नहीं है?
(i) राजमुकुट (ii) गरुड़ध्वज (iii) अपना-अपना भाग्य (iv) आन का मान।

42. डॉ0 सम्पूर्णानन्द द्वारा सम्पादित पत्रिका है–
(i) सरस्वती (ii) धर्मयुग (iii) मर्यादा (iv) हंस।

43. निम्नलिखित में से जीवनी है–
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) आवारा मसीहा (iii) अतीत के चलचित्र (iv) चिंतामणि।

44. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा सम्पादित पत्र है–
(i) हिन्दी प्रदीप (ii) समालोचक (iii) हंस (iv) ब्राह्मण।

45. 'गोदान' किस विधा की रचना है?
(i) उपन्यास (ii) नाटक (iii) आत्मकथा (iv) डायरी।

46. निम्नलिखित में कौन-सी रचना नाटक है?
(i) जीवन कण (ii) करुणा (iii) सती (iv) स्कन्दगुप्त।

47. 'परदा' कहानी के लेखक कौन हैं?
(i) प्रेमचन्द (ii) जयशंकर प्रसाद (iii) अमरकान्त (iv) यशपाल।

48. जयशंकर प्रसाद किसके लेखक हैं?
(i) कुटज (ii) ध्रुवस्वामिनी (iii) आत्मनेपद (iv) आषाढ़ का एक दिन।

49. 'गबन' के लेखक कौन हैं?
(i) भीष्म साहनी (ii) भगवतीचरण वर्मा (iii) प्रेमचन्द (iv) अज्ञेय।

50. पं0 लल्लूलाल की कौन-सी रचना है?
(i) प्रेमसागर (ii) सुखसागर (iii) रानी केतकी की कहानी (iv) परीक्षा गुरु।

51. नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना किस युग में हुई?
(i) भारतेन्दु युग में (ii) द्विवेदी युग में (iii) छायावाद युग में (iv) छायावादोत्तर युग में।

52. 'प्रेमसागर' के रचनाकार हैं–
(i) सदल मिश्र (ii) सूरदास (iii) रामप्रसाद निरंजनी (iv) लल्लूलाल।

53. 'घुमक्कड़शास्त्र' के रचनाकार कौन हैं?
(i) राहुल सांकृत्यायन (ii) विद्यानिवास मिश्र (iii) डॉ0 नगेन्द्र (iv) वृन्दावनलाल वर्मा।

54. 'कुटज' के रचयिता कौन हैं?
(i) अज्ञेय (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) यशपाल।

55. श्यामसुन्दर दास का जन्मकाल है–
(i) 1850 ई0 (ii) 1864 ई0 (iii) 1875 ई0 (iv) 1881 ई0।

56. 'अष्टयाम' के रचनाकार हैं–
(i) गोकुलनाथ (ii) वल्लभाचार्य (iii) नाभादास (iv) तुलसीदास।

57. डॉ0 रामविलास शर्मा की रचना का क्या नाम है?
(i) निराला की साहित्य साधना (ii) मेरा परिवार (iii) पर्वतों के देश में (iv) चिन्तामणि।

58. 'मेरी जीवन यात्रा' किस लेखक की आत्मकथा है?
(i) वियोगी हरि (ii) राहुल सांकृत्यायन (iii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iv) महादेवी वर्मा।

59. 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका के सम्पादक कौन हैं?
(i) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (ii) डॉ0 श्यामसुन्दर दास (iii) बालकृष्ण भट्ट (iv) बाबू गुलाबराय।

60. 'द्विवेदी-युग' के साहित्यकार कौन हैं?
(i) डॉ0 श्यामसुन्दर दास (ii) भगवतीचरण वर्मा (iii) यशपाल (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

61. 'चिन्तामणि' किस विधा की रचना है?
(i) उपन्यास (ii) कहानी (iii) निबन्ध (iv) नाटक।

62. 'आधुनिक हिन्दी नाटक' के लेखक कौन हैं?
(i) बदरीनारायण चौधरी (ii) डॉ0 नगेन्द्र (iii) रामचन्द्र शुक्ल (iv) महादेवी वर्मा।

63. 'पतितों के देश में' किस साहित्यकार की रचना है?
(i) राहुल सांकृत्यायन (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी
(iii) कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर (iv) डॉ0 हजारीप्रसाद द्विवेदी।

64. निम्नलिखित में से कौन 'जीवनी' है?
(i) अतीत के चलचित्र (ii) चिन्तामणि (iii) आवारा मसीहा (iv) नीड़ का निर्माण फिर।

65. डॉ0 सम्पूर्णानन्द द्वारा सम्पादित पत्रिका का नाम है–
(i) धर्मयुग (ii) हंस (iii) सरस्वती (iv) मर्यादा।

66. भारतेन्दु के सहयोगी लेखक हैं–
(i) शिवपूजन सहाय (ii) बालकृष्ण भट्ट (iii) वियोगी हरि (iv) हजारीप्रसाद द्विवेदी।

67. 'चिन्तामणि' के रचनाकार हैं–
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (iii) प्रेमचन्द (iv) गुलाब राय।

68. 'दीपदान' नामक रचना है–
(i) नाटक (ii) भेंटवार्त्ता (iii) लघुकथा (iv) एकांकी।

69. स्वामी दयानन्द सरस्वती की रचना है–
(i) भूदान यज्ञ (ii) भोर का तारा (iii) सत्यार्थ प्रकाश (iv) भारत-भारती।

70. हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास है–
(i) आनन्द मठ (ii) परीक्षागुरु (iii) गबन (iv) तितली।

71. हिन्दी गद्य (खड़ीबोली) के जन्मदाता हैं–
(i) प्रतापनारायण मिश्र (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) जयशंकर प्रसाद।

72. आलोचना के क्षेत्र में सर्वाधिक उल्लेखनीय है–
(i) मिश्रबन्धु (ii) गुलाबराय (iii) सुदर्शन (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

73. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की रचना है–
(i) अशोक के फूल (ii) वनमाला (iii) चिन्तामणि (iv) विद्यासुन्दर।

74. 'भाग्यवती' उपन्यास के लेखक हैं–
(i) श्रद्धाराम फुल्लौरी (ii) प्रेमचन्द (iii) अमृतलाल नागर (iv) रामप्रसाद निरंजनी।

75. महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन-काल है–
(i) सन् 1864-1938 (ii) सन् 1862-1935 (iii) सन् 1875-1947 (iv) सन् 1854-1925

76. 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' में किस विभागाध्यक्ष के बाद रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हुए?
(i) करुणापति त्रिपाठी (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) विजयपाल सिंह।

77. काका कालेलकर का नाम किस विधा के लेखक के रूप में प्रसिद्ध है?
(i) निबन्ध (ii) संस्मरण (iii) आत्मकथा (iv) डायरी।

78. हजारीप्रसाद द्विवेदी को किस सन् में पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया?
(i) सन् 1957 (ii) सन् 1959 (iii) सन् 1963 (iv) सन् 1950

79. निम्नलिखित में से 'जीवनी' है–
(i) बसेरे से दूर (ii) अनामदास का पोथा (iii) कलम का सिपाही (iv) शाश्वती।

80. छायावादोत्तर युग का प्रारम्भ माना जाता है–
(i) 1900 ई0 से (ii) 1920 ई0 से (iii) 1938 ई0 से (iv) 1950 ई0 से।

81. 'अरे यायावर रहेगा याद' के लेखक हैं–
(i) यशपाल (ii) नगेन्द्र (iii) मुक्तिबोध (iv) अज्ञेय।

82. कौन-सी रचना हजारीप्रसाद द्विवेदी की नहीं है?
(i) अशोक के फूल (ii) हिन्दी काव्यधारा
(iii) हिन्दी साहित्य (iv) हिन्दी साहित्य की भूमिका।

83. आदिकाल की रचना नहीं है–
(i) उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण (ii) गोरा बादल की कथा (iii) राउलवेल।

84. हिन्दी कहानी एक नयी दिशा की ओर मुड़ी–
(i) सन् 1900 में (ii) सन् 1910 में (iii) सन् 1920 में (iv) सन् 1935 में।

85. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनन्तर समर्थ निबन्धकार हैं–
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) लाला श्रीनिवास (iii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iv) डॉ0 नगेन्द्र।

86. उपन्यास विधा की रचना है–
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) बाणभट्ट की आत्मकथा (iii) कलम का सिपाही (iv) पथ के साथी।

87. 'राष्ट्र का स्वरूप' के रचनाकार हैं–
(i) पूर्णसिंह (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) 'अज्ञेय'।

88. 'कर्मभूमि' रचना है–
(i) प्रेमचन्द की (ii) यशपाल की
(iii) किशोरीलाल गोस्वामी की (iv) बालकृष्ण भट्ट की।

89. 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' आत्मकथा है–
(i) सुमित्रानन्दन पंत की (ii) डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद की (iii) हरिवंशराय 'बच्चन' की (iv) 'अज्ञेय' की।

90. पं0 लल्लूलाल अध्यापक नियुक्त थे–
(i) फोर्ट विलियम कालेज में (ii) मेरठ कालेज, मेरठ में
(iii) रुड़की विश्वविद्यालय में (iv) काशी विश्वविद्यालय में।

91. 'विषस्य विषमौषधम्' निम्नलिखित में से है–
(i) कहानी (ii) उपन्यास (iii) नाटक (iv) निबन्ध।

92. 'नासिकेतोपाख्यान' के लेखक (रचनाकार) हैं–
(i) मुंशी इंशा अल्ला खाँ (ii) लल्लूलाल (iii) सदल मिश्र (iv) मुंशी सदासुखलाल।

93. 'रूपक रहस्य' के लेखक हैं–
(i) वियोगी हरि (ii) रामचन्द्र शुक्ल (iii) श्यामसुन्दर दास (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

94. द्विवेदी युग का नामकरण हुआ है–
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी के नाम पर (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी के नाम पर
(iii) जयशंकर प्रसाद के नाम पर (iv) रामकुमार वर्मा के नाम पर।

95. 'परीक्षागुरु' की रचना-विधा है–
(i) कहानी (ii) उपन्याम (iii) नाटक (iv) जीवनी।

96. निम्न में से नाटककार हैं–
(i) रामचन्द्र शुक्ल (ii) मोहन राकेश (iii) डॉ0 नगेन्द्र (iv) महादेवी वर्मा।

97. 'गिरती दीवारें' के रचनाकार हैं–
(i) उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (ii) शिवप्रसाद सिंह (iii) 'अज्ञेय' (iv) रामविलास शर्मा।

98. 'प्रजा हितैषी' समाचार-पत्र का सम्पादन किया–
(i) हजारीप्रसाद द्विवेदी ने (ii) राजा लक्ष्मण सिंह ने
(iii) 'अज्ञेय' ने (iv) शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' ने।

99. छायावादोत्तर युग के गद्य लेखक हैं–
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) माखनलाल चतुर्वेदी (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

100. सन् 1957 में 'पद्मभूषण' से अलंकृत हुए–
(i) राय कृष्णदास (ii) विद्यानिवास मिश्र (iii) 'अज्ञेय' (iv) हजारीप्रसाद द्विवेदी।

101. डॉ0 सम्पूर्णानन्द को मंगलाप्रसाद पुरस्कार प्राप्त हुआ–
(i) गणेश पर (ii) चिद्विलास पर
(iii) समाजवाद पर (iv) 'आर्यों का आदि देश' पर।

102. 'बेकन विचार-माला' अनूदित ग्रन्थ है–
(i) राहुल सांकृत्यायन का (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी का
(iii) वासुदेवशरण अग्रवाल का (iv) मोहन राकेश का।

103. 'कन्यादान' निबन्ध के लेखक हैं–
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) डॉ0 सम्पूर्णानन्द (iv) सरदार पूर्णसिंह।

104. विधा की दृष्टि से 'बोल्गा से गंगा' है–
(i) उपन्यास (ii) कहानी-संग्रह (iii) यात्रावृत्तान्त (iv) आत्मकथा।

105. अज्ञेय का 'सन्नाटा' शीर्षक लेख उनके किस निबन्ध-संग्रह में संकलित है?
(i) त्रिशंकु (ii) आत्मनेपद
(iii) सब रंग और कुछ राग (iv) लिखि कागद कोरे।

106. हिन्दी साहित्य में व्यंग्य के आधार-स्तम्भ हैं–
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
(iii) हरिशंकर परसाई (iv) रामवृक्ष बेनीपुरी।

107. खलील जिब्रान के 'दि मैड मैन' कृति का 'पगला' नाम से हिन्दी में अनुवाद किया है–
(i) राय कृष्णदास (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iii) राहुल सांकृत्यायन (iv) 'अज्ञेय'।

108. साहित्य का 'श्रेय और प्रेय' निबन्ध-संग्रह है–
(i) डॉ0 सम्पूर्णानन्द (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) श्यामसुन्दर दास।

109. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की विधा है–
(i) रेखाचित्र (ii) आत्मकथा (iii) उपन्यास (iv) निबन्ध।

110. मोहन राकेश का निबन्ध-संग्रह है–
(i) आलोक पर्व (ii) पूर्वोदय (iii) रसज्ञ रंजन (iv) बकलम खुद।

111. 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना में योगदान है–
(i) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (ii) श्यामसुन्दर दास (iii) रामनारायण मिश्र (iv) शिवकुमार सिंह।

112. अंग्रेजी के 'स्केच' का रूपान्तरण है–
(i) जीवनी (ii) भेंटवार्त्ता (iii) रेखाचित्र (iv) रिपोर्ताज।

113. 'आनन्द की खोज और पागल पथिक' का सम्बन्ध किस विधा से है?
(i) संस्मरण (ii) निबन्ध (iii) गद्य-गीत (iv) आलोचना।

114. हिन्दी की पहली कहानी माना जाता है–
(i) नमक का दरोगा (ii) उसने कहा था (iii) कफन (iv) इन्दुमती।

115. 'तुम चन्दन हम पानी' किस विधा की रचना है?
(i) नाटक (ii) संस्मरण (iii) आत्मकथा (iv) निबन्ध।

116. आधुनिक काल के प्रमुख नाटककार माने जाते हैं–
(i) मोहन राकेश (ii) लक्ष्मीनारायण मिश्र (iii) जयशंकर प्रसाद (iv) डॉ० रामकुमार वर्मा।

117. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचना है–
(i) वैदिक हिंसा हिंसा न भवति (ii) कलि कौतुक (iii) नूतन ब्रह्मचारी (iv) प्रेम मोहिनी।

118. 'चिद्विलास' के लेखक हैं–
(i) रामकुमार वर्मा (ii) डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी (iii) डॉ० सम्पूर्णानन्द (iv) मोहन राकेश।

119. सदल मिश्र की रचना है–
(i) भारत दुर्दशा (ii) नासिकेतोपाख्यान (iii) बैताल पचीसी (iv) सुख सागर।

120. 'नीड़ का निर्माण फिर' विधा है–
(i) कहानी (ii) यात्रावृत्तान्त (iii) उपन्यास (iv) आत्मकथा।

121. 'द्विवेदी युग' के लेखक हैं–
(i) अज्ञेय (ii) किशोरीलाल गोस्वामी
(iii) हरिशंकर परसाई (iv) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'।

122. 'डायरी विधा' के लेखक हैं–
(i) शमशेर बहादुर सिंह (ii) राहुल सांकृत्यायन (iii) सदल मिश्र (iv) सरदार पूर्णसिंह।

123. 'मजदूरी और प्रेम' रचना किस विधा से सम्बन्धित है?
(i) नाटक (ii) कहानी (iii) निबन्ध (iv) उपन्यास।

124. चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की प्रसिद्ध कहानी है–
(i) पंचलाइट (ii) उसने कहा था (iii) पुरस्कार (iv) आत्माराम।

125. द्विवेदी युग के लेखक हैं–
(i) नन्ददुलारे वाजपेयी (ii) हरिकृष्ण प्रेमी (iii) डॉ० नगेन्द्र (iv) सरदार पूर्णसिंह।

126. 'अशोक के फूल' निबन्ध के लेखक हैं–
(i) हजारीप्रसाद द्विवेदी (ii) राजेन्द्र यादव (iii) महादेवी वर्मा (iv) गुलाब राय।

127. प्रसिद्ध उपन्यास लेखक हैं–
(i) मोहन राकेश (ii) रामकुमार वर्मा (iii) डॉ० सम्पूर्णानन्द (iv) महावीरप्रसाद द्विवेदी।

128. 'सदाचार की तावीज' निबन्ध संग्रह के लेखक हैं–
(i) मोहन राकेश (ii) हरिशंकर परसाई (iii) जी० सुन्दर रेड्डी (iv) राहुल सांकृत्यायन।

129. पाठ्य-पुस्तक में संकलित बलिया के मेले के अवसर पर दिया गया भाषण किस शीर्षक से संग्रहीत है?
(i) भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है? (ii) महाकवि माघ का प्रभात वर्णन
(iii) भारतीय साहित्य की विशेषताएँ (iv) आचरण की सभ्यता।

130. 'मर्यादा' और 'टुडे' के सम्पादक थे–
(i) डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल (ii) हरिशंकर परसाई (iii) जैनेन्द्र कुमार (iv) डॉ० सम्पूर्णानन्द।

131. किसका वास्तविक नाम केदार पाण्डेय था?
(i) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) राहुल सांकृत्यायन (iv) मोहन राकेश।

132. राबर्ट नर्सिंग होम किस शहर में स्थित था?
(i) कानपुर (ii) इन्दौर (iii) नागपुर (iv) नयी दिल्ली।

133. 'सब रंग और कुछ राग' निबन्ध संग्रह के लेखक हैं–
(i) अज्ञेय (ii) जैनेन्द्र कुमार (iii) जी० सुन्दर रेड्डी (iv) मोहन राकेश।

134. मथुरा के पुरातत्त्व संग्रहालय के अध्यक्ष पद पर कार्य करनेवाले निबन्धकार थे–
(i) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' (ii) रामवृक्ष बेनीपुरी
(iii) सरदार पूर्णसिंह (iv) वासुदेवशरण अग्रवाल।

135. निम्नलिखित में से कौन ललित निबन्धकार माना जाता है?
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) सरदार पूर्णसिंह (iii) कुबेरनाथ राय (iv) रामचन्द्र शुक्ल।

136. हिन्दी गद्य के उत्कर्ष का सूर्योदयकाल था–
(i) छायावादी युग (ii) द्विवेदी युग (iii) छायावादोत्तर युग (iv) भारतेन्दु युग।

137. 'संस्कृत के चार अध्याय' के लेखक हैं–
(i) कन्हैयालाल मिश्र (ii) भगवतशरण उपाध्याय
(iii) वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) रामधारीसिंह 'दिनकर'।

138. उपन्यास-सम्राट माने जाते हैं–
(i) श्यामसुन्दर दास (ii) जयशंकर प्रसाद (iii) प्रेमचन्द (iv) जैनेन्द्र कुमार।

139. एकांकी में अंक होते हैं–
(i) तीन (ii) पाँच (iii) एक (iv) अनेक।

140. महावीरप्रसाद द्विवेदी की रचना है–
(i) रूपक रहस्य (ii) पवित्रता (iii) रसज्ञ रंजन (iv) भाषा की शक्ति।

141. 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक थे–
(i) बालकृष्ण भट्ट (ii) प्रतापनारायण मिश्र (iii) महावीरप्रसाद द्विवेदी (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

142. 'भारत दुर्दशा' के लेखक हैं–
(i) महावीरप्रसाद द्विवेदी (ii) राय कृष्णदास (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iv) श्यामसुन्दर दास।

143. फणीश्वरनाथ 'रेणु' की रचना है–
(i) पुरस्कार (ii) मैला आँचल (iii) गबन (iv) रसज्ञ-रञ्जन।

144. 'आखिरी चट्टान' किस विधा की रचना है–
(i) रेखाचित्र (ii) संस्मरण (iii) डायरी (iv) यात्रावृत्तान्त।

145. 'सुखसागर' के लेखक हैं–
(i) इंशा अल्ला खाँ (ii) लल्लूलाल (iii) मुंशी सदासुख लाल (iv) सदल मिश्र।

146. 'यात्रावृत्तान्त' विधा के लेखक हैं–
(i) रामकुमार वर्मा (ii) राय कृष्णदास (iii) वृन्दावनलाल वर्मा (iv) राहुल सांकृत्यायन।

147. 'गेहूँ बनाम गुलाब' के लेखक हैं–
(i) वासुदेवशरण अग्रवाल (ii) हरिशंकर परसाई (iii) रामवृक्ष बेनीपुरी (iv) जैनेन्द्र कुमार।

148. हिन्दी गद्य को नयी चाल में ढालने का श्रेय है–
(i) हिन्दी प्रदीप को (ii) हरिश्चन्द्र चन्द्रिका को (iii) सरस्वती को (iv) चाँद को।

149. वाराणसी में 'भारत कला भवन' नामक संग्रहालय की स्थापना करने वाले साहित्यकार थे–
(i) राय कृष्णदास (ii) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
(iii) डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

150. 'छायावादोत्तर' गद्य काल की रचना है–
(i) रत्नावली (ii) रानी नागफनी की कहानी (iii) विचार-विमर्श (iv) रसज्ञ-रञ्जन।

151. 'वोल्गा से गंगा' रचना की विधा है–
(i) कहानी (ii) आत्मकथा (iii) यात्रावृत्त (iv) निबन्ध संग्रह।

152. 'जीवनी' विधा में रचना है–
(i) नीड़ का निर्माण फिर (ii) आवारा मसीहा (iii) अतीत के चलचित्र (iv) चिन्तामणि।

153. 'आर्यों का आदि देश' के लेखक हैं–
(i) जी० सुन्दर रेड्डी (ii) डॉ० सम्पूर्णानन्द
(iii) राय कृष्णदास (iv) वासुदेवशरण अग्रवाल।

154. भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी किस बोली से बनी है?
(i) अवधी से (ii) ब्रजभाषा से (iii) खड़ीबोली (iv) बुन्देली से।

●●

अध्ययन-अध्यापन

प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक का प्रणयन अध्ययन-अध्यापन की नवीन पद्धति को ध्यान में रखते हुए किया गया है। हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त इण्टरमीडिएट स्तर पर छात्र किशोरावस्था में पदार्पण कर चुके होते हैं। किशोर की मानसिक दुनिया बहुरंगी होती है। उसमें आदर्शवादिता एवं कल्पनाशीलता भी प्रचुर मात्रा में होती है। अतः प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में पाठों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि छात्र की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में विषय-वस्तु सहायक हो। पुस्तक में छात्रों की केवल रुचियों का ही ध्यान नहीं रखा गया है, वरन् उनकी रुचि के परिष्कार का भी लक्ष्य सामने रखा गया है।

प्रस्तुत संकलन में इस बात का प्रयास किया गया है कि गद्य के ऐतिहासिक विकास, उसकी विभिन्न शैलियों तथा उसकी विविध विधाओं से छात्र परिचित हो जायँ। यह कार्य गहन अध्ययन द्वारा संभव है। अतः इस पुस्तक को द्रुत पठन की पुस्तक की भाँति न पढ़ाकर विशद् एवं गहन अध्ययन की पुस्तक की भाँति पढ़ाया जाय, क्योंकि प्रत्येक पंक्ति अर्थ-बोध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। अर्थ-बोध हमारे पढ़ाने का प्रथम मुख्य लक्ष्य होना चाहिए।

अर्थ-बोध छात्रों के पूर्व ज्ञान, शब्द-भण्डार एवं पढ़ने की गति पर प्रायः आधारित होता है। अर्थ-बोध की योग्यता का विकास करने के लिए कक्षा में छात्रों को जिन बातों का अभ्यास कराना आवश्यक है, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

1. सारांश बताना।
2. अनुच्छेदों का शीर्षक देना।
3. सन्दर्भ द्वारा शब्दों के अर्थ का अनुमान कर लेना।
4. केन्द्रीय भाव ग्रहण कर लेना।
5. पठित सामग्री का मूल्यांकन करना।
6. शैली की विविधता को समझना।
7. वाक्यों में शब्दों के क्रम के महत्त्व को पहचानना।
8. लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ को समझना।
9. सुन्दर वाक्यों को कण्ठस्थ कर लेना।

अर्थ-बोध के अतिरिक्त कक्षा में पढ़ाने का दूसरा उद्देश्य शब्द-भण्डार की वृद्धि है। पढ़ाते समय पर्यायवाची, विलोम, अनेकार्थवाची एवं समानार्थी शब्दों का ज्ञान कराना आवश्यक है। शब्द-रचना से भी छात्रों को परिचित होना चाहिए। शब्द-भण्डार में वृद्धि की दृष्टि से कोश का प्रयोग आवश्यक है। इन क्रियाओं का अभ्यास कक्षा में कराना हितकर होगा।

प्रस्तुत संकलन के पाठों को पढ़ाने का तीसरा प्रमुख उद्देश्य पठन-गति का विकास करना है। इस स्तर पर सस्वर पठन की अपेक्षा मौन पठन का अधिक महत्त्व है, किन्तु दोनों प्रकार के वाचनों में गति के विकास का ध्यान रखना लाभप्रद होगा। यह गति अभ्यास पर निर्भर है, अतः कक्षा में पाठनाभ्यास आवश्यक है।

इण्टरमीडिएट के छात्रों को आलोचनात्मक चिन्तन की ओर भी उन्मुख होना है, अतः छात्रों में आलोचनात्मक दृष्टिकोण

का विकास करना अध्यापक का उद्देश्य होना चाहिए। निबंधों में आये हुए तथ्यों की तुलना करके उनकी तर्कसंगतता देखनी चाहिए। कारण-कार्य सम्बन्धों का विश्लेषण होना चाहिए। छात्रों को इस योग्य होना चाहिए कि वे पाठों को पढ़कर उनकी आलोचना स्वस्थ ढंग से कर सकें।

आलोचनात्मक चिन्तन के साथ-साथ छात्रों में रचनात्मक प्रवृत्ति के विकास का भी ध्यान रखना श्रेयस्कर होगा। छात्र यह देखें कि एक ही बात को विभिन्न शैलियों में किस प्रकार कहा जा सकता है। इस विशेषता को लक्षित करके उन्हें अपने स्वभाव एवं क्षमता के अनुकूल उपयुक्त शैली में भावाभिव्यक्ति का सफल प्रयत्न करना चाहिए, तभी वे आगे चलकर स्वयं भी साहित्य की श्रीवृद्धि करने में समर्थ हो सकेंगे। पढ़ाते समय अध्यापक को मनोविज्ञान के अधुनातन सिद्धान्तों का उपयोग करना चाहिए। अध्यापक को विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करते समय यह देखना चाहिए कि वे विभिन्न युक्तियाँ साहित्यिक विधाओं के भी अनुकूल हों और छात्रों की मानसिक योग्यता, अभिरुचि एवं क्षमता के भी।

निबंधों को पढ़ाने में निबंध की विषय-वस्तु, प्रस्तुति एवं प्रयोजन पर दृष्टि रहनी चाहिए। निबंधों के विषय अनेक प्रकार के हैं। इनसे छात्रों का परिचय होना ही है। प्रस्तुतीकरण की शैली भिन्न-भिन्न है। शैली की भिन्नता प्रयोजन तथा विषय की भिन्नता के कारण है। छात्रों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करना है कि लेखक ने अपने आशय या प्रयोजन को व्यक्त करने के लिए किस प्रकार की शैली का चुनाव किया है और इस प्रकार की शैली किस तरह के विषयों के लिए उपयुक्त होती है।

गद्यकार का कौशल उसकी अभिव्यंजना-शैली में देखा जा सकता है। व्यंग्यकार प्रायः उर्दू शब्दावली अथवा तद्भव शब्दावली का प्रयोग करता है, जबकि गंभीर विचारों की अभिव्यक्ति करनेवाला निबंधकार प्रायः तत्सम पदावली की ओर उन्मुख हो जाता है। टकसाली शब्दों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग की ओर झुकाव कुछ गद्यकारों में विशेष रूप से दिखायी पड़ता है। छात्रों को इस योग्य होना चाहिए कि वे शब्दों के परे जाकर व्यंग्यार्थ की अनुभूति कर सकें। संकेतों को अच्छी तरह समझाना और लेखक के आशय को ग्रहण करना कठिन होता है और इसी कठिनाई पर विजय पाने के लिए कक्षा में पठन-पाठन की योजना बनायी जाती है।

गद्य-शिक्षण के समय अध्यापक को पाठ्य-बिन्दुओं का निश्चय पहले से ही कर लेना चाहिए। किन तथ्यों पर अधिक बल देना है और कौन-से स्थल अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, किन वाक्यों की व्याख्या करना है, किन सन्दर्भों को देना है, इसका निश्चय प्रत्येक पाठ के शिक्षण के पूर्व ही कर लेना चाहिए। कक्षा में शिक्षण का आरम्भ चाहे जिस विधि से किया जाय, किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि छात्र प्रारम्भ में ही लेखक से कुछ परिचित हो जायँ और नवीन विषयवस्तु को ग्रहण करने की मानसिक स्थिति में वे आ जायँ। अनुभवों एवं पूर्व अर्जित ज्ञान का भरपूर उपयोग किया जाय। निबंध पाठों के अध्ययन-अध्यापन के समय केवल परीक्षा को ही दृष्टि में रखना गद्य-शिक्षण का उद्देश्य नहीं है। परीक्षा को गौण समझा जाना चाहिए और निबंधों की विशेषताओं से परिचय प्राप्त करके अपनी शैली में परिमार्जन करने को प्रमुखता दी जानी चाहिए।

गद्य-शिक्षण में प्रत्येक पाठ के शिक्षण की विधि एक ही यांत्रिक ढंग से नहीं होनी चाहिए। जिस विधि से समीक्षात्मक पाठ पढ़ाया जायेगा, उसी विधि से भावात्मक निबंध नहीं पढ़ाया जा सकता। रेखाचित्र, संस्मरण एवं रिपोर्ताज के पढ़ाने का ढंग अलग होगा। किसी निबंध को पढ़ाने में तथ्यों एवं घटनाओं की ओर छात्र का ध्यान आकृष्ट किया जायेगा तो किसी अन्य में मनोभावों एवं शैलीगत विशेषताओं को प्रमुखता दी जायेगी। पाठ को पढ़ाने में मौन पाठ का सर्वाधिक महत्त्व होगा तो किसी अन्य में सस्वर पठन का भी उपयोग किया जा सकता है।

वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाग लेने के अवसर पर, विद्यालयीय पत्रिका हेतु लेख लिखने अथवा किसी आयोजन पर भाषण देने के अवसर पर किसी गद्यकार की शैली के अनुकरण के लिए छात्रों को प्रेरित किया जा सकता है।

●●

1 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

आधुनिक हिन्दी साहित्य के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इतिहास-प्रसिद्ध सेठ अमीचन्द के प्रपौत्र गोपालचन्द्र 'गिरिधरदास' के ज्येष्ठ पुत्र थे। इनका जन्म 9 सितम्बर, सन् 1850 ई० को काशी में हुआ था। मात्र पाँच वर्ष की अवस्था में माता पार्वती देवी तथा दस वर्ष की अवस्था में पिता गोपालचन्द्र के सुख से यह वंचित हो गये। विमाता मोहन बीबी का इन पर विशेष प्रेम न होने के कारण इनके पालन-पोषण का भार कालीकदमा दाई और तिलकधारी नौकर पर था। पिता की असामयिक मृत्यु के बाद क्वीन्स कालेज, वाराणसी में तीन-चार वर्ष तक अध्ययन किया। उस समय काशी के रईसों में केवल राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' ही अंग्रेजी पढ़े-लिखे थे। इसलिए भारतेन्दु जी अंग्रेजी पढ़ने के लिए उनके पास जाया करते थे और उन्हें गुरु-तुल्य मानते थे। कालेज छोड़ने के बाद इन्होंने स्वाध्याय द्वारा हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी के अतिरिक्त मराठी, गुजराती, बंगला, मारवाड़ी, उर्दू, पंजाबी आदि भारतीय भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। तेरह वर्ष की अल्पावस्था में इनका विवाह काशी के रईस लाला गुलाब राय की पुत्री मन्ना देवी से हुआ। इनके दो पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्रों की बाल्यावस्था में ही मृत्यु हो गयी थी, जबकि पुत्री विद्यावती सुशिक्षिता थी। भारतेन्दु जी ने अनेक स्थानों की यात्राएँ कीं। ऋण लेने की आदत भी इन पर पड़ गयी। ऋणग्रस्तता, कौटुम्बिक तथा अन्य सांसारिक चिन्ताओं सहित क्षय रोग से पीड़ित भारतेन्दु जी का निधन 6 जनवरी, 1885 ई० को चौंतीस वर्ष चार महीने की अवस्था में हो गया।

भारतेन्दु जी ने हिन्दी-साहित्य की जो समृद्धि की वह सामान्य व्यक्ति के लिए असंभव है। ये कवि, नाटककार, निबंध-लेखक, सम्पादक, समाज-सुधारक सभी कुछ थे। हिन्दी गद्य के तो ये जन्मदाता समझे जाते हैं। काव्य-रचना भी ये बाल्यावस्था से ही करने लगे थे। इनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर सन् 1880 ई० में पण्डित रघुनाथ, पं० सुधाकर द्विवेदी, पं० रामेश्वरदत्त

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—9 सितम्बर, सन् 1850 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **पिता**—गोपालचन्द्र 'गिरिधरदास'।
- **माता**—पार्वती देवी।
- **शिक्षा**—अंग्रेजी, बांग्ला, गुजराती आदि का स्वाध्ययन।
- **भाषा**—ब्रजभाषा, खड़ीबोली।
- **शैली**—मुक्तक।
- भारतेन्दु युग के प्रवर्तक।
- **संपादन**—कवि-वचन-सुधा, हरिश्चन्द्र मैगजीन, हरिश्चन्द्र चंद्रिका।
- **लेखन-विधा**—कविता, नाटक, एकांकी, निबन्ध, उपन्यास, पत्रकारिता।
- **प्रमुख रचनाएँ**—नीलदेवी, प्रेम-जोगिनी, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, कर्पूर मंजरी, सुलोचना।
- **मृत्यु**—6 जनवरी, सन् 1885 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी-साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका भारतेन्दु युग में।

व्यास आदि के प्रस्तावानुसार हरिश्चन्द्र को 'भारतेन्दु' की पदवी से विभूषित किया गया और तभी से इनके नाम के साथ भारतेन्दु शब्द जुड़ गया। इन्होंने हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन को गति देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन एवं सम्पादन किया। इन्होंने सन् 1868 ई0 में 'कवि वचन सुधा' और सन् 1873 ई0 में 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का सम्पादन किया था। 8 अंकों के बाद 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का नाम 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' हो गया। हिन्दी-गद्य को नयी चाल में ढालने का श्रेय 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' को ही है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। साहित्य के क्षेत्र में इनके योगदान के कारण ही इन्हें 'आधुनिक हिन्दी-गद्य साहित्य का जनक', 'युग निर्माता साहित्यकार' अथवा 'आधुनिक हिन्दी-साहित्य का युग प्रवर्तक' कहा जाता है। भारतीय साहित्य में इन्हें युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, युग जागरण के दूत और एक युग-पुरुष के रूप में जाना जाता है। इनके हिन्दी साहित्य में बहुमूल्य योगदान के कारण ही भारतीय साहित्यकारों ने इन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि से विभूषित किया है। हिन्दी साहित्य में इनके योगदान के फलस्वरूप 1868 ई॰ से 1900 ई॰ तक की अवधि को 'भारतेन्दु युग' के नाम से जाना जाता है।

भारतेन्दु जी की कृतियाँ अनेक विधाओं में उल्लेखनीय हैं। नाटक के क्षेत्र में इनकी देन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

भारतेन्दु ने इतिहास, पुराण, धर्म, भाषा, संगीत आदि अनेक विषयों पर निबंध लिखे हैं। इन्होंने जीवनियाँ और यात्रा-वृत्तान्त भी लिखे हैं। भारतेन्दु जी की प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं—

नाटक–भारतेन्दु जी ने मौलिक तथा अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों की रचना की है, जिनका विवरण इस प्रकार है—

(क) मौलिक नाटक : 'नील देवी', 'सत्य हरिश्चन्द्र', 'श्री चन्द्रावली', 'भारत-दुर्दशा', 'अंधेरनगरी', 'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति', 'विषस्य विषमौषधम्', 'सती-प्रताप', 'प्रेम जोगिनी'।

(ख) अनूदित नाटक : 'रत्नावली', 'मुद्राराक्षस', 'भारत-जननी', 'विद्या सुंदर', 'पाखण्ड-विडम्बन', 'दुर्लभ-बन्धु', 'कर्पूरमंजरी', 'धनंजय-विजय'।

निबन्ध-संग्रह : 'परिहास-वंचक', 'सुलोचना', 'मदालसा', 'लीलावती', 'दिल्ली-दरबार-दर्पण'।

इतिहास : 'महाराष्ट्र देश का इतिहास', 'अग्रवालों की उत्पत्ति', 'कश्मीर-कुसुम'।

यात्रा-वृत्तान्त : 'लखनऊ की यात्रा', 'सरयू पार की यात्रा'।

जीवनियाँ : 'जयदेव', 'सूरदास की जीवनी', 'महात्मा मुहम्मद'।

शैली की दृष्टि से भारतेन्दु ने वर्णनात्मक, विचारात्मक, विवरणात्मक और भावात्मक सभी शैलियों में निबंध-रचना की है। इनके द्वारा लिखित 'दिल्ली दरबार दर्पण' वर्णनात्मक शैली का श्रेष्ठ निबन्ध है। इनके यात्रा-वृत्तान्त (सरयूपार की यात्रा, लखनऊ की यात्रा आदि) विवरणात्मक शैली में लिखे गये हैं। 'वैष्णवता और भारतवर्ष' तथा 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' जैसे निबंध विचारात्मक हैं। भारतेन्दु की भावात्मक शैली का रूप इनके द्वारा लिखित जीवनियाँ (सूरदास, जयदेव, महात्मा मुहम्मद आदि) तथा ऐतिहासिक निबंधों में बीच-बीच में मिलता है। इसके अतिरिक्त इनके निबंधों में शोध-शैली, भाषण-शैली, स्तोत्र-शैली, प्रदर्शन-शैली, कथा-शैली आदि के रूप भी मिलते हैं। इनकी भाषा व्यावहारिक, बोलचाल के निकट, प्रवाहमयी और जीवंत हैं। इन्होंने काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग किया, परन्तु गद्य के लिए खड़ीबोली को अपनाया। भाषा को सजीव बनाने के लिए इन्होंने लोकोक्ति और मुहावरों का सटीक प्रयोग किया।

पाठ्य-पुस्तक में संकलित **'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?'** निबंध दिसम्बर सन् 1884 ई0 में बलिया के ददरी मेले के अवसर पर आर्य देशोपकारणी सभा में भाषण देने के लिए लिखा गया था। इसमें लेखक ने कुरीतियों और अंधविश्वासों को त्यागकर अच्छी-से-अच्छी शिक्षा प्राप्त करने, उद्योग-धंधों को विकसित करने, सहयोग एवं एकता पर बल देने तथा सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दी है।

●●●

भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?

आज बड़े आनन्द का दिन है कि छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को एक बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाय वही बहुत है। हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेण्ड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे। या हिन्दुस्तानी राजेमहाराजे, नवाब, रईस या हाकिम। राजे-महाराजों को अपनी पूजा, भोजन, झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सरकारी काम घेरे रहता है, कुछ बाल घुड़दौड़ थियेटर में समय लगा। कुछ समय बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गन्दे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवें। बस वही मसल रही। "तुम्हें गैरों से कब फुरसत हम अपने गम से कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली।"

पहले भी जब आर्य लोग हिन्दुस्तान में आकर बसे थे राजा और ब्राह्मणों के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावें और अब भी ये लोग चाहें तो हिन्दुस्तान प्रतिदिन क्या प्रतिछिन बढ़े। पर इन्हीं लोगों को निकम्मेपन ने घेर रखा है।

हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि इनके पुरखों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नालियों से जो ताराग्रह आदि बेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीन बनी है उनसे उन ग्रहों को बेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या के और जनता की उन्नति से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंगरेज फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमी पहले छू लें। उस समय हिन्दू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको औरों को जाने दीजिए जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देख करके भी लाज नहीं आती। यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायेगा फिर कोटि उपाय किये भी आगे न बढ़ सकेगा। इस लूट में इस बरसात में भी जिसके सिर पर कम्बख्ती का छाता और आँखों में मूर्खता की पट्टी बँधी रहे उन पर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रों ने कहा था कि तुम इस विषय पर कुछ कहो कि हिन्दुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है।

भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ? भागवत में एक श्लोक है, *'नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारं मयाऽनुकूलेन नभः स्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा।''* भगवान् कहते हैं कि पहले तो मनुष्य-जन्म ही बड़ा दुर्लभ है सो मिला और उस पर गुरु की कृपा और उस पर मेरी अनुकूलता इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार सागर के पार न जाय उसको आत्महत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिन्दुस्तान की है।

बहुत लोग यह कहेंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती है बाबा हम क्या उन्नति करें। तुम्हारा पेट भरा है तुमको दून की सूझती है। यह कहना उनकी बहुत भूल है। इंग्लैण्ड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा दूसरे हाथ से उन्नति के काँटों को साफ किया, क्या इंग्लैण्ड में किसान खेतवाले, गाड़ीवाले, गाड़ीवान, मजदूर, कोचवान आदि नहीं हैं? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किन्तु वे लोग जहाँ खेत जोते-बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते हैं कि ऐसी कौन नयी कल या मसाला बनावें जिसमें इस खेत में आगे से दून अन्न उपजे। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पियेगा व गप्प

करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। 'वहाँ के लोग गप्प में ही देश के प्रबन्ध छाँटते हैं।' सिद्धान्त यह कि वहाँ के लोगों का यह सिद्धान्त है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाये। उसके बदले यहाँ के लोगों को जितना निकम्मापन हो उतना ही वह बड़ा अमीर समझा जाता है, आलस यहाँ इतनी बढ़ गयी है कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला—"अजगर करे न चाकरी पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गये सबके दाता राम।" चारों ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है, रोजगार कहीं कुछ भी नहीं। चारों ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि दरिद्र कुटुम्बी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाये जाती है। वही दशा हिन्दुस्तान की है। मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन-दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन-दिन कमती होता जाता है। सो अब बिना ऐसा उपाय किये काम नहीं चलेगा कि रुपया भी बढ़े। और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा। भाइयों राजा-महाराजों का मुँह मत देखो, मत यह आशा रखो कि पंडित जी कथा में ऐसा उपाय बतलावेंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े। तुम आप कमर कसो, आलस छोड़ो, कब तक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे। दौड़ो इस घुड़दौड़ में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं। 'फिर कब राम जनक-पुर ऐहैं' अबकी पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे।

अब भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं रहो। और वह सुधारना ऐसा भी होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चालचलन में, शरीर में, बल में, समाज में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरुष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति, सब देश में उन्नति करो। सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के कंटक हों। चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहें या नंगा कहें, कृस्तान कहें या भ्रष्ट कहें, तुम केवल अपने देश की दीन दशा को देखो और उनकी बात मत सुनो। *"अपमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा तु पृष्ठतः स्वकार्यं साधयेत् धीमान् कार्यध्वंसो हि मूर्खता।"* जो लोग अपने को देश हितैषी लगाते हों वह अपने सुख को होम करके अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कसके उठो। देखा-देखी थोड़े दिन में सब हो जायेगा। अपनी खराबियों के मूल कारणों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में, कोई देश की चाल की आड़ में, कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चोरों को वहाँ से पकड़कर लाओ। उनको बांधकर कैद करो। इस समय जो जो बातें तुम्हारी उन्नति पथ की काँटा हों उनकी जड़ खोदकर फेंक दो।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है? किमको अच्छा समझें? क्या लें क्या छोड़ें? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता से मेरे ध्यान में आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो—

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंगरेजों की धर्मनीति राजनीति परस्पर मिली हैं इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो। तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति समाज-गठन वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यहीं तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है। जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है? जिसमें महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हैं तो पहले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़ाकर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने माल भर में एक बेर तो सफाई हो जाये। होली इसी हेतु है कि वसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि जलने से स्वच्छ हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है। ऐसे सब पर्व सब तीर्थव्रत आदि में कोई हिकमत है। उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने यह धर्म क्यों मान लिए थे इसका लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयों, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरण कमल का भजन है।

ये सब तो ममाज धर्म हैं। जो देश काल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूमरी खराबी यह हुई है कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नये-नये धर्म बनाकर शास्त्रों में धर दिये। बस सभी तिथि व्रत और मभी स्थान तीर्थ हो गये। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनायी और उनमें जो देश और काल के अनुकूल और उपकारी हों उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी जाती हैं किन्तु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन में ही ब्याह करके उनका बल, बीरज, आयुष्य मब मत घटाइए। आप उनके माँ बाप हैं या शत्रु हैं। वीर्य उनके शरीर में पुष्ट होने दीजिए। नोन तेल लकड़ी की फिक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए। तब उनका पैर काठ में डालिए। कुलीन प्रथा बहु विवाह आदि को दूर कीजिए। लड़कियों को भी पढ़ाइये किन्तु इस चाल से नहीं जैसे आजकल पढ़ायी जाती हैं, जिससे उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुल धर्म सीखें, पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज

में शिक्षा दें। नाना प्रकार के मत के लोग आपस में बैर छोड़ दें, यह समय इन झगड़ों का नहीं, हिन्दू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए, जाति में कोई चाहे ऊँचा हो, चाहे नीचा हो सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसे वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों का तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपम में मिलिए।

अपने लड़कों को अच्छी से अच्छी तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोड़ो। लड़कों को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मेहनत करने की आदत दिलाओ। बंगाली, मरट्ठा, पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मण, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारे यहाँ बढ़े तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहे वह करो। देखो जैसे हजार धारा होकर गंगा समुद्र में मिली है वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इंग्लैण्ड, फरासीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती है। दियासलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है। जरा अपने ही को देखो। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बनी है। जिस लंकलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंग्लैण्ड का है। फरासीस की बनी कंघी से तुम सिर झारते हो। और जर्मनी की बनी चरखी की बत्ती तुम्हारे सामने जल रही है। यह तो वही मसल हुई एक बेफिकरे मंगनी का कपड़ा पहनकर किसी महफिल में गये। कपड़े को पहचान कर एक ने कहा अजी अंगा तो फलाने का है। दूसरा बोला अजी टोपी भी फलाने की है तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि घर की तो मूंछैं ही मूंछ हैं। हाय, अफसोस, तुम ऐसे हो गये कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार से उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए–

(क) हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेण्ड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजन सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साधि रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसे याद आता है। सो बल कौन याद दिलावे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने हिन्दुस्तानियों को किसके सदृश बताया है?
(iv) 'का चुप साधि रहा बलवाना' इस कथन से लेखक का क्या आशय है?
(v) लेखक ने हनुमान जी को किसका प्रतीक बताया है?

(ख) हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जबकि इनके पुरखों के पाम कोई भी सामान नहीं था, तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नालियों से जो ताराग्रह आदि बेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपये के लागत की विलायत में जो दूरबीन बनी है उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज इस काल में हम लोगों को अंगरेजी विद्या के और जनता की उन्नति से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की नाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि उन्नति की मानो घुड़दौड़ हो रही है। अमेरिकन अंगरेज फरासीस आदि तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं। सबके जी में यही है कि पाला हमी पहले छू लें। उस समय हिन्दू काठियावाड़ी खाली खड़े-खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक के अनुसार प्रतिस्पर्द्धा में भारतवासियों की असफलता का क्या कारण है?

(iv) प्राचीन काल में साधन के अभाव में भारतीयों ने किसकी खोज की?
(v) आधुनिक समय में अपनी उन्नति के लिए कौन प्रयासरत है?

(ग) सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबसे पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंगरेजों की धर्मनीति राजनीति परस्पर मिली हैं इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो। तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति समाज-गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यहीं तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्थान क्यों बनाया गया है। जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस-दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख-सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलतीं यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है? जिसमें महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हैं तो पहले पानी सिर पर चढ़ाकर तब पैर पर डालने का विधान क्यों है? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इस हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाये। होली इसी हेतु है कि वसंत की बिगड़ी हवा स्थान-स्थान पर अग्नि जलने से स्वच्छ हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने सभी उन्नतियों का मूल किसे बताया है?
(iv) लेखक ने अंग्रेजों की उन्नति का क्या कारण बताया है?
(v) 'यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है' इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।

(घ) ये सब तो समाज धर्म हैं। जो देश काल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई है कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नये-नये धर्म बनाकर शास्त्रों में धर दिये। बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गये। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनायी और उनमें जो देश और काल के अनुकूल और उपकारी हों उनको ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी जाती हैं किन्तु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान है उनको चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन में ही ब्याह करके उनका बल, बीरज, आयुष्य सब मत घटाइए।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) 'सामाजिक धर्म' किसे कहा गया है?
(iv) लेखक किस बात को ग्रहण करने को कहता है?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में किन सामाजिक कुरीतियों को दूर करने को कहा गया है?

(ङ) हाय, अफसोस, तुम ऐसे हो गये कि अपने निज की काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार से उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने किस बात पर अफसोस प्रकट किया है?
(iv) लेखक ने अपने देशवासियों को किसकी उन्नति पर बल दिया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने किसका भरोसा न करने को कहा है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन-परिचय बताते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का साहित्यिक परिचय दीजिए।

3. निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का परिचय दीजिए–
   (i) जीवन-परिचय (ii) प्रमुख रचनाएँ।
4. 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) उन्नति की घुड़दौड़ हो रही है।
   (ख) सब उन्नतियों का मूल धर्म है।
   (ग) उसने एक हाथ से अपना पेट भरा दूसरे हाथ से उन्नति के काँटों को साफ किया।
   (घ) हम लोग निरी चुंगी के कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं।
   (ङ) परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत करो।
   (च) अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।
   (छ) हमारे हिन्दुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं।
   (ज) यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।
   (झ) दरिद्र कुटुम्बी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाये जाती है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. देश की आत्मनिर्भरता के लिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने क्या उपाय बताये हैं?
2. भारतेन्दु को हिन्दी के आधुनिक काल का जनक क्यों कहा जाता है?
3. ''यही तिहवार ही तुम्हारी म्युनिसिपालिटी है।'' भारतेन्दु के इस कथन का क्या अभिप्राय है?
4. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के निबन्ध 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' पर प्रकाश डालिए।
5. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भारतवर्ष की उन्नति में किन-किन बातों को बाधक माना है?
6. भारतेन्दु ने भारतीयों को राष्ट्रोन्नति के लिए क्या-क्या सुझाव दिये?
7. भारतेन्दु की दृष्टि में इंग्लैण्ड की उन्नति का मूल कारण क्या है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

2 आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

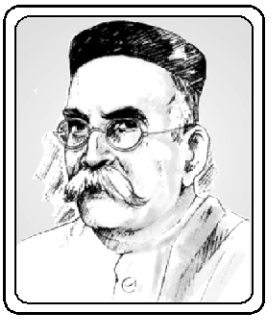

हिन्दी गद्य साहित्य के युग-विधायक महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म 5 मई, सन् 1864 ई0 में रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव में हुआ था। कहा जाता है कि इनके पिता रामसहाय द्विवेदी को महावीर का इष्ट था, इसीलिए इन्होंने पुत्र का नाम महावीरसहाय रखा। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। पाठशाला के प्रधानाध्यापक ने भूलवश इनका नाम महावीरप्रसाद लिख दिया था। यह भूल हिन्दी साहित्य में स्थायी बन गयी। तेरह वर्ष की अवस्था में अंग्रेजी पढ़ने के लिए इन्होंने रायबरेली के जिला स्कूल में प्रवेश लिया। यहाँ संस्कृत के अभाव में इनको वैकल्पिक विषय फारसी लेना पड़ा। यहाँ एक वर्ष व्यतीत करने के बाद कुछ दिनों तक उन्नाव जिले के रंजीत पुरवा स्कूल में और कुछ दिनों तक फतेहपुर में पढ़ने के पश्चात् ये पिता के पास बम्बई (मुम्बई) चले गये। वहाँ इन्होंने संस्कृत, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी का अभ्यास किया। इनकी उत्कट ज्ञान-पिपासा कभी तृप्त न हुई, किन्तु जीविका के लिए इन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। रेलवे में विभिन्न पदों पर कार्य करने के बाद झाँसी में डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिण्टेण्डेण्ट के कार्यालय में मुख्य लिपिक हो गये। पाँच वर्ष बाद उच्चाधिकारी से खिन्न होकर इन्होंने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इनकी साहित्य साधना का क्रम सरकारी नौकरी के नीरस वातावरण में भी चल रहा था और इस अवधि में इनके संस्कृत ग्रन्थों के कई अनुवाद और कुछ आलोचनाएँ प्रकाश में आ चुकी थीं। सन् 1903 ई0 में द्विवेदीजी ने 'सरस्वती' पत्रिका का सम्पादन स्वीकार किया। 1920 ई0 तक यह गुरुतर दायित्व इन्होंने निष्ठापूर्वक निभाया। 'सरस्वती' से अलग होने पर इनके जीवन के अन्तिम अठारह वर्ष गाँव के नीरस वातावरण में बड़ी कठिनाई से व्यतीत हुए। 21 दिसम्बर सन् 1938 ई0 को रायबरेली में हिन्दी के इस यशस्वी साहित्यकार का स्वर्गवास हो गया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—5 मई, सन् 1864 ई0।
- **जन्म-स्थान**—दौलतपुर (रायबरेली), उ0 प्र0।
- **पिता**—रामसहाय द्विवेदी।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—घर पर संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, बांग्ला भाषाओं का स्वाध्याय।
- **लेखन विधा**—निबन्ध, नाटक, काव्य।
- **भाषा**—अत्यन्त प्रभावशाली, संस्कृतमयी और साहित्यिक हिन्दी।
- **शैली**—आलोचनात्मक एवं गवेषणात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—हिन्दी-नवरत्न, मेघदूत, शिक्षा, सरस्वती, कुमारसंभव, रघुवंश, हिन्दी महाभारत आदि।
- **उपाधि**—काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से इन्हें सम्मानित किया।
- **सम्पादन**—'सरस्वती' पत्रिका।
- **मृत्यु**—21 दिसम्बर, सन् 1938 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—द्विवेदी युग के प्रवर्तक तथा समालोचना के सूत्रधार।

हिन्दी साहित्य में द्विवेदीजी का मूल्यांकन तत्कालीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में किया जा सकता है। वह समय हिन्दी के कलात्मक विकास का नहीं, हिन्दी के अभावों की पूर्ति का था। द्विवेदी जी ने ज्ञान के विविध क्षेत्रों, इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, पुरातत्त्व, चिकित्सा, राजनीति, जीवनी आदि से सामग्री लेकर हिन्दी के अभावों की पूर्ति की। हिन्दी गद्य को माँजने-सँवारने और परिष्कृत करने में आजीवन संलग्न रहे। इन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'साहित्य वाचस्पति' एवं नागरी प्रचारिणी सभा ने 'आचार्य' की उपाधि से सम्मानित किया था। उस समय टीका-टिप्पणी करके सही मार्ग का निर्देशन देनेवाला कोई न था। इन्होंने इस अभाव को दूर किया तथा भाषा के स्वरूप-संगठन, वाक्य-विन्यास, विराम-चिह्नों के प्रयोग तथा व्याकरण की शुद्धता पर विशेष बल दिया। लेखकों की अशुद्धियों को रेखांकित किया। स्वयं लिखकर तथा दूसरों से लिखवाकर इन्होंने हिन्दी गद्य को पुष्ट और परिमार्जित किया। हिन्दी गद्य के विकास में इनका ऐतिहासिक महत्त्व है।

द्विवेदीजी ने 50 से अधिक ग्रन्थों तथा सैकड़ों निबन्धों की रचना की थी। ये उच्चकोटि के अनुवादक भी थे। इन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में अनुवाद किया है। द्विवेदी जी की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं–

निबन्ध–इनके सर्वाधिक निबन्ध 'सरस्वती' में तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं एवं निबन्ध संग्रहों के रूप में प्रकाशित हुए हैं।

काव्य संग्रह–'काव्य-मंजूषा'।

आलोचना–'हिन्दी नवरत्न', 'नाट्यशास्त्र', 'रसज्ञ-रंजन', 'साहित्य-सीकर', 'विचार-विमर्श', 'वाग्विलास', 'साहित्य-संदर्भ', 'कालिदास और उनकी कविता', 'कालिदास की निरंकुशता' आदि।

अनूदित–'हिन्दी महाभारत', 'किरातार्जुनीय', 'रघुवंश', 'विनय-विनोद', 'गंगा लहरी', 'कुमारसंभव', 'विचार-रत्नावली', 'स्वाधीनता', 'शिक्षा', 'बेकन-विचारमाला', 'मेघदूत' आदि।

संपादन–'सरस्वती' मासिक पत्रिका।

अन्य रचनाएँ–'अद्भुत आलाप', 'संकलन', 'हिन्दी भाषा की उत्पत्ति', 'अतीत-स्मृति' आदि।

विविध रचनाएँ–'जल-चिकित्सा', 'सम्पत्तिशास्त्र', 'वक्तृत्व-कला' आदि।

द्विवेदीजी की भाषा अत्यन्त परिष्कृत, परिमार्जित एवं व्याकरण-सम्मत है। उसमें पर्याप्त गति तथा प्रवाह है। इन्होंने हिन्दी के शब्द-भण्डार की श्रीवृद्धि में अप्रतिम सहयोग दिया। इनकी भाषा में कहावतों, मुहावरों, सूक्तियों आदि का प्रयोग भी मिलता है। इन्होंने अपने निबंधों में परिचयात्मक शैली, आलोचनात्मक शैली, गवेषणात्मक शैली तथा आत्म-कथात्मक शैली का प्रयोग किया है। कठिन से कठिन विषय को बोधगम्य रूप में प्रस्तुत करना इनकी शैली की सबसे बड़ी विशेषता है। शब्दों के प्रयोग में इनको रूढ़िवादी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि आवश्यकतानुसार तत्सम शब्दों के अतिरिक्त अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का भी इन्होंने व्यवहार किया है।

'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबंध में संस्कृत के महाकवि माघ के प्रभात-वर्णन सम्बन्धी हृदयस्पर्शी स्थलों को निबंधकार ने हमारे सामने रखा है। उसने बहुत ही कलात्मक ढंग से यह दिखलाया है कि किस तरह सूर्य और चन्द्रमा, नक्षत्र एवं दिग्वधुएँ अपनी-अपनी क्रीड़ाओं में तल्लीन हैं। सूर्य की रश्मियाँ अन्धकार को नष्ट कर जीवन और जगत् को प्रकाश से परिपूर्ण कर देती हैं। रसिक चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से रजनीगंधा को प्रमुदित कर देता है। सूर्य और चन्द्रमा समय-समय पर दिग्वधुओं से कैसे प्रणय-विवेदन करते हुए एक दूसरे के प्रति प्रतिद्वन्द्विता के भाव से भर उठते हैं, कैसे प्रवासी सूर्य का स्थान चन्द्रमा लेकर दिग्वधुओं से हास-परिहास करते हुए सूर्य के कोप का भाजन बन उसके द्वारा परास्त किया जाता है—इन सबका बड़ा मनोहारी चित्रण इस निबंध में किया गया है।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी-साहित्य के युगप्रवर्तक साहित्यकारों में शामिल हैं। इन्हें शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली का वास्तविक सर्जक माना जाता है। इसीलिए 1900 ई॰ से 1922 ई॰ तक के समय को हिन्दी-साहित्य के इतिहास में 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है।

●●●

महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

रात अब बहुत ही थोड़ी रह गयी है। सुबह होने में कुछ ही कसर है। जरा सप्तर्षि नाम के तारों को तो देखिए। वे आसमान में लंबे पड़े हुए हैं। उनका पिछला भाग तो नीचे को झुका-सा है और अगला ऊपर को। वहीं, उनके अधोभाग में, छोटा-सा ध्रुवतारा कुछ-कुछ चमक रहा है। सप्तर्षियों का आकार गाड़ी के सदृश है—ऐसी गाड़ी के सदृश जिसका जुवाँ ऊपर को उठ गया हो; इसी से उनके और ध्रुवतारा के दृश्य को देखकर श्रीकृष्ण के बालपन की एक घटना याद आ जाती है। शिशु श्रीकृष्ण को मारने के लिए एक बार गाड़ी का रूप बनाकर शकटासुर नाम का एक दानव उनके पास आया। श्रीकृष्ण ने पालने में पड़े-ही-पड़े, खेलते-खेलते, उसे एक लात मार दी। उसके आघात से उसका अग्रभाग ऊपर को उठ गया और पश्चाद्भाग खड़ा ही रह गया। श्रीकृष्ण उसके तले आ गये। वही दृश्य इस समय सप्तर्षियों की अवस्थिति का है। वे तो कुछ उठे हुए-से लंबे पड़े हैं, छोटा-सा ध्रुव उनके नीचे चमक रहा है।

पूर्व-दिशारूपिणी स्त्री की प्रभा इस समय बहुत ही भली मालूम होती है। वह हँस-सी रही है। वह यह सोचती-सी है कि इस चन्द्रमा ने जब तक मेरा साथ दिया—जब तक यह मेरी संगति में रहा—तब तक उदित ही नहीं रहा, इसकी दीप्ति भी खूब बढ़ी, परन्तु, देखो, वही अब पश्चिम-दिशारूपिणी स्त्री की तरफ जाते ही (हीन-दीप्ति होकर) पतित हो रहा है। इसी से पूर्व दिशा, चन्द्रमा को देख-देख प्रभा के बहाने, ईर्ष्या से मुसका-सी रही है। परन्तु चन्द्रमा को उसके हँसी-मजाक की कुछ भी परवाह नहीं। वह अपने ही रंग में मस्त मालूम होता है। अस्त समय होने के कारण उसका बिंब तो लाल है, पर किरणें उसकी पुराने कमल की नाल के कटे हुए टुकड़ों के समान सफेद हैं। स्वयं सफेद होकर भी, बिंब की अरुणता के कारण, वे कुछ-कुछ लाल भी हैं। कुंकुम-मिश्रित सफेद चन्दन के सदृश उन्हीं लालिमा मिली हुई सफेद किरणों से चन्द्रमा पश्चिम दिग्वधू का शृंगार-सा कर रहा है—उसे प्रसन्न करने के लिए उसके मुख पर चन्दन का लेप-सा समा रहा है। पूर्व दिग्वधू के द्वारा किये गये उपहास की तरफ उसका ध्यान ही नहीं।

जब कमल शोभित होते हैं, तब कुमुद नहीं और जब कुमुद शोभित होते हैं तब कमल नहीं। दोनों की दशा बहुधा एक-सी नहीं रहती। परन्तु, इस समय, प्रातःकाल, दोनों में तुल्यता देखी जाती है। कुमुद बन्द होने को हैं; पर अभी पूरे बंद नहीं हुए। उधर कमल खिलने को हैं; पर अभी पूरे खिले नहीं। एक की शोभा आधी ही रह गयी है और दूसरे को आधी ही प्राप्त हुई है। रहे भ्रमर, सो अभी दोनों ही पर मँडरा रहे हैं और गुंजा-रव के बहाने दोनों ही के प्रशंसा के गीत-से गा रहे हैं। इसी से इस समय कुमुद और कमल, दोनों ही समता को प्राप्त हो रहे हैं।

सायंकाल जिस समय चन्द्रमा का उदय हुआ था, उस समय वह बहुत ही लावण्यमय था। क्रम-क्रम से उसकी दीप्ति, उसकी सुन्दरता—और भी बढ़ गयी। वह ठहरा रसिक। उसने सोचा, यह इतनी बड़ी रात यों ही कैसे कटेगी; लाओ खिली हुई नवीन कुमुदियों (कोकाबेलियों) के साथ हँसी-मजाक ही करें। अतएव वह उनकी शोभा के साथ हास-परिहास करके उनका विकास करने लगा। इस तरह खेलते-कूदते सारी रात बीत गयी। वह थक भी गया; शरीर पीला पड़ गया, कर (किरण-जाल) म्रस्त अर्थात् शिथिल हो गये। इससे वह दूसरी दिगंगना (पश्चिम दिशा) की गोद में जा गिरा। यह शायद उसने इसलिए किया कि रात भर के जगे हैं, लाओ, अब उसकी गोद में आराम से सो जायँ।

अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न

देकर वे खुद ही उसके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली। रह गयी दिन और रात की संधि अर्थात् प्रातःकालीन संध्या। सो अरुण कमलों ही को आप इस अल्पवयस्क सुता-सदृश संध्या के लाल-लाल और अतिशय कोमल हाथ-पैर समझिए। मधुप-मालाओं से छाये हुए नील कमलों ही को काजल लगी हुई उसकी आँखें जानिए। पक्षियों के कल-कल शब्द ही को उसकी तोतली बोली अनुमान कीजिए। ऐसे संध्या ने जब देखा कि रात इस लोक से जा रही है, तब पक्षियों के कोलाहल के बहाने यह कहती हुई कि 'अम्मा, मैं भी आती हूँ', वह भी उसी के पीछे दौड़ गयी।

अंधकार गया, रात गयी, प्रातःकालीन संध्या भी गयी। विपक्षी दल के एकदम ही पैर उखड़ गये। तब, रास्ता साफ देख, वासर-विधाता भगवान् भास्कर ने निकल आने की तैयारी की। कुलिश-पाणि इन्द्र की पूर्व दिशा में, नये सोने के समान, उनकी पीली-पीली किरणों का समूह छा गया। उनके इस प्रकार आविर्भाव से एक अजीब ही दृश्य दिखायी दिया। आपने बड़वानल का नाम सुना ही होगा। वह एक प्रकार की आग है, जो समुद्र के जल को जलाया करती है। सूर्य के उस लाल-पीले किरण समूह को देखकर ऐसा मालूम होने लगा जैसे वही बड़वाग्नि समुद्र की जल-राशि को जलाकर, त्रिभुवन को भस्म कर डालने के इरादे से, समुद्र के ऊपर उठ आयी हो। धीरे-धीरे दिननाथ का बिंब क्षितिज के ऊपर आ गया। तब एक और ही प्रकार के दृश्य के दर्शन हुए। ऐसा मालूम हुआ, जैसे सूर्य का वह बिंब एक बहुत बड़ा घड़ा है और दिग्वधुएँ जोर लगाकर समुद्र के भीतर से उसे खींच रही हैं। सूर्य की किरणों ही को आप लंबी-लंबी मोटी रस्सियाँ समझिए। उन्हीं से उन्होंने बिंब को बाँध-सा दिया है और खींचते वक्त, पक्षियों के कलरव के बहाने, वे यह कह-कहकर शोर मचा रही हैं कि खींच लिया है; कुछ ही बाकी है, ऊपर आना ही चाहता है; जरा और जोर लगाना।

दिगंगनाओं के द्वारा खींच खाँचकर किसी तरह सागर की सलिल-राशि से बाहर निकाले जाने पर सूर्यबिंब चमचमाता हुआ लाल-लाल दिखायी दिया। अच्छा, बताइए तो सही, यह इस तरह का क्यों है? हमारी समझ में तो यह आता है कि सारी रात पयोनिधि के पानी के भीतर जब यह पड़ा था, तब बड़वाग्नि की ज्वाला ने इसे तपाकर खूब दहकाया होगा। तभी तो खैर (खदिर) के जले हुए कुंदे के अंगार के सदृश लालिमा लिए हुए यह इतना शुभ्र दिखायी दे रहा है। अन्यथा, आप ही कहिए, इसके इतने अंगार गौर होने का और क्या कारण हो सकता है?

सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी—पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों-पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को ही आप्यायित करते हैं।

उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी—आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर वह आकाश में आ गया।

आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो। कहिए, यह सूझ कैसी है? बहुत दूर की तो नहीं।

तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना—हटाना ही—चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने

ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों का भी विनाश करना पड़ा—उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है—शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

सूर्योदय होते ही अंधकार भयभीत होकर भागा। भागकर वह कहीं गुहाओं के भीतर और कहीं घरों के कोनों और कोठरियों के भीतर जा छिपा। मगर वहाँ भी उसका गुजारा न हुआ। सूर्य यद्यपि बहुत दूर आकाश में था, तथापि उसके प्रबल तेज-प्रताप ने छिपे हुए अंधकार को उन जगहों से भी निकाल बाहर किया। निकाला ही नहीं, अपितु उसका सर्वथा नाश भी कर दिया। बात यह है कि तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर-स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा, ये दोनों ही आकाश की दो आँखों के समान हैं। उनमें से सहस्रकिरणात्मक-मूर्तिधारी सूर्य ने ऊपर उठकर जब अशेष लोकों का अंधकार दूर कर दिया, तब वह खूब ही चमक उठा। उधर बेचारा चन्द्रमा किरण-हीन हो जाने से बहुत ही धूमिल हो गया। इस तरह आकाश की एक आँख तो खूब तेजस्क और दूसरी तेजोहीन हो गयी। अतएव ऐसा मालूम हुआ, जैसे एक आँख, प्रकाशवती और दूसरी अंधी वाला आकाश काना हो गया हो।

कुमुदिनियों का समूह शोभाहीन हो गया और सरोरुहों का समूह शोभा-सम्पन्न। उलूकों को तो शोक ने आ घेरा और चक्रवाकों को अत्यानन्द ने। इसी तरह सूर्य तो उदय हो गया और चन्द्रमा अस्त। कैसा आश्चर्यजनक विरोधी दृश्य है। दुष्ट दैव की चेष्टाओं का परिपाक कहते नहीं बनता। वह बड़ा ही विचित्र है। किसी को तो वह हँसाता है, किसी को रुलाता है।

सूर्य को आप दिग्वधुओं का पति समझ लीजिए और यह भी समझ लीजिए कि पिछली रात वह कहीं और किसी जगह, अर्थात् विदेश, चला गया था। मौका पाकर, इसी बीच उसकी जगह पर चन्द्रमा आ विराजा। पर ज्योंही सूर्य अपना प्रवास समाप्त करके सबेरे, पूर्व दिशा में फिर आ धमका, त्योंही उसे देख चन्द्रमा के होश उड़ गये। अब क्या हो? और कोई उपाय न देख, अपने किरण-समूह को कपड़े-लत्ते के सदृश छोड़ उपपति के समान गर्दन झुकाकर वह पश्चिम-दिशारूपी खिड़की के रास्ते निकल भागा।

महामहिम भगवान मधुसूदन जिस समय कल्पांत में समस्त लोकों का प्रलय, बात की बात में कर देते हैं, उस समय अपनी समधिक अनुरागवती श्री (लक्ष्मी) को धारण करके—उन्हें साथ लेकर—क्षीर-सागर में अकेले ही जा विराजते हैं। दिन चढ़ आने पर महिमामय भगवान भास्कर भी, उसी तरह एक क्षण में, सारे तारा-लोक का संहार करके, अपनी अतिशायिनी श्री (शोभा) के सहित, क्षीर-सागर ही के समान आकाश में, देखिए, अब यह अकेले ही मौज कर रहे हैं।

–आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) अंधकार के विकट वैरी महाराज अंशुमाली अभी तक दिखायी भी नहीं दिये। तथापि उसके सारथि अरुण ही ने, उनके अवतीर्ण होने के पहले ही, थोड़े ही नहीं, समस्त तिमिर का समूल नाश कर दिया। बात यह है कि जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते। स्वामी को श्रम न देकर वे खुद ही उनके विपक्षियों को उच्छेद कर डालते हैं। इस तरह, अरुण के द्वारा अखिल अन्धकार का तिरोभाव होते ही बेचारी रात पर आफत आ गयी। इस दशा में वह कैसे ठहर सकती थी। निरुपाय होकर वह भाग चली।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक के नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भगवान सूर्यदेव का सारथि कौन है?
(iv) अंधकार का शत्रु किसे बताया गया है?
(v) अंधकार का समूल नाश किसने कर दिया?

(ख) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है। तरफदारी तो उसे छू-तक नहीं गयी–पक्षपात की तो गंध तक उसमें नहीं, देखिए न, उदय तो उसका उदयाचल पर हुआ, पर क्षण ही भर में उसने अपने नये किरण-कलाप को उसी पर्वत के शिखर पर नहीं, प्रत्युत सभी पर्वतों के शिखरों पर फैलाकर उन सबकी शोभा बढ़ा दी। उसकी इस उदारता के कारण इस समय ऐसा मालूम हो रहा है, जैसे सभी भूधरों ने अपने शिखरों-अपने मस्तकों पर दुपहरिया के लाल-लाल फूलों के मुकुट धारण कर लिए हों। सच है, उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्यदेव के स्वभाव के विषय में लेखक के क्या विचार हैं?
(iv) पर्वतों के शिखरों पर पड़ती प्रातःकालीन सूर्य की किरणों के विषय में क्या कहा गया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में सूर्यदेव की उदारता के आधार पर किसके संदर्भ में और क्या कहा गया है?

(ग) उदयाचल के शिखर रूप आँगन में बाल सूर्य को खेलते हुए धीरे-धीरे रेंगते देख पद्मिनियों को बड़ा प्रमोद हुआ। सुन्दर बालक को आँगन में जानुपाणि चलते देख स्त्रियों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। अतएव उन्होंने अपने कमल-मुख के विकास के बहाने हँस-हँसकर उसे बड़े ही प्रेम से देखा। यह दृश्य देखकर माँ के सदृश अंतरिक्ष देवता का हृदय भर आया। वह पक्षियों के कलरव के मिस बोल उठी– आ जा, आ जा; आ बेटा, आ; फिर क्या था; बालसूर्य बाललीला दिखाता हुआ, झट अपने मृदुल कर (किरणें) फैलाकर, अंतरिक्ष की गोद में कूद गया। उदयाचल पर उदित होकर जरा ही देर में वह आकाश में आ गया।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सूर्योदय होने के समय कमल और कमलनियों पर क्या प्रभाव पड़ा?
(iv) उदित होते समय सूर्य किस प्रकार दिखाई पड़ता है?
(v) किसे देखकर कमलनियाँ आनन्दित हुईं?

(घ) आकाश में सूर्य के दिखायी देते ही नदियों ने विलक्षण ही रूप धारण किया। दोनों तटों या कगारों के बीच से बहते हुए जल पर सूर्य की लाल-लाल प्रातःकालीन धूप जो पड़ी तो वह जल परिपक्व मदिरा के रंग सदृश हो गया। अतएव ऐसा मालूम होने लगा, जैसे सूर्य ने किरण-बाणों से अंधकाररूपी हाथियों की घटा को सर्वत्र मार गिराया हो, उन्हीं के घावों से निकला हुआ रुधिर बहकर नदियों में आ गया हो; और उसी के मिश्रण से उनका जल लाल हो गया हो।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का संदर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रातःकालीन सूर्य की किरणें पड़ने पर नदियों का जल किस प्रकार प्रतीत होने लगा?
(iv) प्रस्तुत गद्यांश में अंधकार की तुलना किससे की गई है?
(v) सूर्य की किरण-बाण ने किसे नष्ट किया?

(ङ) तारों का समुदाय देखने में बहुत भला मालूम होता है, यह सच है। यह भी सच है कि भले आदमियों को न कष्ट ही देना चाहिए और न उनको उनके स्थान से च्युत् ही करना–हटाना ही–चाहिए। परन्तु सूर्य का उदय अंधकार का नाश करने ही के लिए होता है और तारों की श्री-वृद्धि अंधकार ही की बदौलत है। इसी से लाचार होकर सूर्य को अंधकार के साथ ही तारों

का भी विनाश करना पड़ा– उसे उनको भी जबरदस्ती निकाल बाहर करना पड़ा। बात यह है कि शत्रु की बदौलत ही जिन लोगों को संपत्ति और प्रभुता प्राप्त होती है, उनको भी मार भगाना पड़ता है– शत्रु के साथ ही उनका भी विनाश-साधन करना ही पड़ता है। न करने से भय का कारण बना ही रहता है। राजनीति यही कहती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तारों का समूह देखने में कैसा प्रतीत होता है?
(iv) गद्यांश के अनुसार राजनीति क्या कहती है?
(v) सूर्योदय का प्रमुख प्रयोजन क्या होता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की जीवनी बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. महावीरप्रसाद द्विवेदी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. महावीरप्रसाद द्विवेदी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
4. महावीरप्रसाद द्विवेदी की कृतियों का उल्लेख करते हुए उनके साहित्यिक परिचय पर प्रकाश डालिए।
5. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
6. प्रकृति के मानवीकरण की दृष्टि से 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' निबन्ध पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।
7. 'महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन' नामक निबंध का सार लिखिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) उदारशील सज्जन अपने चारुचरितों से अपने ही उदय-देश को नहीं, अन्य देशों को भी आप्यायित करते हैं।
   (ख) जो प्रतापी पुरुष अपने तेज से अपने शत्रुओं का पराभव करने की शक्ति रखते हैं, उनके अग्रगामी सेवक भी कम पराक्रमी नहीं होते।
   (ग) सूर्यदेव की उदारता और न्यायशीलता तारीफ के लायक है।
   (घ) तेजस्वियों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है कि एक निश्चित स्थान में रहकर भी वे अपने प्रताप की धाक से दूर स्थित शत्रुओं का भी सर्वनाश कर डालते हैं।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "समास-बहुल, संस्कृत-शब्दावली के कारण निबंध के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होता है।" इस मत से आप कहाँ तक सहमत हैं?
2. लेखक की दृष्टि से सूर्य-बिम्ब के रक्तिम वर्ण होने का क्या कारण है?
3. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सूर्योदय का किन-किन रूपों में वर्णन किया है?
4. निम्नलिखित शब्दों में विग्रह सहित समास लिखिए–
   सुता-सदृश, मधुप-मालाओं, जानु-पाणि, किरण-हीन।
5. प्रस्तुत निबंध की शैलीगत विशेषताएँ बताइए।
6. प्रस्तुत निबंध में प्रकृति का कैसा मानवीकरण किया गया है?
7. सूर्योदय के विकास-क्रम के साथ विभिन्न रसों की निष्पत्ति का वर्णन कीजिए।
8. 'महाकवि माघ का प्रभात वर्णन' नामक निबन्ध की विशेषताएँ बताइए।

●●●

3 श्यामसुन्दरदास

द्विवेदी युग के महान् साहित्यकार बाबू श्यामसुन्दरदास का जन्म काशी के प्रसिद्ध खत्री परिवार में सन् 1875 ई0 में हुआ था। इनका बाल्यकाल बड़े सुख और आनन्द से बीता। सर्वप्रथम इन्हें संस्कृत की शिक्षा दी गयी, तत्पश्चात् परीक्षाएँ उत्तीर्ण करते हुए सन् 1897 ई0 में बी0 ए0 पास किया। बाद में आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण चन्द्रप्रभा प्रेस में 40 रु0 मासिक वेतन पर नौकरी की। इसके बाद काशी के हिन्दू स्कूल में सन् 1899 ई0 में कुछ दिनों तक अध्यापन कार्य किया। इसके बाद लखनऊ के कालीचरण हाईस्कूल में प्रधानाध्यापक हो गये। इस पद पर नौ वर्ष तक कार्य किया। इन्होंने 16 जुलाई, सन् 1893 ई0 को विद्यार्थी-काल में ही अपने दो सहयोगियों रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमार सिंह की सहायता से 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की। अन्त में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गये और अवकाश ग्रहण करने तक इसी पद पर बने रहे। निरन्तर कार्य करते रहने के कारण इनका स्वास्थ्य गिर गया और सन् 1945 ई0 में इनकी मृत्यु हो गयी।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1875 ई0।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ0 प्र0)।
- **पिता**—देवीदास।
- **माता**—देवकी देवी।
- 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के संस्थापक।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—काशी।
- **संपादन**—नागरी प्रचारिणी पत्रिका।
- **भाषा**—शुद्ध साहित्यिक हिन्दी, सरल तथा व्यावहारिक भाषा।
- **शैली**—विवेचनात्मक, समीक्षात्मक, गवेषणात्मक, भावात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—हिन्दी भाषा का विकास, गद्य कुसुमावली, भाषा-विज्ञान, साहित्यालोचक, रूपक रहस्य आदि।
- **साहित्य में स्थान**—मातृभाषा का प्रचार करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण योगदान।
- **मृत्यु**—सन् 1945 ई0।
- **साहित्य में पहचान**—आलोचक, निबन्धकार, संपादक आदि। द्विवदी युग के महान् गद्यकार।
- **उपाधि**—अंग्रेजी सरकार से रायबहादुर की उपाधि, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयागराज द्वारा 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा 'डी॰ लिट्' की मानद उपाधि प्रदान की गयी।

श्यामसुन्दरदास जी अपने जीवन के पचास वर्षों में अनवरत रूप से हिन्दी की सेवा करते हुए उसे कोश, इतिहास, काव्यशास्त्र, भाषा-विज्ञान, शोधकार्य, उपयोगी साहित्य, पाठ्य-पुस्तक और सम्पादित ग्रन्थ आदि से समृद्ध किया, उसके महत्त्व की प्रतिष्ठा की, उसकी आवाज को जन-जन तक पहुँचाया, उसे खण्डहरों से उठाकर विश्वविद्यालयों के भव्य-भवनों में प्रतिष्ठित किया। वह अन्य भाषाओं के समकक्ष बैठने की अधिकारिणी हुई। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इन्हें 'साहित्य

वाचस्पति' और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने 'डी० लिट्०' की उपाधि देकर इनकी साहित्यिक सेवाओं की महत्ता को स्वीकार किया।

श्यामसुन्दरदास की प्रमुख कृतियों का विवरण इस प्रकार है—

निबन्ध—'गद्य-कुसुमावली' के अतिरिक्त 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में भी इनके लेख प्रकाशित हुए।

आलोचना ग्रंथ—'साहित्यालोचन', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र', 'रूपक-रहस्य'।

भाषा-विज्ञान—'भाषा-विज्ञान', 'हिन्दी भाषा का विकास', 'हिन्दी भाषा और साहित्य'।

संपादित रचनाएँ—'हिन्दी-शब्द-सागर', 'वैज्ञानिक कोश', 'हिन्दी-कोविदमाला', 'मनोरंजन पुस्तकमाला', 'पृथ्वीराजरासो', 'नासिकेतोपाख्यान', 'छत्र प्रकाश', 'वनिता विनोद', 'इन्द्रावती', 'हम्मीर रासो', 'शाकुन्तल नाटक', 'श्रीरामचरितमानस', 'दीनदयाल गिरि की ग्रंथावली', 'मेघदूत', 'परमाल रासो'। आपने 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का भी दीर्घकाल तक संपादन किया।

अन्य रचनाएँ—'भाषा रहस्य', 'मेरी आत्मकहानी', 'हिन्दी-साहित्य-निर्माता', 'साहित्यिक लेख'।

बाबू श्यामसुन्दरदास की भाषा सिद्धान्त निरूपण करनेवाली सीधी, ठोस, भावुकता-विहीन और निरलंकृत होती है। विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से ये संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं और जहाँ तक बन पड़ा है, विदेशी शब्दों के प्रयोग से बचते रहे हैं। कहीं-कहीं पर इनकी भाषा दुरूह और अस्पष्ट भी हो जाती है। उसमें लोकोक्तियों का प्रयोग भी बहुत ही कम है। वास्तव में इनकी भाषा का महत्त्व उपयोगिता की दृष्टि से है और उसमें एक विशिष्ट प्रकार की साहित्यिक गुरुता है। इनकी प्रारम्भिक कृतियों में भाषा-शैथिल्य दिखायी देता है किन्तु धीरे-धीरे वह प्रौढ़, स्वच्छ, परिमार्जित और संयत होती गयी है।

बाबू साहब ने अत्यन्त गंभीर विषयों को बोधगम्य शैली में प्रस्तुत किया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ तद्भव शब्दों का भी यथेष्ट प्रयोग करके इन्होंने शैली को दुरूह बनने से बचाया है। इनकी शैली में सुबोधता, सरलता और विषय-प्रतिपादन की निपुणता है, इनके वाक्य-विन्यास जटिल और दुर्बोध नहीं हैं। इनकी भाषा में उर्दू-फारसी के शब्दों तथा मुहावरों का प्रायः अभाव है। व्यंग्य, वक्रोक्ति तथा हास-परिहास से इनके निबंध प्रायः शून्य हैं। विषय-प्रतिपादन के अनुरूप इनकी शैली में वैज्ञानिक पदावली का समीचीन प्रयोग हुआ है। हिन्दी भाषा को सर्वजन सुलभ, वैज्ञानिक और समृद्ध बनाने में इनका योगदान अप्रतिम है। इन्होंने विचारात्मक, गवेषणात्मक तथा व्याख्यात्मक शैलियों का व्यवहार किया है। आलोचना, भाषा-विज्ञान, भाषा का इतिहास, लिपि का विकास आदि विषयों पर इन्होंने वैज्ञानिक एवं सैद्धांतिक विवेचन प्रस्तुत कर हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाया है।

प्रस्तुत निबंध '**भारतीय साहित्य की विशेषताएँ**' में लेखक ने भारतीय साहित्य की अनेक विशेषताओं का वर्णन किया है। पहली विशेषता समन्वय की है। भारतीय दर्शन में परमात्मा तथा जीवात्मा में कोई अन्तर नहीं माना जाता। लेखक के अनुसार इसी दार्शनिक मान्यता के आधार पर कला व साहित्य में समन्वय का आदर्श प्रमुख बना। दूसरी विशेषता धार्मिक भावों की प्रचुरता है। इस दूसरी विशेषता के कारण लौकिक जीवन की अनेकरूपता प्रदर्शित न हो सकी। इन दो मुख्य विशेषताओं के अतिरिक्त देश की जलवायु और भौगोलिक स्थिति का भी साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। जातिगत तथा देशगत विशेषताओं की ओर लेखक ने ध्यान आकृष्ट करते हुए इनका प्रभाव साहित्य के भावपक्ष एवं कलापक्ष पर स्पष्ट किया है। सम्पूर्ण निबंध में लेखक ने आलोचनात्मक दृष्टि अपनायी है।

●●●

भारतीय साहित्य की विशेषताएँ

समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकता है और अपने स्वतंत्र अस्तित्त्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकता है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में सामाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनन्द में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखायी देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाये गये हैं, पर सबका अवसान आनन्द में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना सम्बन्ध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है। हमारे यहाँ पाश्चात्य प्रणाली के दुखांत नाटक इसीलिए नहीं दीख पड़ते। यदि आजकल दो-चार नाटक ऐसे दीख भी पड़ने लगे हैं, तो वे भारतीय आदर्श से दूर और पाश्चात्य आदर्श के अनुकरण-मात्र हैं। कविता के क्षेत्र में ही देखिए। यद्यपि विदेशी शासन से पीड़ित तथा अनेक क्लेशों से संतप्त देश निराशा की चरम सीमा तक पहुँच चुका था और उसके सभी अवलम्बों की इतिश्री हो चुकी थी, फिर भी भारतीयता के सच्चे प्रतिनिधि तत्कालीन महाकवि गोस्वामी तुलसीदास अपने विकार-रहित हृदय से समस्त जाति को आश्वासन देते हैं—

''भरे भाग अनुराग लोग कहैं राम अवध चितवन चितई है,
सानन्द सुनि विनती हेरि हँसि करुना वारि भूमि भिजई है।
रामराज भयो काज सगुन सुभ राजा राम जगत-विजई है,
समरथ बड़ो सुजान सुसाहब सुकृति-सेन हारत जितई है।''

आनन्द की कितनी महान् भावना है। चित्त किसी अनुभूत आनन्द की कल्पना में मानो नाच उठता है। हिन्दी साहित्य के विकास का समस्त युग विदेशीय तथा विजातीय शासन का युग था; परन्तु फिर भी साहित्यिक समन्वय का भी निरादर नहीं हुआ। आधुनिक युग के हिन्दी कवियों में यद्यपि पाश्चात्य आदर्शों की छाप पड़ने लगी है और लक्षणों को देखते हुए इस छाप के अधिकाधिक गहरी हो जाने की सम्भावना हो रही है, तथापि जातीय साहित्य की धारा अक्षुण्ण रखनेवाले कुछ कवि अब भी वर्तमान हैं।

यदि हम थोड़ा-सा विचार करें तो उपर्युक्त साहित्यिक समन्वयवाद का रहस्य हमारी समझ में आ सकता है। जब हम थोड़ी देर के लिए साहित्य को छोड़कर भारतीय कलाओं का विश्लेषण करते हैं तब उनमें भी साहित्य की भाँति समन्वय की छाप दिखायी पड़ती है। सारनाथ की बुद्ध भगवान् की मूर्ति उस समय की है, जब वे छह महीने की कठिन साधना के उपरान्त अस्थिपंजर-मात्र ही रहे होंगे, पर मूर्ति में कहीं कृशता का पता नहीं; उसके चारों ओर एक स्वर्गीय आभा नृत्य कर रही है।

इस प्रकार साहित्य में भी तथा कला में भी एक प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और प्रबल हो उठती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा जीवात्मा में कुछ भी अन्तर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनन्दस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान उत्पन्न करनेवाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनन्दमय परमात्मा में लीन होता है। आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वय पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था की गयी है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के एकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत तथा व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-सम्बन्धी गहन तथा गम्भीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक

भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिन्दी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं। सामवेद की मनोहारिणी तथा मृदु गंभीर ऋचाओं से लेकर सूर तथा मीरा आदि की सरस रचनाओं तक में सर्वत्र परोक्ष भावों की अधिकता तथा लौकिक विचारों की न्यूनता देखने में आती है।

उपर्युक्त मनोवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि साहित्य में उच्च विचार तथा पूत भावनाएँ तो प्रचुरता से भरी गयीं, परन्तु उनमें लौकिक जीवन की अनेकरूपता का प्रदर्शन न हो सका। हमारी कल्पना अध्यात्म-पक्ष में तो निस्सीम तक पहुँच गयी; परन्तु ऐहिक जीवन का चित्र उपस्थित करने में वह कुछ कुंठित-सी हो गयी है। हिन्दी की चरम उन्नति का काल भक्ति-काव्य का काल है, जिसमें उसके साहित्य के साथ हमारे जातीय साहित्य के लक्षणों का सामंजस्य स्थापित हो जाता है।

धार्मिकता के भाव से प्रेरित होकर जिस सरल तथा सुन्दर साहित्य की सृष्टि हुई, वह वास्तव में हमारे गौरव की वस्तु है; परन्तु समाज में जिस प्रकार धर्म के नाम पर अनेक दोष घुस जाते हैं तथा गुरुडम की प्रथा चल पड़ती है, उसी प्रकार साहित्य में भी धर्म के नाम पर पर्याप्त अनर्थ होता है, हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में हम यह अनर्थ दो मुख्य रूपों में देखते हैं, एक तो साम्प्रदायिक कविता तथा नीरस उपदेशों के रूप में और दूसरा कृष्ण का आधार लेकर की गयी हिन्दी की शृंगारी कविताओं के रूप में। हिन्दी में साम्प्रदायिक कविता का एक युग ही हो गया है और 'नीति के दोहों' की तो अब तक भरमार है। अन्य दृष्टियों से नहीं तो कम-से-कम शुद्ध साहित्यिक समीक्षा की दृष्टि से ही सही, साम्प्रदायिक तथा उपदेशात्मक साहित्य का अत्यन्त निम्न स्थान है; क्योंकि नीरस पदावली के कोरे उपदेशों में कवित्व की मात्रा बहुत थोड़ी होती है। राधाकृष्ण को लेकर हमारे शृंगारी कवियों ने अपने कलुषित तथा वासनामय उद्‌गारों को व्यक्त करने का जो ढंग निकाला वह समाज के लिए हितकर नहीं हुआ, यद्यपि आदर्श की कल्पना करनेवाले कुछ साहित्यिक समीक्षक इस शृंगारी कविता में भी उच्च आदर्शों की उद्‌भावना कर लेते हैं, पर फिर भी हम वस्तुस्थिति की किसी प्रकार अवहेलना नहीं कर सकते। सब प्रकार की शृंगारिक कविता ऐसी नहीं है कि उसमें शुद्ध प्रेम का अभाव तथा कलुषित वासनाओं का ही अस्तित्त्व हो, पर यह स्पष्ट है कि पवित्र भक्ति का उच्च आदर्श, आगे चलकर लौकिक शरीर-जन्य तथा वासना-मूलक प्रेम में परिणत हो गया।

भारतीय साहित्य की इन दो प्रधान विशेषताओं का उपर्युक्त विवेचन करके अब हम उसकी दो-एक देशगत विशेषताओं का वर्णन करेंगे। प्रत्येक देश की जलवायु अथवा भौगोलिक स्थिति का प्रभाव उस देश के साहित्य पर अवश्य पड़ता है और यह प्रभाव बहुत-कुछ स्थायी भी होता है। संसार के सब देश एक ही प्रकार के नहीं होते। जलवायु तथा गर्मी-सर्दी के साधारण विभेदों के अतिरिक्त उनके प्राकृतिक दृश्यों तथा उर्वरता आदि में भी अंतर होता है। यदि पृथिवी पर अरब तथा सहारा जैसी दीर्घकाय मरुभूमियाँ हैं तो साइबेरिया तथा रूस के विस्तृत मैदान भी हैं। यदि यहाँ इंग्लैण्ड तथा आयरलैण्ड जैसे जलावृत द्वीप हैं तो चीन जैसा विस्तृत भूखण्ड भी है। इन विभिन्न भौगोलिक स्थितियों का उन देशों के साहित्यों से जो सम्बन्ध होता है; उसी को इस साहित्य की देशगत विशेषताएँ कहते हैं।

भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परन्तु उसकी सुन्दरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही सौन्दर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं; परन्तु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी है; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसन्तश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं, उन्हें अरब की उपर्युक्त वस्तुओं में सौन्दर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-हरे उपवनों तथा सुन्दर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं। यही कारण है कि भारतीय कवि प्रकृति के संश्लिष्ट तथा सजीव चित्र जितनी मार्मिकता, उत्तमता तथा अधिकता से अंकित कर सकते हैं तथा उपमा-उत्प्रेक्षाओं के लिए जैसी सुन्दर वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं; वैसा रूखे-सूखे देश के निवासी कवि नहीं कर सकते। यह भारत-भूमि की ही विशेषता है कि यहाँ के कवियों का प्राकृतिक-वर्णन तथा तत्संभव सौन्दर्य-ज्ञान उच्च कोटि का होता है।

प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं। यह अखंड भूमण्डल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं? इनके सृष्टि-संचालन आदि के सम्बन्ध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किन्तु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-सम्बन्धी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं के उद्रेक की क्षमता होती है, परन्तु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती। यद्यपि इस देश की उत्तरकालीन विचारधारा के कारण हिन्दी में बहुत

थोड़े रहस्यवादी कवि हुए हैं, परन्तु कुछ प्रेम-प्रधान कवियों ने भारतीय मनोहर दृश्यों की सहायता से अपनी रहस्यमयी उक्तियों को अत्यधिक सरस तथा हृदयग्राही बना दिया है। यह भी हमारे साहित्य की एक देशगत विशेषता है।

ये जातिगत तथा देशगत विशेषताएँ तो हमारे साहित्य के भावपक्ष की हैं। इनके अतिरिक्त उसके कलापक्ष में भी कुछ स्थायी जातीय मनोवृत्तियों का प्रतिबिम्ब अवश्य दिखायी देता है। कलापक्ष से हमारा अभिप्राय केवल शब्द-संगठन अथवा छन्द-रचना तथा विविध आलंकारिक प्रयोगों से नहीं है, प्रत्युत उसमें भावों को व्यक्त करने की शैली भी सम्मिलित है। यद्यपि प्रत्येक कविता के मूल में कवि का व्यक्तित्त्व निहित रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उस कविता के विश्लेषण द्वारा हम कवि के आदर्श तथा उसके व्यक्तित्त्व से परिचित हो सकते हैं। परन्तु साधारणतः हम देखते हैं कि कुछ कवियों में प्रथम पुरुष एकवचन के प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक होती है तथा कुछ कवि अन्य पुरुष में अपने भाव प्रकट करते हैं।

अंग्रेजी में इस विभिन्नता के आधार पर कविता के व्यक्तिगत तथा अव्यक्तिगत नामक भेद हुए हैं, परन्तु ये विभेद वास्तव में कविता के नहीं उसकी शैली के हैं। दोनों प्रकार की कविताओं में कवि के आदर्शों का अभिव्यंजन होता है, केवल इस अभिव्यंजन के ढंग में अन्तर रहता है। एक में वे आदर्श आत्मकथन अथवा आत्मनिवेदन के रूप में व्यक्त किये जाते हैं, दूसरी में उन्हें व्यंजित करने के लिए वर्णनात्मक प्रणाली का आधार ग्रहण किया जाता है। भारतीय कवियों में दूसरी (वर्णनात्मक) शैली की अधिकता तथा पहली की कमी पायी जाती है। यही कारण है कि यहाँ वर्णनात्मक काव्य अधिक है तथा कुछ भक्त कवियों की रचनाओं के अतिरिक्त उस प्रकार की कविता का अभाव है जिसे गीति-काव्य कहते हैं और जो विशेषकर पदों के रूप में लिखी जाती है।

साहित्य के कलापक्ष की अन्य महत्त्वपूर्ण जातीय विशेषताओं से परिचित होने के लिए हमें उसके शब्द-समुदाय पर ध्यान देना पड़ेगा। साथ ही भारतीय संगीत-शास्त्र की कुछ साधारण बातें भी जान लेनी होंगी। वाक्य रचना के विविध भेदों, शब्दगत तथा अर्थगत अलंकारों और अक्षर, मात्रिक अथवा लघु मात्रिक आदि छन्द-समुदायों का विवेचन भी उपयोगी हो सकता है, परन्तु एक तो ये विषय इतने विस्तृत हैं कि इन पर यहाँ विचार करना सम्भव नहीं। दूसरे इनका सम्बन्ध साहित्य के इतिहास से उतना अधिक नहीं है जितना व्याकरण, अलंकार और पिंगल से है। तीसरी बात यह भी है कि इनमें जातीय विशेषताओं की कोई स्पष्ट छाप भी नहीं दीख पड़ती, क्योंकि ये सब बातें थोड़े बहुत अन्तर से प्रत्येक देश के साहित्य में पायी जाती हैं।

—श्यामसुन्दरदास

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता, उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यह विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकता है और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित कर सकता है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में समाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनन्द में उनके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखायी देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाये गये हैं, पर सबका अवसान आनन्द में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है। वर्तमान स्थिति से उसका इतना सम्बन्ध नहीं है, जितना भविष्य की संभाव्य उन्नति से है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए। (ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भारतीय साहित्य की सबसे प्रमुख विशेषता क्या है? (iv) साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
(v) सभी भारतीय नाटक सुखान्त क्यों होते हैं?

(ख) इस प्रकार साहित्य में भी तथा कला में भी एक प्रकार का आदर्शात्मक साम्य देखकर उसका रहस्य जानने की इच्छा और प्रबल हो उठती है। हमारे दर्शन-शास्त्र हमारी जिज्ञासा का समाधान कर देते हैं। भारतीय दर्शनों के अनुसार परमात्मा तथा

जीवात्मा में कुछ भी अन्तर नहीं, दोनों एक ही हैं, दोनों सत्य हैं, चेतन हैं तथा आनन्दस्वरूप हैं। बंधन मायाजन्य है। माया अज्ञान उत्पन्न करनेवाली वस्तु है। जीवात्मा मायाजन्य अज्ञान को दूर कर अपना स्वरूप पहचानता है और आनन्दमय परमात्मा में लीन होता है। आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है। जब हम इस दार्शनिक सिद्धांत का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त समन्वय पर विचार करते हैं, तब सारा रहस्य हमारी समझ में आ जाता है तथा इस विषय में और कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए। (ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) जीवात्मा और परमात्मा में क्या भेद है? (iv) जीवात्मा का बंधन कैसे होता है?
(v) मानव-जीवन का परम उद्देश्य क्या है?

(ग) भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता उसमें धार्मिक भावों की प्रचुरता है। हमारे यहाँ धर्म की बड़ी व्यापक व्यवस्था की गयी है और जीवन के अनेक क्षेत्रों में उसको स्थान दिया गया है। धर्म में धारण करने की शक्ति है, अतः केवल अध्यात्म-पक्ष में ही नहीं, लौकिक आचार-विचार तथा राजनीति तक में उसका नियंत्रण स्वीकार किया गया है। मनुष्य के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को ध्यान में रखते हुए अनेक सामान्य तथा विशेष धर्मों का निरूपण किया गया है। वेदों के एकेश्वरवाद, उपनिषदों के ब्रह्मवाद तथा पुराणों के अवतारवाद और बहुदेववाद की प्रतिष्ठा जन-समाज में हुई है और तदनुसार हमारा धार्मिक दृष्टिकोण भी अधिकाधिक विस्तृत या व्यापक हो गया है। हमारे साहित्य पर धर्म की इस अतिशयता का प्रभाव दो प्रधान रूपों में पड़ा। आध्यात्मिकता की अधिकता होने के कारण हमारे साहित्य में एक ओर तो पवित्र भावनाओं और जीवन-सम्बन्धी गहन तथा गम्भीर विचारों की प्रचुरता हुई और दूसरी ओर साधारण लौकिक भावों तथा विचारों का विस्तार अधिक नहीं हुआ। प्राचीन वैदिक साहित्य से लेकर हिन्दी के वैष्णव-साहित्य तक में हम यही बात पाते हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक ने भारतीय साहित्य की दूसरी बड़ी विशेषता क्या बताया है?
(iv) आचार-विचार तथा राजनीति में धर्म का नियन्त्रण क्यों स्वीकार किया गया है?
(v) हमारे साहित्य में धर्म की अतिशयता का क्या प्रभाव पड़ा?

(घ) भारत की शस्यश्यामला भूमि में जो निसर्ग-सिद्ध सुषमा है, उस पर भारतीय कवियों का चिरकाल से अनुराग रहा है। यों तो प्रकृति की साधारण वस्तुएँ भी मनुष्यमात्र के लिए आकर्षक होती हैं, परन्तु उसकी सुन्दरतम विभूतियों में मानव वृत्तियाँ विशेष प्रकार से रमती हैं। अरब के कवि मरुस्थल में बहते हुए किसी साधारण से झरने अथवा ताड़ के लंबे-लंबे पेड़ों में ही सौन्दर्य का अनुभव कर लेते हैं तथा ऊँटों की चाल में ही सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं; परन्तु जिन्होंने भारत की हिमाच्छादित शैलमाला पर संध्या की सुनहली किरणों की सुषमा देखी है; अथवा जिन्हें घनी अमराइयों की छाया में कल-कल ध्वनि से बहती हुई निर्झरिणी तथा उसकी समीपवर्तिनी लताओं की वसन्तश्री देखने का अवसर मिला है, साथ ही जो यहाँ के विशालकाय हाथियों की मतवाली चाल देख चुके हैं,उन्हें अरब की उपर्युक्त वस्तुओं में सौन्दर्य तो क्या, उलटे नीरसता, शुष्कता और भद्दापन ही मिलेगा। भारतीय कवियों को प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य प्राप्त है। वे हरे-हरे उपवनों तथा सुन्दर जलाशयों के तटों पर विचरण करते तथा प्रकृति के नाना मनोहारी रूपों से परिचित होते हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) विशेष प्रकार की मानव वृत्तियाँ कहाँ रमती हैं?
(iv) अरब देश के कवि किन वस्तुओं को देखकर सुन्दरता की कल्पना कर लेते हैं?
(v) गद्यांश के अनुसार प्रकृति की सुन्दर गोद में क्रीड़ा करने का सौभाग्य किन्हें प्राप्त है?

(ङ) प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति होती है उसका उपयोग कविगण कभी-कभी रहस्यमयी भावनाओं के संचार में भी करते हैं। यह अखंड भूमण्डल तथा असंख्य ग्रह, उपग्रह, रवि-शशि अथवा जल, वायु, अग्नि, आकाश कितने रहस्यमय तथा अज्ञेय हैं? इनके सृष्टि-संचालन आदि के सम्बन्ध में दार्शनिकों अथवा वैज्ञानिकों ने जिन तत्त्वों का निरूपण किया है, वे ज्ञानगम्य अथवा बुद्धिगम्य होने के कारण नीरस तथा शुष्क हैं। काव्य-जगत् में इतनी शुष्कता तथा नीरसता से काम नहीं चल सकता, अतः कविगण बुद्धिवाद के चक्कर में न पड़कर व्यक्त प्रकृति के नाना रूपों में एक अव्यक्त किन्तु सजीव सत्ता का साक्षात्कार करते तथा उसमें भावमग्न होते हैं। इसे हम प्रकृति-सम्बन्धी रहस्यवाद का एक अंग मान सकते हैं। प्रकृति के विविध रूपों में विविध भावनाओं

के उद्रेक की क्षमता होती है, परन्तु रहस्यवादी कवियों को अधिकतर उसके मधुर स्वरूप से प्रयोजन होता है, क्योंकि भावावेश के लिए प्रकृति के मनोहर रूपों की जितनी उपयोगिता है, उतनी दूसरे रूपों की नहीं होती।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) प्रस्तुत गद्यांश में रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कविगण किसमें भावमग्न होते हैं?
(iv) लेखक के अनुसार रहस्यवाद क्या है?
(v) प्रकृति के रम्य रूपों में तल्लीनता की जो अनुभूति है, उसका उपयोग कविगण किसमें करते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. श्यामसुन्दरदास की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. श्यामसुन्दरदास को हिन्दी भाषा के प्रमुख उन्नायकों में क्यों गिना जाता है? तर्कसंगत उत्तर दीजिए।
3. श्यामसुन्दरदास का साहित्यिक परिचय दीजिए।
4. श्यामसुन्दरदास के जीवन-परिचय पर प्रकाश डालिए।
5. श्यामसुन्दरदास की कृतियों का उल्लेख करते हुए उनका साहित्यिक परिचय लिखिए।
6. श्यामसुन्दरदास का जीवन-परिचय व रचनाएँ लिखकर उनकी भाषा-शैली की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
7. 'भारतीय साहित्य की विशेषताएँ' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक पंक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है।
   (ख) आनन्द में विलीन हो जाना ही मानव-जीवन का परम उद्देश्य है।
   (ग) धर्म में धारण करने की शक्ति है।
   (घ) कविता के मूल में कवि का व्यक्तित्व निहित रहता है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

अथवा श्यामसुन्दरदास के अनुसार भारतीय साहित्य की दो प्रधान विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

2. साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
3. निम्नलिखित शब्दों का आशय स्पष्ट कीजिए— जातीय साहित्य, देशगत साहित्य, सामान्य तथा विशेष धर्म।
4. प्रस्तुत निबंध के आधार पर श्यामसुन्दरदास की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
5. निम्नलिखित शब्दों में समास बताइए – घात-प्रतिघात, वसन्त-श्री, सृष्टि-संचालक।
6. "भारतीय साहित्य में हित का भाव सर्वोपरि है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
7. भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता क्या है? स्पष्ट कीजिए।
8. साहित्यिक समन्वय से लेखक का क्या तात्पर्य है?
9. "भारतीय साहित्य में धार्मिक भावनाओं की प्रचुरता है।" इसका आशय स्पष्ट कीजिए।
10. भारतीय साहित्य की वह कौन-सी विशेषता है जो उसे अन्य देशों के साहित्य से भिन्न करती है?
11. भारतीय नाटकों का अवसान आनन्द में ही क्यों किया जाता है?
12. भारतीय साहित्य में प्रकृति का प्रभाव किन-किन रूपों में दृष्टिगत होता है?

●●●

4 सरदार पूर्णसिंह

द्विवेदी-युग के श्रेष्ठ निबंधकार सरदार पूर्णसिंह का जन्म सीमा प्रान्त (जो अब पाकिस्तान में है) के एबटाबाद जिले के एक गाँव में सन् 1881 ई0 में हुआ था। इनकी आरंभिक शिक्षा रावलपिंडी में हुई थी। हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ये लाहौर चले गये। लाहौर के एक कालेज से इन्होंने एफ0 ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद एक विशेष छात्रवृत्ति प्राप्त कर सन् 1900 ई0 में रसायनशास्त्र के विशेष अध्ययन के लिए ये जापान गये और वहाँ इम्पीरियल यूनिवर्सिटी में अध्ययन करने लगे। जब जापान में होनेवाली 'विश्व धर्म सभा' में भाग लेने के लिए स्वामी रामतीर्थ वहाँ पहुँचे तो उन्होंने वहाँ अध्ययन कर रहे भारतीय विद्यार्थियों से भी भेंट की। इसी क्रम में सरदार पूर्णसिंह से स्वामी रामतीर्थ की भेंट हुई। स्वामी रामतीर्थ से प्रभावित होकर इन्होंने वहीं संन्यास ले लिया और स्वामी जी के साथ ही भारत लौट आये। स्वामी जी की मृत्यु के बाद इनके विचारों में परिवर्तन हुआ और इन्होंने विवाह करके गृहस्थ जीवन व्यतीत करना आरम्भ किया। इनको देहरादून के इम्पीरियल फारेस्ट इंस्टीट्यूट में 700 रुपये महीने की एक अच्छी अध्यापक की नौकरी मिल गयी। यहीं से इनके नाम के साथ अध्यापक शब्द जुड़ गया। ये स्वतंत्र प्रवृत्ति के व्यक्ति थे, इसलिए इस नौकरी को निभा नहीं सके और त्यागपत्र दे दिया। इसके बाद ये ग्वालियर गये। वहाँ इन्होंने सिखों के दस गुरुओं और स्वामी रामतीर्थ की जीवनियाँ अंग्रेजी में लिखीं। ग्वालियर में भी इनका मन नहीं लगा। तब ये पंजाब के जड़ाँवाला स्थान में जाकर खेती करने लगे। खेती में हानि हुई और ये अर्थ-संकट में पड़कर नौकरी की तलाश में इधर-उधर भटकने लगे। इनका सम्बन्ध क्रान्तिकारियों से भी था। 'देहली षड्यंत्र' के मुकदमे में मास्टर अमीरचंद के साथ इनको भी पूछताछ के लिए बुलाया गया था किन्तु इन्होंने मास्टर अमीरचंद से अपना किसी प्रकार का सम्बन्ध होना स्वीकार

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—17 फरवरी, सन् 1881 ई0।
- **जन्म-स्थान**—एबटाबाद (पाकिस्तान)।
- **कृतियाँ**—सच्ची वीरता, आचरण की सभ्यता, मजदूरी और प्रेम, अमेरिका का मस्त योगी वॉल्ट ह्विटमैन, कन्यादान, पवित्रता।
- द्विवेदी युग के निबन्धकार।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—रावलपिण्डी।
- **शिक्षा**—एफ॰ए॰ (फाइन आर्ट)।
- **लेखन-विधा**—निबन्ध।
- **भाषा**—शुद्ध खड़ीबोली।
- **शैली**—भावात्मक, विचारात्मक, वर्णनात्मक।
- **आजीविका**—देहरादून के इंपीरियल फॉरेस्ट इंस्टीट्यूट में अध्यापक।
- **मृत्यु**—31 मार्च, सन् 1931 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी निबन्धकारों में इनका प्रमुख स्थान है।

नहीं किया। प्रमाण के अभाव में इनको छोड़ दिया गया। वस्तुतः मास्टर अमीरचंद स्वामी रामतीर्थ के परम भक्त और गुरुभाई थे। प्राणों की रक्षा के लिए इन्होंने न्यायालय में झूठा बयान दिया था। इस घटना का इनके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। भीतर- ही-भीतर ये पश्चाताप की अग्नि में जलते रहते थे। इस कारण भी ये व्यवस्थित जीवन व्यतीत नहीं कर सके और हिन्दी साहित्य की एक बड़ी प्रतिभा पूरी शक्ति से हिन्दी की सेवा नहीं कर सकी। 31 मार्च, 1931 में इनकी मृत्यु हो गयी। सरदार पूर्णसिंह के हिन्दी में कुल छह निबंध उपलब्ध हैं—

1. सच्ची वीरता, 2. आचरण की सभ्यता, 3. मजदूरी और प्रेम, 4. अमेरिका का मस्त योगी वॉल्ट ह्विटमैन, 5. कन्यादान और 6. पवित्रता। इन्हीं निबंधों के बल पर इन्होंने हिन्दी गद्य-साहित्य के क्षेत्र में अपना स्थायी स्थान बना लिया है। इन्होंने निबंध रचना के लिए मुख्य रूप से नैतिक विषयों को ही चुना।

सरदार पूर्णसिंह के निबंध विचारात्मक होते हुए भावात्मक कोटि में आते हैं। उनमें भावावेग के साथ ही विचारों के सूत्र भी लक्षित होते हैं जिन्हें प्रयत्नपूर्वक जोड़ा जा सकता है। ये प्रायः मूल विषय से हटकर उससे सम्बन्धित अन्य विषयों की चर्चा करते हुए दूर तक भटक जाते हैं और फिर स्वयं सफाई देते हुए मूल विषय पर लौट आते हैं। उद्धरण-बहुलता और प्रसंग-गर्भत्व इनकी निबंध-शैली की विशेषता है।

सरदार पूर्णसिंह की भाषा शुद्ध खड़ीबोली है, किन्तु उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ-साथ फारसी और अंग्रेजी के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। इनकी निबंध-शैली अनेक दृष्टियों से निजी-शैली है। इनके विचार भावुकता की लपेट में लिपटे हुए होते हैं। भावात्मकता, विचारात्मकता, वर्णनात्मकता, सूत्रात्मकता, व्यंग्यात्मकता इनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं। विचारों और भावनाओं के क्षेत्र में ये किसी सम्प्रदाय से बँधकर नहीं चलते। इसी प्रकार शब्द-चयन में भी ये अपने स्वच्छन्द स्वभाव को प्रकट करते हैं। इनका एक ही धर्म है मानववाद और एक ही भाषा है हृदय की भाषा। सच्चे मानव की खोज और सच्चे हृदय की भाषा की तलाश ही इनके साहित्य का लक्ष्य है।

प्रस्तुत निबंध **'आचरण की सभ्यता'** में लेखक ने आचरण की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। लेखक की दृष्टि में लम्बी-चौड़ी बातें करना, बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखना और दूसरों को उपदेश देना तो आसान है, किन्तु ऊँचे आदर्शों को आचरण में उतारना अत्यन्त कठिन है। जिस प्रकार हिमालय की सुन्दर चोटियों की रचना में प्रकृति को लाखों वर्ष लगाने पड़े हैं, उसी प्रकार समाज में सभ्य आचरण को विकसित करने में मनुष्य को लाखों वर्षों की साधना करनी पड़ी है। जनसाधारण पर सबसे अधिक प्रभाव सभ्य आचरण का ही पड़ता है। इसलिए यदि हमें पूर्ण मनुष्य बनना है तो अपने आचरण को श्रेष्ठ और सुन्दर बनाना होगा। आचरण की सभ्यता न तो बड़े-बड़े ग्रन्थों से सीखी जा सकती है और न ही मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरों से। उसका खुला खजाना तो हमें प्रकृति के विराट् प्रांगण में मिलता है। आचरण की सभ्यता का पैमाना है परिश्रम, प्रेम और सरल व्यवहार। इसलिए हमें प्रायः श्रमिकों और सामान्य दीखनेवाले लोगों में उच्चतम आचरण के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं।

●●●

आचरण की सभ्यता

विद्या, कला, कविता, साहित्य, धन और राजस्व से भी आचरण की सभ्यता अधिक ज्योतिष्मती है। आचरण की सभ्यता को प्राप्त करके एक कंगाल आदमी राजाओं के दिलों पर भी अपना प्रभुत्व जमा सकता है। इस सभ्यता के दर्शन से कला, साहित्य और संगीत को अद्‌भुत सिद्धि प्राप्त होती है। राग अधिक मृदु हो जाता है; विद्या का तीसरा शिव-नेत्र खुल जाता है, चित्र-कला का मौन राग अलापने लग जाता है; वक्ता चुप हो जाता है; लेखक की लेखनी थम जाती है; मूर्ति बनानेवाले के सामने नये कपोल, नये नयन और नयी छवि का दृश्य उपस्थित हो जाता है।

आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघण्टु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ भी व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

न काला, न नीला, न पीला, न सफेद, न पूर्वी, न पश्चिमी, न उत्तरी, न दक्षिणी, बे-नाम, बे-निशान, बे-मकान—विशाल आत्मा के आचरण से मौनरूपिणी सुगंधि सदा प्रसारित हुआ करती है। इसके मौन से प्रसूत प्रेम और पवित्रता-धर्म सारे जगत् का कल्याण करके विस्तृत होते हैं। इसकी उपस्थिति से मन और हृदय की ऋतु बदल जाते हैं। तीक्ष्ण गरमी से जले-भुने व्यक्ति आचरण के काले बादलों की बूँदाबाँदी से शीतल हो जाते हैं। मानसोत्पन्न शरद् ऋतु में क्लेशातुर हुए पुरुष इनकी सुगंधमय अटल वसंत ऋतु के आनन्द का पान करते हैं। आचरण के नेत्र के एक अश्रु से जगत् भर के नेत्र भीग जाते हैं। आचरण के आनन्द-नृत्य से उन्मदिष्णु होकर वृक्षों और पर्वतों तक के हृदय नृत्य करने लगते हैं। आचरण के मौन व्याख्यान से मनुष्य को एक नया जीवन प्राप्त होता है। नये-नये विचार स्वयं ही प्रकट होने लगते हैं। सूखे काष्ठ सचमुच ही हरे हो जाते हैं। सूखे कूपों में जल भर आता है। नये नेत्र मिलते हैं। कुल पदार्थों के साथ एक नया मैत्री-भाव फूट पड़ता है। सूर्य, जल, वायु, पुष्प, पत्थर, घास, पात, नर-नारी और बालक तक में एक अश्रुतपूर्व सुन्दर मूर्ति के दर्शन होने लगते हैं।

मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभावती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुन्दरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को—मन के लक्ष्य को —ही न बदल दिया। चन्द्रमा की मंद-मंद हँसी का तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचन्द्र सेन और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे है। सच्चा आचरण—प्रभाव, शील, अचल-स्थित संयुक्त आचरण—न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गठा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष के हृदय पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

बर्फ का दुपट्टा बाँधे हुए हिमालय इस समय तो अति सुन्दर, अति ऊँचा और अति गौरवान्वित मालूम होता है, परन्तु प्रकृति ने अगणित शताब्दियों के परिश्रम से रेत का एक-एक परमाणु समुद्र के जल में डुबो-डुबोकर और उनको अपने विचित्र हथौड़े से सुडौल करके इस हिमालय के दर्शन कराये हैं। आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मन्दिर है। यह वह आम का पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनन्त काल लगा है। पृथिवी बन गयी, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परन्तु अभी तक आचरण के सुन्दर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसकी अत्यल्प छटा अवश्य दिखायी देती है।

पुस्तकों में लिखे हुए नुसखों से तो और भी अधिक बदहजमी हो जाती है। सारे वेद और शास्त्र भी यदि घोलकर पी लिये जायँ तो भी आदर्श आचरण की प्राप्ति नहीं होती। आचरण प्राप्ति की इच्छा रखनेवाले को तर्क-वितर्क से कुछ भी सहायता नहीं मिलती। शब्द और वाणी तो साधारण जीवन के चोचले हैं। ये आचरण की गुप्त गुहा में नहीं प्रवेश कर सकते। वहाँ इनका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वेद इस देश के रहनेवालों के विश्वासानुसार ब्रह्म-वाणी हैं, परन्तु इतना काल व्यतीत हो जाने पर भी आज तक वे समस्त जगत् की भिन्न-भिन्न जातियों को संस्कृत भाषा न बुला सके—न समझा सके—न सिखा सके। यह बात हो कैसे? ईश्वर तो सदा मौन है। ईश्वरीय मौन शब्द और भाषा का विषय नहीं। वह केवल आचरण के कान में गुरु-मंत्र फूँक सकता है। वह केवल ऋषि के दिल में वेद का ज्ञानोदय कर सकता है।

किसी का आचरण वायु के झोंके से हिल जाय तो हिल जाय परन्तु साहित्य और शब्द की गोलन्दाजी और आँधी से उसके सिर के एक बाल तक का बाँका न होना एक साधारण बात है। पुष्प की कोमल पंखुड़ी के स्पर्श से किसी को रोमांच हो जाय; जल की शीतलता से क्रोध और विषय-वासना शांत हो जायँ; बर्फ के दर्शन से पवित्रता आ जाय; सूर्य की ज्योति से नेत्र खुल जायँ—परन्तु अंगरेजी भाषा का व्याख्यान—चाहे वह कारलायल ही का लिखा हुआ क्यों न हो—बनारस में पंडितों के लिए रामरोला ही है। इसी तरह न्याय और व्याकरण की बारीकियों के विषय में पंडितों के द्वारा की गयी चर्चाएँ और शास्त्रार्थ संस्कृत ज्ञान-हीन पुरुषों के लिए स्टीम इंजन के फप्-फप् शब्द से अधिक अर्थ नहीं रखते। यदि आप कहें व्याख्यानों द्वारा, उपदेशों द्वारा, धर्मचर्चा द्वारा कितने पुरुषों और नारियों के हृदय पर जीवन-व्यापी प्रभाव पड़ा है, तो उत्तर यह है कि प्रभाव शब्द का नहीं पड़ता— प्रभाव तो सदा सदाचरण का पड़ता है। साधारण उपदेश तो हर गिरजे, हर मंदिर और हर मस्जिद में होते हैं, परन्तु उनका प्रभाव तभी हम पर पड़ता है जब गिरजे का पादरी स्वयं ईसा होता है—मंदिर का पुजारी स्वयं ब्रह्मर्षि होता है—मस्जिद का मुल्ला स्वयं पैगम्बर और रसूल होता है।

यदि एक ब्राह्मण किसी डूबती कन्या की रक्षा के लिए—चाहे वह कन्या जिस किसी जाति की हो, जिस किसी मनुष्य की हो, जिस किसी देश की हो—अपने-आपको गंगा में फेंक दे—चाहे उसके प्राण यह काम करने में रहें चाहे जायँ—तो इस कार्य में प्रेरक आचरण की मौनमयी भाषा किस देश में, किस जाति में और किस काल में, कौन नहीं समझ सकता? प्रेम का आचरण, दया का आचरण—क्या पशु क्या मनुष्य—जगत् के सभी चराचर आप-ही-आप समझ लेते हैं। जगत् भर के बच्चों की भाषा इस भाष्यहीन भाषा का चिह्न है। बालकों के इस शुद्ध मौन का नाद और हास्य भी सब देशों में एक ही-सा पाया जाता है।

मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अन्तरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिम्ब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं। जिनको हम धर्मात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन अधर्मों को करके वे धर्म-ज्ञान को पा सके हैं। जिनको हम सभ्य कहते हैं और जो अपने जीवन में पवित्रता को ही सब-कुछ समझते हैं, क्या पता है, वे कुछ काल पूर्व बुरी और अधर्म पवित्रता में लिप्त रहे हों? अपने जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों से भरी हुई अन्धकारमय कोठरी से निकलकर ज्योति और स्वच्छ वायु से परिपूर्ण खुले हुए देश में जब तक अपना आचरण अपने नेत्र न खोल चुका हो तब तक धर्म के गूढ़ तत्त्व कैसे समझ में आ सकते हैं। नेत्र-रहित को सूर्य से क्या लाभ? हृदय-रहित को प्रेम से क्या लाभ? बहरे को राग से क्या लाभ? कविता, साहित्य, पीर, पैगम्बर, गुरु, आचार्य, ऋषि आदि के उपदेशों से लाभ उठाने का यदि आत्मा में बल नहीं तो उनसे क्या लाभ? जब तक यह जीवन का बीज पृथिवी के मल-मूत्र के ढेर में पड़ा है अथवा जब तक वह खाद की गरमी से अंकुरित नहीं हुआ और प्रस्फुटित होकर उससे दो नये पत्ते ऊपर नहीं निकल आये, तब तक ज्योति और वायु उसके किस काम के?

वह आचरण जो धर्म-सम्प्रदायों के अनुच्चारित शब्दों को सुनाता है, हम में कहाँ? जब वही नहीं तब फिर क्यों न ये सम्प्रदाय

हमारे मानसिक महाभारतों के कुरुक्षेत्र बनें? क्यों न अप्रेम, अपवित्र, हत्या और अत्याचार इन सम्प्रदायों के नाम से हमारा खून करें। कोई भी सम्प्रदाय आचरण-रहित पुरुषों के लिए कल्याणकारक नहीं हो सकता और आचरणवाले पुरुषों के लिए सभी धर्म-सम्प्रदाय कल्याणकारक हैं। सच्चा साधु धर्म को गौरव देता है, धर्म किसी को गौरवान्वित नहीं करता।

आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका?) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के सम्बन्ध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्त्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आचरणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनायी हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनायी थी। इसी से उसके बनाये हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

यदि मुझे ईश्वर का ज्ञान नहीं तो ऐसे ज्ञान ही से क्या प्रयोजन? जब तक मैं अपना हथौड़ा ठीक-ठीक चलाता हूँ और रूपहीन लोहे को तलवार के रूप में गढ़ देता हूँ तब तक मुझे यदि ईश्वर का ज्ञान नहीं तो नहीं होने दो। उस ज्ञान से मुझे प्रयोजन ही क्या? जब तक मैं अपना उद्धार ठीक और शुद्ध रीति से किये जाता हूँ तब तक यदि मुझे आध्यात्मिक पवित्रता का ज्ञान नहीं होता तो न होने दो। उससे सिद्धि ही क्या हो सकती है? जब तक किसी जहाज के कप्तान के हृदय में इतनी वीरता भरी हुई है कि वह महाभयानक समय में अपने जहाज को नहीं छोड़ता तब तक यदि वह मेरी और तेरी दृष्टि में शराबी और स्त्रैण है तो उसे वैसा ही होने दो। उसकी बुरी बातों से हमें प्रयोजन ही क्या? आँधी हो—बरफ हो—बिजली की कड़क हो—समुद्र का तूफान हो—वह दिन रात आँख खोले अपने जहाज की रक्षा के लिए जहाज के पुल पर घूमता हुआ अपने धर्म का पालन करता है। वह अपने जहाज के साथ समुद्र में डूब जाता है, परन्तु अपना जीवन बचाने के लिए कोई उपाय नहीं करता। क्या उसके आचरण का यह अंश मेरे-तेरे बिस्तर और आसन पर बैठे-बिठाये कहे हुए निरर्थक शब्दों के भाव से कम महत्त्व का है?

न मैं किसी गिरजे में जाता हूँ और न किसी मंदिर में, न मैं नमाज पढ़ता हूँ और न रोजा ही रखता हूँ, न संध्या ही करता हूँ और न कोई देव-पूजा ही करता हूँ, न किसी आचार्य के नाम का मुझे पता है और न किसी के आगे मैंने सिर ही झुकाया है। तो इससे प्रयोजन ही क्या और इससे हानि भी क्या? मैं तो अपनी खेती करता हूँ, अपने हल और बैलों को प्रातःकाल उठकर प्रणाम करता हूँ मेरा जीवन जंगल के पेड़ों और पत्तियों की संगति में गुजरता है, आकाश के बादलों को देखते मेरा दिन निकल जाता है। मैं किसी को धोखा नहीं देता; हाँ यदि मुझे कोई धोखा दे तो उससे मेरी कोई हानि नहीं। मेरे खेत में अन्न उग रहा है, मेरा घर अन्न से भरा है, बिस्तर के लिए मुझे एक कमली काफी है, कमर के लिए लँगोटी और सिर के लिए एक टोपी बस है। हाथ-पाँव मेरे बलवान् हैं, शरीर मेरा नीरोग है, भूख खूब लगती है, बाजरा और मकई, छाछ और दही, दूध और मक्खन मुझे और मेरे बच्चों को खाने के लिए मिल जाता है। क्या इस किसान की सादगी और सच्चाई में वह मिठास नहीं जिसकी प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न धर्म सम्प्रदाय लम्बी-चौड़ी और चिकनी-चुपड़ी बातों द्वारा दीक्षा दिया करते हैं?

जब साहित्य, संगीत और कला की अति ने रोम को घोड़े से उतारकर मखमल के गद्दों पर लिटा दिया—जब आलस्य और विषय-विकार की लम्पटता ने जंगल और पहाड़ की साफ हवा के असभ्य और उद्दण्ड जीवन से रोमवालों का मुख मोड़ दिया तब रोम नरम तकियों और बिस्तरों पर ऐसा सोया कि अब तक न आप जागा और न कोई उसे जगा सका। ऐंग्लो-सैक्सन जाति ने जो उच्च पद प्राप्त किया वह उसने अपने समुद्र, जंगल और पर्वत से सम्बन्ध रखनेवाले जीवन से ही प्राप्त किया। जाति की उन्नति लड़ने-भिड़ने, मरने-मारने, लूटने और लूटे जाने, शिकार करने और शिकार होनेवाले जीवन का ही परिणाम है। लोग कहते हैं, केवल धर्म ही जाति की उन्नति करता है। यह ठीक है, परन्तु यह धर्मांकुर जो जाति को उन्नत करता है, इस असभ्य, कमीने पापमय जीवन की गंदी राख के ढेर के ऊपर नहीं उगता है। मंदिरों और गिरजों की मन्द-मन्द, टिमटिमाती हुई मोमबत्तियों की रोशनी से यूरप इस उच्चावस्था को नहीं पहुँचा। वह कठोर जीवन जिसको देश-देशान्तरों को ढूँढ़ते-फिरते रहने के बिना शान्ति नहीं मिलती; जिसकी अन्तर्ज्वाला दूसरी जातियों को जीतने, लूटने, मारने और उन पर राज करने के बिना मन्द नहीं पड़ती—केवल वही विशाल जीवन समुद्र की छाती पर मूँग दल कर और पहाड़ों को फाँद कर उनको उस महानता की ओर ले गया और ले जा रहा है। रॉबिनहुड की प्रशंसा में जो कवि अपनी सारी

शक्ति खर्च कर देते हैं उन्हें तत्त्वदर्शी कहना चाहिए, क्योंकि रॉबिनहुड जैसे भौतिक पदार्थों से ही नेलसन और बेलिंगटन जैसे अंगरेज वीरों की हड्डियाँ तैयार हुई थीं। लड़ाई के आजकल के सामान—गोला, बारूद, जंगी जहाज और तिजारती बेड़ों आदि को देखकर कहना पड़ता है कि इनसे वर्तमान सभ्यता से भी कहीं अधिक उच्च सभ्यता का जन्म होगा।

धर्म और आध्यात्मिक विद्या के पौधे को ऐसी आरोग्य-वर्धक भूमि देने के लिए, जिसमें वह प्रकाश और वायु में सदा खिलता रहे, सदा फूलता रहे, सदा फलता रहे, यह आवश्यक है कि बहुत-से हाथ एक अनन्त प्रकृति के ढेर को एकत्र करते रहें। धर्म की रक्षा के लिए क्षत्रियों को सदा ही कमर बाँधे हुए सिपाही बने रहने का भी तो यही अर्थ है। यदि कुल समुद्र का जल उड़ा दो तो रेडियम धातु का एक कण कहीं हाथ लगेगा। आचरण का रेडियम—क्या एक पुरुष का और क्या एक जाति का और क्या एक जगत् का—सारी प्रकृति को खाद बनाये बिना, सारी प्रकृति को हवा में उड़ाये बिना भला कब मिलने का है? प्रकृति को मिथ्या करके नहीं उड़ाना; उसे उड़ाकर मिथ्या करना है? समुद्रों में डोरा डालकर अमृत निकालना है। सो भी कितना? जरा-सा! संसार की खाक छानकर आचरण का स्वर्ण हाथ आता है। क्या बैठे बिठाये भी वह मिल सकता है?

हिन्दुओं का सम्बन्ध यदि किसी प्राचीन असभ्य जाति के साथ रहा होता तो उनके वर्तमान वंश में अधिक बलवान् श्रेणी के मनुष्य होते—उनमें भी ऋषि, पराक्रमी, जनरल और धीर-वीर पुरुष उत्पन्न होते। आजकल तो वे उपनिषदों के ऋषियों के पवित्रतामय प्रेम के जीवन को देख-देखकर अहंकार में मग्न हो रहे हैं और दिन-पर-दिन अधोगति की ओर जा रहे हैं। यदि वह किसी जंगली जाति की संतान होते तो उनमें भी ऋषि और बलवान् योद्धा होते। ऋषियों को पैदा करने के योग्य असभ्य पृथिवी का बन जाना तो आसान है, परन्तु ऋषियों को अपनी उन्नति के लिए राख और पृथिवी बनाना कठिन है, क्योंकि ऋषि तो केवल अनन्त प्रकृति पर सजते हैं, हमारी जैसी पुष्प-शय्या पर मुरझा जाते हैं। माना कि प्राचीन काल में, यूरप में सभी असभ्य थे, परन्तु आजकल तो हम असभ्य हैं। उनकी असभ्यता के ऊपर ऋषि-जीवन की उच्च सभ्यता फूल रही है और हमारे ऋषियों के जीवन के फूल की शय्या पर आजकल असभ्यता का रंग चढ़ा हुआ है। सदा ऋषि पैदा करते रहना अर्थात् अपनी ऊँची चोटी के ऊपर इन फूलों को सदा धारण करते रहना ही जीवन के नियमों का पालन करना है।

धर्म के आचरण की प्राप्ति यदि ऊपरी आडम्बरों से होती तो आजकल भारत-निवासी सूर्य के समान शुद्ध आचरणवाले हो जाते। भाई! माला से तो जप नहीं होता। गंगा नहाने से तो तप नहीं होता। पहाड़ों पर चढ़ने से प्राणायाम हुआ करता है, समुद्र में तैरने से नेती धुलती है; आँधी, पानी और साधारण जीवन के ऊँच-नीच, गरमी-सरदी, गरीबी-अमीरी को झेलने से तप हुआ करता है। आध्यात्मिक धर्म के स्वप्नों की शोभा तभी भली लगती है जब आदमी अपने जीवन का धर्म पालन करे। खुले समुद्र में अपने जहाज पर बैठकर ही समुद्र की आध्यात्मिक शोभा का विचार होता है। भूखे को तो चन्द्र और सूर्य भी केवल आटे की बड़ी-बड़ी दो रोटियाँ-से प्रतीत होते हैं। कुटियों में ही बैठकर धूप, आँधी और बर्फ की दिव्य शोभा का आनन्द आ सकता है। प्राकृतिक सभ्यता के आने पर ही मानसिक सभ्यता आती है और तभी वह स्थिर भी रह सकती है। मानसिक सभ्यता के होने पर ही आचरण-सभ्यता की प्राप्ति संभव है और तभी वह स्थिर भी हो सकती है। जब तक निर्धन पुरुष पाप से अपना पेट भरता है तब तक धनवान् पुरुष के शुद्धाचरण की पूरी परीक्षा नहीं। इसी प्रकार जब तक अज्ञानी का आचरण अशुद्ध है, तब तक ज्ञानवान् के आचरण की पूरी परीक्षा नहीं—तब तक जगत् में आचरण की सभ्यता का राज्य नहीं।

आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनायी देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रह्लाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारम्भ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द होते हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीठक (त्रिपिटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं। आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।

—सरदार पूर्णसिंह

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है। इस भाषा का निघण्टु शुद्ध श्वेत पत्रों वाला है। इसमें नाममात्र के लिए भी शब्द नहीं। यह सभ्याचरण नाद करता हुआ भी मौन है, व्याख्यान देता हुआ भी व्याख्यान के पीछे छिपा है, राग गाता हुआ भी राग के सुर के भीतर पड़ा है। मृदु वचनों की मिठास में आचरण की सभ्यता मौन रूप से खुली हुई है। नम्रता, दया, प्रेम और उदारता सब के सब सभ्याचरण की भाषा के मौन व्याख्यान हैं। मनुष्य के जीवन पर मौन व्याख्यान का प्रभाव चिरस्थायी होता है और उसकी आत्मा का एक अंग हो जाता है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) सभ्याचरण की व्याख्या के मौन आख्यान क्या हैं?

(iv) सभ्याचरण की मुख्य विशेषता क्या है?

(v) आचरण की सभ्यतामय भाषा कैसी है?

(ख) मौनरूपी व्याख्यान की महत्ता इतनी बलवती, इतनी अर्थवती और इतनी प्रभावती होती है कि उसके सामने क्या मातृभाषा, क्या साहित्यभाषा और क्या अन्य देश की भाषा सब की सब तुच्छ प्रतीत होती हैं। अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है। विचार करके देखो, मौन व्याख्यान किस तरह आपके हृदय की नाड़ी-नाड़ी में सुन्दरता को पिरो देता है। वह व्याख्यान ही क्या, जिसने हृदय की धुन को– मन के लक्ष्य को– ही न बदल दिया। चन्द्रमा की मंद-मंद हँसी का तारागण के कटाक्षपूर्ण प्राकृतिक मौन व्याख्यान का प्रभाव किसी कवि के दिल में घुसकर देखो। सूर्यास्त होने के पश्चात् श्रीकेशवचन्द्र सेन और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने सारी रात एक क्षण की तरह गुजार दी; यह तो कल की बात है। कमल और नरगिस में नयन देखनेवाले नेत्रों से पूछो कि मौन व्याख्यान की प्रभुता कितनी दिव्य है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) मौनरूपी व्याख्यान का क्या महत्त्व है?

(iv) आचरण की मौन भाषा का सम्बन्ध किससे है?

(v) प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का निहित भाव क्या है?

(ग) प्रेम की भाषा शब्द-रहित है। नेत्रों की, कपोलों की, मस्तक की भाषा भी शब्द-रहित है। जीवन का तत्त्व भी शब्द से परे है। सच्चा आचरण–प्रभाव, शील, अवल-स्थित संयुक्त आचरण- न तो साहित्य के लंबे व्याख्यानों से गढा जा सकता है; न वेद की श्रुतियों के मीठे उपदेश से; न अंजील से; न कुरान से; न धर्मचर्चा से; न केवल सत्संग से। जीवन के अरण्य में धँसे हुए पुरुष के हृदय पर प्रकृति और मनुष्य के जीवन के मौन व्याख्यानों के यत्न से सुनार के छोटे हथौड़े की मंद-मंद चोटों की तरह आचरण का रूप प्रत्यक्ष होता है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) प्रेम की भाषा कैसी होती है?

(iv) मानव का सदाचार किसके माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता है?

(v) प्रेम की भाषा के द्वारा हमारे हृदय के भावों को किस प्रकार प्रकट किया जाता है?

(घ) आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मन्दिर है। यह वह आम का पेड़ नहीं जिसको मदारी एक क्षण में, तुम्हारी आँखों में मिट्टी डालकर, अपनी हथेली पर जमा दे। इसके बनने में अनन्त काल लगा है। पृथिवी बन गयी, सूर्य बन गया, तारागण आकाश में दौड़ने लगे, परन्तु अभी तक आचरण के सुन्दर रूप के पूर्ण दर्शन नहीं हुए। कहीं-कहीं उसकी अत्यल्प छटा अवश्य दिखायी देती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ और लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) श्रेष्ठ आचरण बनने में कितना समय लग सकता है?

(iv) प्रस्तुत अवतरण में मदारी के क्रिया-कलाप का वर्णन किस प्रसंग में हुआ है?

(v) आचरण महिमामय और दिव्य कैसे होता है?

(ङ) मनुष्य का जीवन इतना विशाल है कि उसके आचरण को रूप देने के लिए नाना प्रकार के ऊँच-नीच और भले-बुरे विचार, अमीरी और गरीबी, उन्नति और अवनति इत्यादि सहायता पहुँचाते हैं। पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता। जो कुछ जगत् में हो रहा है वह केवल आचरण के विकास के अर्थ हो रहा है। अन्तरात्मा वही काम करती है जो बाह्य पदार्थों के संयोग का प्रतिबिम्ब होता है। जिनको हम पवित्रात्मा कहते हैं, क्या पता है, किन-किन कूपों से निकलकर वे अब उदय को प्राप्त हुए हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) प्रस्तुत गद्यांश का आशय क्या है?

(iv) आचरण की संरचना में क्या-क्या सहायक सिद्ध होते हैं?

(v) व्यक्ति की आत्मा उसे किन कार्यों को करने के लिए प्रेरणा देती है?

(च) आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है। आचरण के विकास के लिए नाना प्रकार की सामग्रियों का, जो संसार-संभूत शारीरिक, प्राकृतिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन में वर्तमान हैं, उन सबकी (सबका?) क्या एक पुरुष और क्या एक जाति के आचरण के विकास के साधनों के सम्बन्ध में विचार करना होगा। आचरण के विकास के लिए जितने कर्म हैं उन सबको आचरण के संगठनकर्त्ता धर्म के अंग मानना पड़ेगा। चाहे कोई कितना ही बड़ा महात्मा क्यों न हो, वह निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि यों ही करो, और किसी तरह नहीं। आचरण की सभ्यता की प्राप्ति के लिए वह सबको एक पथ नहीं बता सकता। आरचणशील महात्मा स्वयं भी किसी अन्य की बनायी हुई सड़क से नहीं आया, उसने अपनी सड़क स्वयं ही बनायी थी। इसी से उसके बनाये हुए रास्ते पर चलकर हम भी अपने आचरण को आदर्श के ढाँचे में नहीं ढाल सकते। हमें अपना रास्ता अपने जीवन की कुदाली की एक-एक चोट से रात-दिन बनाना पड़ेगा और उसी पर चलना भी पड़ेगा। हर किसी को अपने देश-कालानुसार रामप्राप्ति के लिए अपनी नैया आप ही बनानी पड़ेगी और आप ही चलानी भी पड़ेगी।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) जीवन का परम उद्देश्य क्या है?

(iv) आचरण की सभ्यता के लिए हमें क्या करना चाहिए?

(v) प्रस्तुत अवतरण में लेखक का निहित भाव क्या है?

(छ) आचरण की सभ्यता का देश ही निराला है। उसमें न शारीरिक झगड़े हैं, न मानसिक, न आध्यात्मिक। न उसमें विद्रोह है, न जंग ही का नामोनिशान है और न वहाँ कोई ऊँचा है, न नीचा। न कोई वहाँ धनवान् है और न कोई वहाँ निर्धन। वहाँ प्रकृति का नाम नहीं, वहाँ तो प्रेम और एकता का अखंड राज्य रहता है। जिस समय आचरण की सभ्यता संसार में आती है उस समय नीले आकाश से मनुष्य को वेद-ध्वनि सुनायी देती है, नर-नारी पुष्पवत् खिलते जाते हैं, प्रभात हो जाता है, प्रभात का गजर बज जाता है, नारद की वीणा अलापने लगती है, ध्रुव का शंख गूँज उठता है, प्रहलाद का नृत्य होता है, शिव का डमरू बजता है, कृष्ण की बाँसुरी की धुन प्रारम्भ हो जाती है। जहाँ ऐसे शब्द होते हैं, जहाँ ऐसे पुरुष रहते हैं, वहाँ ऐसी ज्योति

होती है, वही आचरण की सभ्यता का सुनहरा देश है। वही देश मनुष्य का स्वदेश है। जब तक घर न पहुँच जाय, सोना अच्छा नहीं, चाहे वेदों में, चाहे इंजील में, चाहे कुरान में, चाहे त्रिपीठक (त्रिपिटक) में, चाहे इस स्थान में, चाहे उस स्थान में, कहीं भी सोना अच्छा नहीं । आलस्य मृत्यु है। लेख तो पेड़ों के चित्र सदृश होते हैं, पेड़ तो होते ही नहीं जो फल लावें। लेखक ने यह चित्र इसलिए भेजा है कि सरस्वती में चित्र को देखकर शायद कोई असली पेड़ को जाकर देखने का यत्न करे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आचरण की सभ्यता का देश कैसा है?

(iv) प्रस्तुत अवतरण में आलस्य को क्या बताया गया है?

(v) गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सरदार पूर्णसिंह की भाषा-शैली बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. सरदार पूर्णसिंह का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. सरदार पूर्णसिंह का परिचय निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर दीजिए–
   (क) जन्म-तिथि एवं स्थान, शिक्षा-दीक्षा और साहित्यिक योगदान।
   (ख) प्रमुख कृतियाँ।
4. हिन्दी निबन्ध के इतिहास में सरदार पूर्णसिंह का महत्त्व प्रतिपादित कीजिए।
5. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
6. सरदार पूर्णसिंह का परिचय, साहित्यिक योगदान एवं प्रमुख रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
7. सरदार पूर्णसिंह का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
8. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) आचरण की सभ्यतामय भाषा सदा मौन रहती है।
   (ख) प्रेम की भाषा शब्द-रहित है।
   (ग) आचरण भी हिमालय की तरह एक ऊँचे कलशवाला मंदिर है।
   (घ) पवित्र अपवित्रता उतनी ही बलवती है, जितनी कि पवित्र पवित्रता।
   (ङ) आचरण का विकास जीवन का परमोद्देश्य है।
   (च) मानसिक सभ्यता के होने पर ही आचरण की सभ्यता की प्राप्ति सम्भव है।
   (छ) प्रभाव शब्द का नहीं पड़ता–प्रभाव तो सदा आचरण का पड़ता है।
   (ज) अन्य कोई भाषा दिव्य नहीं, केवल आचरण की मौन भाषा ही ईश्वरीय है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बुद्धदेव, ईसा और महाप्रभु चैतन्य कौन थे? आचरण की सभ्यता से इनका क्या सम्बन्ध था?
2. "आचरण का विकास जीवन का परम उद्देश्य है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. 'आचरण की सभ्यता' में आत्म-व्यंजना का क्या महत्त्व है? संक्षेप में लिखिए।
4. "अध्यापक पूर्णसिंह अपने निबंधों में विदेशी शब्दों को बेझिझक ग्रहण करते हैं, लेकिन उससे निबंध के प्रवाह में अवरोध नहीं उत्पन्न होता।" इस कथन पर आप अपना संक्षिप्त विचार प्रकट कीजिए।
5. 'आचरण की सभ्यता' पाठ का मुख्य संदेश क्या है?
6. 'आचरण की सभ्यता' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
7. 'आचरण की सभ्यता' के लेखक ने आचरण के विकास के लिए किन बातों पर बल दिया है?
8. "आचरण का विकास जीवन का परम उद्देश्य है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

●●●

5 डॉ० सम्पूर्णानन्द

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री, कुशल राजनीतिज्ञ एवं मर्मज्ञ साहित्यकार डॉ0 सम्पूर्णानन्द का जन्म 1 जनवरी, 1890 ई0 को काशी में हुआ था। इन्होंने क्वीन्स कालेज, वाराणसी से बी0एस-सी0 की परीक्षा पास करने के बाद ट्रेनिंग कालेज, इलाहाबाद से एल0 टी0 किया। इन्होंने एक अध्यापक के रूप में जीवन-क्षेत्र में प्रवेश किया और सबसे पहले प्रेम महाविद्यालय, वृन्दावन में अध्यापक हुए। कुछ दिनों बाद इनकी नियुक्ति डूंगर कालेज, बीकानेर में प्रिंसिपल के पद पर हुई। सन् 1921 में महात्मा गाँधी के राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरित होकर काशी लौट आये और 'ज्ञान मंडल' में काम करने लगे। इन्हीं दिनों इन्होंने 'मर्यादा' (मासिक) और 'टुडे' (अंग्रेजी दैनिक) का सम्पादन किया।

इन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रथम पंक्ति के सेनानी के रूप में कार्य किया और सन् 1936 में प्रथम बार कांग्रेस के टिकट पर विधानसभा के सदस्य चुने गये। सन् 1937 में कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित होने पर ये उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री नियुक्त हुए। सन् 1955 में ये उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। सन् 1960 में इन्होंने मुख्यमंत्री पद से त्याग-पत्र दे दिया। सन् 1962 में ये राजस्थान के राज्यपाल नियुक्त हुए। सन् 1967 में राज्यपाल पद से मुक्त होने पर ये काशी लौट आये और मृत्युपर्यन्त काशी विद्यापीठ के कुलपति बने रहे। 10 जनवरी, 1969 ई0 को काशी में ही इस साहित्य-तपस्वी का निधन हो गया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—1 जनवरी, सन् 1890 ई0।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ0 प्र0)।
- **पिता**—विजयानन्द।
- **प्रमुख रचनाएँ**—चिद्विलास, पृथ्वी से सप्तर्षि मण्डल, देशबन्धु चितरंजनदास, महात्मा गाँधी, चीन की राज्यक्रान्ति, समाजवाद, आर्यों का आदि देश।
- **शिक्षा**—बी॰एस-सी॰, एल॰टी॰, अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी भाषा पर अधिकार।
- **लेखन विधा**—निबन्ध संग्रह, फुटकर निबन्ध, जीवनी, पत्रिका आदि।
- **भाषा**—शुद्ध साहित्यिक हिन्दी भाषा।
- **शैली**—विचारात्मक, गवेषणात्मक, व्याख्यात्मक, काव्यात्मक, आलंकारिक।
- **आजीविका**—प्रेम महाविद्यालय, वृन्दावन में अध्यापक व डूँगर कॉलेज, बीकानेर में प्रिंसिपल।
  उ॰प्र॰ के शिक्षा मंत्री, गृहमंत्री, मुख्यमंत्री एवं राज्यपाल रहे।
- **सम्पादन**—'मर्यादा', 'टुडे' (अंग्रेजी पत्रिका)।
- **मृत्यु**—10 जनवरी, सन् 1969 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—सम्पूर्णानन्द जी हिन्दी के प्रकाण्ड पण्डित, कुशल राजनीतिज्ञ, मर्मज्ञ साहित्यकार, भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के ज्ञाता, गंभीर विचारक, जागरूक शिक्षाविद् के रूप में जाने जाते हैं।

डॉ0 सम्पूर्णानन्द एक उद्भट विद्वान् थे। हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी तीनों भाषाओं पर इनका समान अधिकार था। ये उर्दू और फारसी के भी अच्छे ज्ञाता थे। विज्ञान, दर्शन और योग इनके प्रिय विषय थे। इन्होंने इतिहास, राजनीति और ज्योतिष

का भी अच्छा अध्ययन किया था। राजनीतिक कार्यों में उलझे रहने पर भी इनका अध्ययन-क्रम बराबर बना रहा। सन् 1940 में ये अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति निर्वाचित हुए थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने इनकी **'समाजवाद'** कृति पर इनको मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया था। इनको सम्मेलन की सर्वोच्च उपाधि साहित्य वाचस्पति भी प्राप्त हुई थी। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के भी ये अध्यक्ष और संरक्षक थे। उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री और मुख्यमंत्री के रूप में इन्होंने शिक्षा, कला और साहित्य की उन्नति के लिए अनेक उपयोगी कार्य किये। वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय इनकी ही देन है।

डॉ॰ सम्पूर्णानन्द जी ने विविध विषयों पर लगभग 25 ग्रंथों की तथा अनेक फुटकर लेखों की रचना की थी।

डॉ॰ सम्पूर्णानन्द की प्रसिद्ध कृतियाँ निम्नलिखित हैं :

निबन्ध-संग्रह—'पृथ्वी से सप्तर्षि मण्डल', 'चिद्विलास', 'ज्योतिर्विनोद', 'अंतरिक्ष यात्रा'।

फुटकर निबन्ध—'जीवन और दर्शन'।

जीवनी—'देशबन्धु चितरंजनदास', 'महात्मा गांधी'।

राजनीति और इतिहास—'चीन की राज्यक्रान्ति', 'मिस्र की राज्यक्रान्ति', 'समाजवाद', 'आर्यों का आदि देश', 'सम्राट हर्षवर्द्धन', 'भारत के देशी राज्य' आदि।

धर्म—'गणेश', 'नासदीय सूक्त की टीका', 'ब्राह्मण सावधान'।

अन्य रचनाएँ—'अंतर्राष्ट्रीय विधान', 'पुरुष सूक्त', 'व्रात्यकाण्ड', 'भारतीय सृष्टि क्रम विचार', 'स्फुट विचार', 'हिन्दू देव परिवार का विकास', 'वेदार्थ प्रवेशिका', 'अधूरी क्रान्ति', 'भाषा की शक्ति तथा अन्य निबन्ध'।

इनकी शैली शुद्ध, परिष्कृत एवं साहित्यिक है। इन्होंने विषयों का विवेचन तर्कपूर्ण शैली में किया है। विषय प्रतिपादन की दृष्टि से इनकी शैली के तीन रूप (1) विचारात्मक, (2) व्याख्यात्मक तथा (3) ओजपूर्ण लक्षित होते हैं।

विचारात्मक शैली–इस शैली के अन्तर्गत इनके स्वतंत्र एवं मौलिक विचारों की अभिव्यक्ति हुई है। भाषा विषयानुकूल एवं प्रवाहपूर्ण है। वाक्यों का विधान लघु है, परन्तु प्रवाह तथा ओज सर्वत्र विद्यमान है।

व्याख्यात्मक शैली–दार्शनिक विषयों के प्रतिपादन के लिए इस शैली का प्रयोग किया गया है। भाषा सरल एवं संयत है। उदाहरणों के प्रयोग द्वारा विषय को अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

ओजपूर्ण शैली–इस शैली में इन्होंने मौलिक निबंध लिखे हैं। ओज की प्रधानता है। वाक्यों का गठन सुन्दर है। भाषा व्यावहारिक है।

इनकी भाषा सबल, सजीव, साहित्यिक, प्रौढ़ एवं प्राञ्जल है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किया गया है। गंभीर विषयों के विवेचन में भाषा विषयानुकूल गंभीर हो गयी है। कहावतों और मुहावरों का प्रयोग प्रायः नहीं किया गया है। शब्दों का चुनाव भावों और विचारों के अनुरूप किया गया है। भाषा में सर्वत्र प्रवाह, सौष्ठव और प्राञ्जलता विद्यमान है।

प्रस्तुत **'शिक्षा का उद्देश्य'** शीर्षक निबंध सम्पूर्णानन्द जी के **'भाषा की शक्ति'** नामक संग्रह से संकलित है। इस पाठ में लेखक ने 'शिक्षा के उद्देश्य' पर मौलिक ढंग से अपना विचार व्यक्त किया और प्राचीन आदर्शों को ही सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया है। लेखक ने इस पाठ में अध्यापकों का कर्त्तव्य बताते हुए स्पष्ट किया है कि अध्यापक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य छात्रों में चरित्र का विकास करना और उनमें लोक-कल्याण की भावना जाग्रत करना है।

●●

शिक्षा का उद्देश्य

अध्यापक और समाज के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है शिक्षा किसलिए दी जाय? शिक्षा का जैसा उद्देश्य होगा, तदनुसार ही पाठ्य विषयों का चुनाव होगा। पर शिक्षा का उद्देश्य स्वतंत्र नहीं है। वह इस बात पर निर्भर है कि मनुष्य-जीवन का उद्देश्य—मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ—क्या है। मनुष्य को उस पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है।

पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुम्बिक व्यवस्था का व्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकरायेंगे। जो बात एक क्षेत्र में ठीक जँचेगी वही दूसरे क्षेत्र में अनुचित कहलायेगी और मनुष्य के लिए अपना कर्त्तव्य स्थिर करना कठिन हो जायेगा। इसका तमाशा आज दीख पड़ रहा है। चोरी करना बुरा है पर पराये देश का शोषण करना बुरा नहीं। झूठ बोलना बुरा है पर राजनीतिक क्षेत्र में सच बोलने पर अड़े रहना मूर्खता है। घरवालों के साथ, देशवासियों के साथ और परदेशियों के साथ बर्ताव करने के लिए अलग-अलग आचारावलियाँ बन गयी हैं। इससे विवेकशील मनुष्य को कष्ट होता है। पग-पग पर धर्म-संकट में पड़ जाता है कि क्या करूँ। कल्याण इसी में है कि खूब सोच-विचारकर एक व्यापक दार्शनिक मत अंगीकार किया जाय और फिर सारे व्यवहार की नींव बनाया जाय। यह असंभव प्रयत्न नहीं है। प्राचीन भारत ने वर्णाश्रम धर्म इसी प्रकार स्थापित किया था। वर्तमान काल में रूस ने मार्क्सवाद को अपने राष्ट्रीय जीवन की सभी चेष्टाओं का केन्द्र बनाया है। ऐसा करने से सभी उद्योग एकसूत्र में बँध जाते हैं और आदर्शों और कर्त्तव्यों के टकराने की संभावना बहुत ही कम हो जाती है।

इस निबंध में दार्शनिक शास्त्रार्थ के लिए स्थान नहीं है। मैं यहाँ इतना कह सकता हूँ कि मेरी समझ में भारतीय संस्कृति ने पुराने काल में अपने लिए आधार ढूँढ़ निकाला था, वह अब भी वैसा ही श्रेयस्कर है क्योंकि उसका सश्रय शाश्वत है।

आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनन्त ज्ञान, शक्ति और आनन्द का भण्डार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनन्द भी होता है। परन्तु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है। भीतर से ऐसा प्रतीत होता है जैसे कुछ खोया हुआ है; परन्तु यह नहीं समझ में आता कि क्या खो गया है। उसे खोयी हुई वस्तु की, अपने स्वरूप की, निरन्तर खोज रहती है। आत्मा अनजान में भटका करता है, कभी इस विषय की ओर दौड़ता है, कभी उसकी ओर; परन्तु किसी की प्राप्ति से तृप्ति नहीं होती, क्योंकि अपना स्वरूप इन विषयों में नहीं है। जब तक आत्मसाक्षात्कार न होगा, तब तक अपूर्णता की अनुभूति बनी रहेगी और आनन्द की खोज जारी रहेगी। इस खोज में सफलता, आनन्द की प्राप्ति, अपने परम ज्ञानमय स्वरूप में स्थिति यही मनुष्य का पुरुषार्थ, उसके जीवन का चरम लक्ष्य है और उसको इस पुरुषार्थ-साधन के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। वह राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था सबसे अच्छी है जिससे पुरुषार्थ-सिद्धि में सहायता मिल सके; कम-से-कम बाधाएँ तो न्यूनतम हों।

आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परन्तु इतना किया

जा सकता है—और यही समाज और अध्यापक का कर्त्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।

यहाँ पाठ्य-विषयों की चर्चा करना अनावश्यक है; वह ब्यौरे की बात है। परन्तु चरित्र का विकास ब्यौरे की बात नहीं है। उसका महत्त्व सर्वोपरि है। चरित्र शब्द का भी व्यापक अर्थ लेना होगा। पुरुषार्थ को सामने रखकर ही चरित्र सँवारा जा सकता है। प्रत्येक छात्र की आत्मा अपने को ढूँढ़ रही है, पर उसे इसका पता नहीं। अज्ञानवशात् वह उस आनन्द को, जो उसका अपना स्वरूप है, बाहरी चीजों में ढूँढ़ती है। जब कोई अभिलषित वस्तु मिल जाती है तो थोड़ी देर के लिए सुख का अनुभव होता है; परन्तु थोड़ी ही देर बाद चित्त किसी और वस्तु की ओर जा दौड़ता है; क्योंकि जिसकी खोज है वह कहीं मिलता नहीं। सब इसी खोज में हैं। ऐसी दशा में आपस में संघर्ष होना स्वाभाविक है। यदि दस आदमी अँधेरी कोठरी में टटोलते फिरेंगे तो बिना टकराये रह नहीं सकते। एक ही वस्तु की अभिलाषा जब दो या अधिक मनुष्य करेंगे तो उनमें अवश्य मुठभेड़ होगी। चीज का उपयोग तो कोई एक ही कर सकेगा। इस प्रकार ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध बढ़ते रहते हैं। ज्ञान और शक्ति की कमी से सफलता कम ही मिलती है। इससे अपने ऊपर ग्लानि होती है, दृश्यमान के नीचे एक मूक वेदना टीसती रहती है।

यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःख देखकर दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है। निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है। ये बातें हँसी-खेल नहीं हैं; परन्तु चित्त को उधर फेरना तो होगा ही, सफलता चाहे बहुत धीरे ही प्राप्त हो। इस प्रकार का प्रयास भी मनुष्य को ऊपर उठाता है। निष्कामिता की कुंजी यह है कि अपना खयाल कम और दूसरों का अधिक किया जाय। आरम्भ से ही परार्थ साधन, लोक-संग्रह और जीव-सेवा के भाव उत्पन्न किये जायँ। जब कभी मनुष्य से थोड़ी देर के लिए सच्ची सेवा बन पड़ती है तो उसे बड़ा आनन्द मिलता है : भूखे को अन्न देते समय, जलते या डूबते को बचाते समय, रोगी की शुश्रूषा करते समय कुछ देर के लिए उसके साथ तन्मयता हो जाती है। 'मैं' 'पर' का भाव तिरोहित हो जाता है। उस समय अपने 'स्व' की एक झलक मिल जाती है। 'मैं' 'तू' के कृत्रिम भेदों के परे जो अपना सर्वात्मक, शुद्ध स्वरूप है, उसका साक्षात्कार हो जाता है। जो जितने ही बड़े क्षेत्र के साथ तन्मयता प्राप्त कर सकेगा, उसको आनन्द और स्वरूप-दर्शन की उतनी ही उपलब्धि होगी। हमारी सुविधा और चरित्र-निर्माण के लिए यह तो नहीं हो सकता कि लोग आये दिन डूबा और जला करें या भूख-प्यास से तड़पा करें, परन्तु सेवा के अवसरों की कमी भी नहीं होती। सेवा करने में भाव यह न होना चाहिए कि मैं इसका उपकार कर रहा हूँ, वरन् यह कि इसकी बड़ी कृपा है जो मेरी तुच्छ सेवा स्वीकार कर रहा है। यह भी याद रहे कि सेवा केवल मनुष्य की नहीं, जीव मात्र की करनी है। पशु-पक्षी, कीट-पतंग के भी स्वत्व होते हैं, उनका भी आदर करना है।

चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इन्द्रियों के बन्धन ढीले पड़ गये होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कामोद्दीपन के लिए किया जाता है, परन्तु वह शान्त रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक का कर्त्तव्य है कि छात्र में सौन्दर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौन्दर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से प्रयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौन्दर्य की अनुभूति नहीं होती। सौन्दर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

कहने का तात्पर्य यह है कि छात्र के चरित्र को इस प्रकार विकास देना है कि वह 'मैं' 'तू' के ऊपर उठ सके। जहाँ तक उपयोग का भाव रहेगा, वहाँ तक साम्य की आकांक्षा होगी। वह वस्तु मेरी होकर रहे—इसी में संघर्ष और कलह होता है। परन्तु सेवा और सुकृत में संघर्ष नहीं हो सकता। हम, तुम, सौ आदमी सच बोलें—धर्माचरण करें, उपासना करें, लोगों के दुःख निवारण करें, इसमें कोई झगड़ा नहीं है। परन्तु इस वस्तु को मैं लूँ या तुम, यह झगड़े का विषय हो सकता है, क्योंकि एक

वस्तु का उपयोग एक समय में प्रायः एक ही मनुष्य कर सकता है। गाना हो रहा हो, आकाश में तारे खिले हों, फूलों के सुवास से लदी समीर बह रही हो, इनके सुख को युगपत् हजारों व्यक्ति ले सकते हैं। काव्यपाठ से मुझको आनन्द होता है वह आपके आनन्द को कम नहीं करता। इसलिए प्राचीन आचार्यों ने धर्म की दीक्षा दी थी। आज भी अध्यापक को चाहे उसका विषय गणित हो या भूगोल, इतिहास हो या तर्कशास्त्र, अपने शिष्यों में धर्म की प्रवृत्ति उत्पन्न करनी चाहिए। धर्म का तात्पर्य पूजा-पाठ नहीं है। धर्म उन सब कामों की समष्टि का नाम है जो कल्याणकारी है। अपना कल्याण समाज के कल्याण से पृथक् नहीं हो सकता। मनुष्य के बहुत से ऐसे गुण हैं जिनका विकास समाज में ही रहकर होता है और बहुत से ऐसे भोग और सुख हैं जो समाज में प्राप्त हो सकते हैं। इसलिए समाज को ध्यान में रखकर ही धर्म का आदेश होता है, परन्तु हमारे समाज में केवल मनुष्य नहीं हैं। हम जिस समाज के अंग हैं उसमें देव भी हैं, पशु भी हैं, मनुष्य भी। इन सबका हम पर प्रभाव पड़ता है, सबका हमारे ऊपर ऋण है, इसलिए सबके प्रति हमारा कर्त्तव्य है। हमको इस प्रकार रहना है कि हमारे पूर्वज संस्कृति का जो प्रकाश हमारे लिए छोड़ गये हैं उनका लोप न होने पाये—हमारे पीछे आनेवालों तक वह पहुँच जाय। इसलिए हमारे कर्त्तव्यों की डोर पितरों से लेकर वंशजों तक पहुँचती है। इसी विस्तृत कर्त्तव्य-राशि को धर्म कहते हैं। आज सब अपने-अपने अधिकारों के लिए लड़ते हैं। इस झगड़े का अन्त नहीं हो सकता। यदि धर्मबुद्धि जगायी जाय और सब अपने-अपने कर्त्तव्यों में तत्पर हो जायँ तो विवाद की जड़ ही कट जाय और सबको अपने उचित अधिकार स्वतः प्राप्त हो जायँ, और लोग हमारे साथ कैसा व्यवहार करते हैं—इसकी ओर कम और हम खुद औरों के साथ कैसा आचरण करें—इसकी ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

परन्तु इस बुद्धि की जड़ तभी दृढ़ हो सकती है, जब चित्त में सत्य के लिए निर्बाध प्रेम हो। सभी शास्त्र इस प्रेम को उत्पन्न कर सकते हैं, पर शर्त यह है कि ज्ञान औषध की घूँट की भाँति ऊपर से न पिला दिया गया हो। सत्य को धारण करने के लिए अनुसंधान और आलोचना की बुद्धि का उद्‌बोधन होना चाहिए। वह बुद्धि निर्भयता के वातावरण में ही पनप सकती है। अध्यापक को यथाशक्य यह वातावरण उत्पन्न करना है।

इससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि अध्यापक को अपने छात्र में कैसा चरित्र विकसित करने का प्रयत्न करना चाहिए। अच्छे उपाध्याय के निकट पढ़ा हुआ स्नातक सत्य का प्रेमी और खोजी होगा। उसके चित्त में जिज्ञासा-ज्ञान का आदर होगा और हृदय में नम्रता, अनसूया, प्राणिमात्र के लिए सौहार्द। वह तपस्वी, संयमी और परिश्रमी होगा। सौन्दर्य का उपासक होगा और हर प्रकार के अन्याय, अत्याचार और कदाचार का निर्मम विरोधी होगा। धर्म और त्याग उसके जीवन की प्रबल प्रेरक शक्तियाँ होंगी। उसका सदैव यह प्रयत्न होगा कि यह पृथिवी अधिक सभ्य और संस्कृत हो, समाज अधिक उन्नत हो। इसका तात्पर्य यह नहीं कि सब संन्यासी होंगे। गृहस्थ पर धर्म का भार संन्यासी से कम नहीं होता। व्यापार, शासन, कुटुम्ब के क्षेत्रों में भी धर्म का स्थान है। यह भी दावा नहीं किया जा सकता कि इन लोगों में राग-द्वेष का नितान्त अभाव हो जायेगा, कोई दुराचारी होगा ही नहीं। अध्यापक और समाज प्रयत्न-मात्र कर सकते हैं। इस प्रयत्न का इतना परिणाम तो निःसंदेह होगा कि बहुत से लोग ठीक राह पर लग जायेंगे और अपने पुरुषार्थ को पहचानने लगेंगे। पथभ्रष्ट भी होंगे, गिरेंगे भी, पर अपनी भूलों पर आप ही पश्चात्ताप करेंगे और इन गलतियों की सीढ़ी बनाकर आत्मोन्नति करेंगे। भूल करना बुरा नहीं है, भूल को भूल न समझना ही बड़ा दुर्भाग्य है।

यह मानी हुई बात है कि अकेला अध्यापक ऐसा मनोभाव नहीं उत्पन्न कर सकता। उसको सफलता तभी मिल सकती है जब समाज उसकी सहायता करे। जिस प्रदेश में कलह मचा रहता हो, जिस समाज में गरीब-अमीर, ऊँच-नीच की विषमता पुकार-पुकार कर द्वंद्व और प्रतियोगिता को प्रोत्साहन दे रही हो, जिस राष्ट्र की नीति परस्वत्वापहरण और शोषण पर खड़ी हो उसके अध्यापक भला क्या करें। जिन घरों में दाल-रोटी का ठिकाना न हो, पिता मद्यप और माता स्वैरिणी हो, माँ-बाप में मार-पीट, गाली-गलौज मची रहती हो, उसके बच्चों को पालने ही में मानस-विष दे दिया जाता है। तंग गलियों और गंदे घरों में रहनेवाले, जो छोटे वय से अश्लीलता और अभद्रता में ही पले हैं, सौन्दर्य को जल्दी नहीं समझ पाते। ऐसी दशा में अध्यापक को दोष देना अन्याय है। फिर भी अध्यापक परिस्थितियों को दोष देकर बैठा नहीं रह सकता। उसको तो अपना कर्त्तव्य-पालन करना ही है, सफलता कम हो या अधिक।

साधारणतः शिक्षक योगी नहीं होता, पर उसका भाव वही होना चाहिए जो किसी योगी का अपने शिष्य के प्रति होता है—अनेक शरीरों में भ्रमते हुए आज इसने नर देह पायी है और मेरे पास छात्र रूप में आया है। यदि मैं इसको ठीक मार्ग पर लगा सका, इसके चरित्र के यथोचित विकास प्राप्त करने में बल जुटा सका, तो समाज का भला होगा और इसका न केवल ऐहिक वरन् आमुष्मिक कल्याण होगा। यदि इसे आगे शरीर धारण करना भी पड़ा तो वह जन्म इस जन्म से ऊँचे होंगे। इस समय वह बात-बात में परिस्थितियों से अभिभूत हो जाता है। इसकी स्वतन्त्र आत्मा प्रतिक्षण अपने बन्धनों को तोड़ना चाहती है, पर ऐसा कर नहीं पाती। यदि इसकी बुद्धि को शुद्ध किया जाय और क्षुद्र वासनाओं से ऊपर उठाया जाय, तो आत्मा परिस्थितियों पर विजय पाने में समर्थ होने लगेगी और इसको अपने ज्ञान-शक्ति आनन्दमय स्वरूप का आभास मिलने लगेगा। इस प्रकार वह अपने परम पुरुषार्थ को सिद्ध करने का अधिकारी बन सकेगा। इस भावना से जो अध्यापक प्रेरित होगा वह अपने शिष्य के कामों को उसी दृष्टि से देखेगा जिससे बड़ा भाई अपने घुटने के बल चलनेवाले छोटे भाई की चेष्टाओं को देखता है। उसकी भूलों को तो ठीक करना ही होगा परन्तु सहानुभूति और प्रेम के साथ।

यह आदर्श बहुत ऊँचा है, पर अध्यापक का पद भी कम ऊँचा नहीं है। जो वेतन का लोलुप है और वेतन की मात्रा के अनुसार ही काम करना चाहता है उसके लिए इसमें जगह नहीं है। अध्यापक का जो कर्त्तव्य है उसका मूल्य रुपयों में नहीं आँका जा सकता। किसी समय जो शिक्षक होता था, वही धर्म-गुरु और पुरोहित भी होता था और जो बड़ा विद्वान् और तपस्वी होता था, वही इस भार को उठाया करता था। शिष्य को ब्रह्म-विद्या का पात्र और यजमान को दिव्यलोकों का अधिकारी बनाना सबका काम नहीं है। आज न वह धर्म-गुरु रहे न पुरोहित। पर क्या हम शिक्षक भी इसीलिए कर्त्तव्यच्युत हो जायँ? हमको अपने सामने वही आदर्श रखना चाहिए और अपने को उस दायित्व का बोझ उठाने योग्य बनाने का निरन्तर अथक प्रयत्न करना चाहिए।

—डॉ० सम्पूर्णानन्द

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है, पर दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह थोड़े से विद्यार्थियों का पाठ्य विषय मात्र नहीं है। प्रत्येक समाज को एक दार्शनिक मत स्वीकार करना होगा। उसी के आधार पर उसकी राजनीतिक, सामाजिक और कौटुम्बिक व्यवस्था का व्यूह खड़ा होगा। जो समाज अपने वैयक्तिक और सामूहिक जीवन को केवल प्रतीयमान उपयोगिता के आधार पर चलाना चाहेगा उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। एक विभाग के आदर्श दूसरे विभाग के आदर्श से टकरायेंगे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पुरुषार्थ किस प्रकार का विषय है?

(iv) पुरुषार्थ और दर्शन का सम्बन्ध किससे है?

(v) प्रत्येक समाज को दार्शनिक मत क्यों स्वीकार करना चाहिए?

(ख) आत्मा अजर और अमर है। उसमें अनन्त ज्ञान, शक्ति और आनन्द का भण्डार है। अकेले ज्ञान कहना भी पर्याप्त हो सकता है क्योंकि जहाँ ज्ञान होता है वहाँ शक्ति होती है, और जहाँ ज्ञान और शक्ति होते हैं वहाँ आनन्द भी होता है। परन्तु अविद्यावशात् वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। इसी से अपने को अल्पज्ञ पाता है। अल्पज्ञता के साथ-साथ शक्तिमत्ता आती है और इसका परिणाम दुःख होता है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आत्मा को क्या माना गया है?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश में किसका वर्णन किया गया है?

(v) इस गद्यांश में आनन्द की कुंजी किसे बताया गया है?

(ग) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है। योगाभ्यास सिखाने का प्रबंध राज्य नहीं कर सकता, न पाठशाला का अध्यापक ही इसका दायित्व ले सकता है। जो इस विद्या का खोजी होगा वह अपने लिए गुरु ढूँढ़ लेगा। परन्तु इतना किया जा सकता है– और यही समाज और अध्यापक का कर्त्तव्य है कि व्यक्ति के अधिकारी बनने में सहायता दी जाय, अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जाय।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन क्या है?

(iv) समाज और अध्यापक का क्या कर्त्तव्य है?

(v) उपर्युक्त गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

(घ) यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास डाले। एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाय और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाय। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना, मैत्री और दुःख देखकर दुःखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों यह भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष की कमी होती है निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) गद्यांश के अनुसार अध्यापक का प्रमुख कर्त्तव्य क्या है?

(iv) आत्मसाक्षात्कार की कुंजी क्या है?

(v) गद्यांश के अनुसार करुणा क्या है?

(ङ) चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है। काव्य, चित्र, संगीत आदि का जिस समय रस मिला करता है उस समय भी शरीर और इन्द्रियों के बन्धन ढीले पड़ गये होते हैं और चित्त आध्यात्मिक जगत् में खिंच जाता है। यही बात प्रकृति के निरीक्षण से भी होती है। प्रकृति का उपयोग निकृष्ट कोटि के काव्य में कामोद्दीपन के लिए किया जाता है, परन्तु वह शान्त रस का भी उद्दीपन करता है। अध्यापक का कर्त्तव्य है कि छात्र में सौन्दर्य के प्रति प्रेम उत्पन्न करे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सौन्दर्य-प्रेम भी निष्काम होता है। जहाँ तक यह भाव रहता है कि मैं इसका अमुक प्रकार से प्रयोग करूँ, वहाँ तक उसके सौन्दर्य की अनुभूति नहीं होती। सौन्दर्य के प्रत्यक्ष का स्वरूप तो यह है कि द्रष्टा अपने को भूलकर तन्मय हो जाय।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत अवतरण के अनुसार अध्यापक का क्या कर्त्तव्य है?
(iv) गद्यांश के अनुसार कला को किसका साधन बताया गया है?
(v) प्रस्तुत गद्यांश में किसके महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'शिक्षा का उद्देश्य' पाठ का सारांश लिखिए।
2. डॉ० सम्पूर्णानन्द की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. डॉ० सम्पूर्णानन्द की जीवनी बताते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
4. डॉ० सम्पूर्णानन्द का साहित्यिक परिचय दीजिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) आत्मसाक्षात्कार का मुख्य साधन योगाभ्यास है।
   (ख) एकाग्रता ही आत्मसाक्षात्कार की कुंजी है।
   (ग) जहाँ ज्ञान होता है, वहाँ शक्ति होती है।
   (घ) आत्मा अजर-अमर है।
   (ङ) पुरुषार्थ दार्शनिक विषय है।
   (च) दर्शन का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है।
   (छ) भूल करना बुरा नहीं है, भूल को भूल न समझना ही बड़ा दुर्भाग्य है।
   (ज) निष्कामिता की कुंजी यह है कि अपना ख़्याल कम और दूसरों का अधिक किया जाय।
   (झ) चित्त को क्षुद्र वासनाओं से विरत करने का एक बहुत बड़ा साधन कला है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "मनुष्य को पुरुषार्थ की सिद्धि के योग्य बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है", इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं?
2. लेखक के विचार से मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ क्या है?
3. शिक्षा किस प्रकार चरित्र-निर्माण में सहायक होती है? अध्यापकों को अपने छात्रों में किन-किन गुणों का विकास करना चाहिए?
4. 'धर्म' की व्यापकता को लेखक ने किस प्रकार स्पष्ट किया है?
5. पठित निबन्ध के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
6. हमारी सामाजिक दशा का शिक्षक और विद्यार्थी पर क्या प्रभाव पड़ता है?
7. शिक्षक को किन आदर्शों की सिद्धि के लिए निरन्तर जागरूक रहना चाहिए?
8. 'शिक्षा का उद्देश्य' पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि आदर्श शिक्षक में क्या गुण होने चाहिए?
9. आधुनिक युग में शिक्षा का क्या उद्देश्य है, इस सन्दर्भ में डॉ० सम्पूर्णानन्दजी का दृष्टिकोण स्पष्ट कीजिए।
10. 'शिक्षा का उद्देश्य' नामक पाठ की मुख्य विशेषताएँ बताइए।
11. 'शिक्षा का उद्देश्य' निबन्ध का सार अपने शब्दों में लिखिए।
12. 'शिक्षा का उद्देश्य' नामक निबन्ध में सम्पूर्णानन्द ने किन बिन्दुओं पर अधिक जोर दिया है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

6 राय कृष्णदास

राय कृष्णदास का जन्म काशी के प्रसिद्ध राय परिवार में सन् 1892 ई० में हुआ था। यह परिवार कला, संस्कृति और साहित्य-प्रेम के लिए विख्यात रहा है। भारतेन्दु परिवार से सम्बन्धित होने के कारण राय साहब के पिता राय प्रह्लाददास में अटूट हिन्दी-प्रेम था। इस प्रकार राय साहब को हिन्दी-प्रेम पैतृक-दाय के रूप में प्राप्त हुआ है। राय साहब की स्कूली शिक्षा बहुत स्वल्प हुई, पर इनमें उत्कट ज्ञान-लिप्सा थी। इन्होंने स्वतंत्र रूप से हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी भाषाओं का अध्ययन किया और इनमें अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। सन् 1980 ई० में भारत सरकार ने इन्हें 'पद्म-भूषण' अलंकरण से सम्मानित किया और सन् 1980 ई० में ही इनका निधन हो गया।

राय साहब की साहित्यिक रुचि के विकास में काशी का तत्कालीन वातावरण भी बहुत दूर तक प्रेरक रहा है। साहित्यिक गतिविधियों के कारण बहुत प्रारम्भ में ही इनकी घनिष्ठता जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त, रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रमुख कवियों-आलोचकों से हो गयी। कुछ समय बाद ये काशी नागरी प्रचारिणी सभा के कार्यक्रमों में भी प्रमुख रूप से हाथ बँटाने लगे। भारतीय कला-आन्दोलन में भी राय साहब का अप्रतिम स्थान रहा है। इन्होंने 'भारत कला भवन' नामक एक विशाल संग्रहालय की स्थापना की थी जो अब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का एक विभाग है। इस संग्रहालय की गणना संसार के प्रमुख संग्रहालयों में की जाती है। इन्होंने भारतीय कलाओं का प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया है। भारत की चित्रकला तथा भारतीय मूर्तिकला इनके प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। प्राचीन भारतीय भूगोल एवं पौराणिक वंशावली पर इन्होंने विद्वत्तापूर्ण शोध निबंध प्रस्तुत किये हैं।

राय साहब ने परम्परागत ब्रजभाषा में कविताएँ लिखी हैं, जो **'ब्रजरज'** में संगृहीत हैं। इनके **'भावुक'** नामक खड़ीबोली काव्य-संग्रह पर छायावाद का स्पष्ट प्रभाव है। राय साहब हिन्दी साहित्य में अपने गद्य-गीतों के लिए प्रसिद्ध हैं। इनके गद्य-गीतों के संग्रह **'साधना'** और **'छायापथ'** के नाम से प्रकाशित हैं। **'संलाप'** और **'प्रवाल'** में इनके संवाद

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1892 ई०।
- **जन्म-स्थान**—काशी (उ० प्र०)।
- **उपनाम**—नेही।
- **पिता**—राय प्रह्लाददास।
- **रुचि**—चित्रकला, मूर्तिकला एवं पुरातत्त्व।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—घर पर ही।
- **लेखन-विधा**—कविता, कहानी, गद्य काव्य, निबन्ध, कला सम्बन्धी रचनाएँ, अनूदित रचनाएँ।
- **भाषा**—संस्कृत शब्दों के साथ, उर्दू के व्यावहारिक शब्दों का प्रयोग।
- **शैली**—भावात्मक, चित्रात्मक, गवेषणात्मक, आलंकारिक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—भावुक, ब्रजरज, अनाख्या, सुधांशु, साधना, छायापथ।
- **उपाधि**—पद्म भूषण।
- **मृत्यु**—सन् 1980 ई०।
- **साहित्य में स्थान**—इन्हें गद्यगीत विधा का प्रथम रचनाकार माना जाता है।

शैली के निबंध संगृहीत हैं। इनकी कहानियाँ **'अनाख्या', 'सुधांशु'** और **'आँखों की थाह'** नामक संग्रहों में संकलित हैं। इन्होंने खलील जिब्रान के 'दि मैड मैन' का **'पगला'** नाम से हिन्दी में सुन्दर अनुवाद किया है।

राय कृष्णदास जी की प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं–

कविता-संग्रह—खड़ीबोली में 'भावुक' तथा ब्रजभाषा में 'ब्रजरज'।

कहानी-संग्रह—'अनाख्या', 'सुधांशु', 'आँखों की थाह'।

कला-सम्बन्धी—'भारतीय मूर्तिकला', 'भारत की चित्रकला'।

गद्य-काव्य—'साधना', 'छायापथ', 'संलाप', 'प्रवाल'।

अनूदित—'दि मैड मैन' का 'पगला' नाम से हिन्दी रूपांतर।

कोमल भावनाओं को सजीव शब्द में प्रकट करना राय साहब की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषता है। इनकी गद्य-शैली भावात्मक, सांकेतिक और कवित्वपूर्ण है। इन्होंने हिन्दी गद्य को एक नया आयाम प्रदान करके अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। हिन्दी में गद्य-गीत की विधा का प्रवर्तन राय साहब ही ने किया। आधुनिक युग को गद्य का युग कहा जाता है, जिसकी विशेषता यह है कि गद्य ने अपनी शक्ति के द्वारा पद्य को भी आत्मसात् कर लिया है। वास्तव में पद्य व गद्य को पूर्णतः पृथक् नहीं किया जा सकता। इसका प्रमाण हमें इनके गद्य-गीतों में मिलता है। इन गीतों में पद्य की तरह तुक तो नहीं है परन्तु लय और संगीत पूर्णतः विद्यमान है। शब्द-चयन, वाक्य-विन्यास और अलंकारों के प्रयोग ने इन गद्य-गीतों को भव्यता प्रदान कर दी है। आत्मा और प्रकृति के सौन्दर्य का प्रकाश इन गद्य-गीतों में बिखरा हुआ दिखलायी पड़ता है। ये गीत सरल, सुगम और आकार में लघु हैं। काव्य की जटिलता से ये दूर हैं। इन्हें भले ही गाया न जा सके, पर गुनगुनाया जा सकता है।

राय कृष्णदास अपने गद्य-काव्य की मधुर एवं रमणीय शैली द्वारा पर्याप्त कीर्ति अर्जित कर चुके हैं। 'साधना' के निबंधों में जीवन और परमात्मा के बीच की क्रीड़ाओं के रेखांकन में राय साहब को अभूतपूर्व सफलता मिली है। इन निबंधों में मनमोहक ढंग से प्रिय और प्रिया की आँखमिचौनी के सजीव चित्र प्रस्तुत हुए हैं।

राय साहब की भाषा-शैली कवित्वपूर्ण होते हुए भी सहज और सरल है। न तो उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का आग्रह है और न ही बोलचाल के सामान्य शब्दों की उपेक्षा। इसी प्रकार इनके वाक्य-विन्यास में भी कोई जटिलता नहीं है। कोमल भावनाओं को सजीव शब्दों में प्रकट कर देना राय साहब की गद्य-शैली की प्रमुख विशेषता है। इनकी गद्य-शैली भावात्मक, सांकेतिक और कवित्वपूर्ण है। इन्होंने संस्कृत शब्दों के साथ-साथ उर्दू के व्यावहारिक शब्दों का भी प्रयोग किया है। प्रान्तीय और ग्रामीण शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। अलंकरण का प्रयोग सहज रूप में हुआ है, किसी बनावट के साथ नहीं। मीरा के गीतों के समान भावुक हृदय की सहज अनुभूतियाँ इनके गीतों में प्रकट हुई हैं।

प्रस्तुत **'आनन्द की खोज, पागल पथिक'**, गद्य-गीत में यह बताया गया है कि आनन्द का स्रोत अपने अन्दर ही विद्यमान है। प्रायः लोग आनन्द की खोज वस्तुजगत् में करते हैं। उनकी यह खोज पता नहीं कितने जन्मों से चल रही है। लेकिन एक पल के लिए भी मनुष्य यदि अपने भीतर निहार ले तो निश्चित रूप से उसे आनन्द के अक्षय स्रोत का पता लग जायेगा। मनुष्य अशेष सृष्टि के साथ ज्यों ही आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर लेता है, त्यों ही उसे अपने सही स्वरूप का बोध हो जाता है। इस संसार का प्रत्येक व्यक्ति एक भ्रांत पथिक है। वह अशेष सुख और आनन्द की तलाश में है। उसकी तलाश निरंतर जारी है। लेकिन वह पूर्ण सुख और आनन्द की खोज के लिए जिस कल्पना लोक के स्वप्न रचता है, उस रचना का मुख्याधार यही वस्तुजगत् है। हम वस्तुजगत् के आधार पर ही कल्पना करते हैं। हमारी कल्पना समाज एवं बाह्य परिवेश से निरपेक्ष नहीं होती। अतः दूसरे लोक की कल्पना करते समय इस जगत् से कट जाना भ्रांति है। सच्चाई तो यह है कि इस जागृति के भीतर ही हमें पूर्ण सुख और आनन्द की प्राप्ति हो सकती है, लेकिन इसके लिए हमें अपने सही स्वरूप को जानने का प्रयास अवश्य करना पड़ेगा।

राय कृष्णदास भारतीय कला के पारखी और साहित्य के प्रमुख साधक थे। आप गद्य-गीत के लेखक के रूप में विख्यात हैं। इन्हें गद्य गीत विधा का पहला रचनाकार माना जाता है। भारतीय साहित्य में इन्हें हिन्दी के प्रतिनिधि कहानीकार के रूप में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है।

●●●

आनन्द की खोज पागल पथिक

● आनन्द की खोज

आनन्द की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चन्द्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।

मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ?

मुझे यह सोचकर अचरज होता कि आनन्द-कन्द-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनन्द का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनन्द के बदले में रुदन और शोच परिपोषित कर रहा था।

अन्त को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा—आनन्द, आनन्द, कहाँ है आनन्द! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किन्तु मेरी आन्तरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा—क्या कभी अपने-आप में भी देखा था? मैं अवाक् था।

सच तो यह है। जब मैंने—उसी विश्व के एक अंश—अपने-आप तक में न खोजा था तब मैंने यह कैसे कहा कि समस्त सृष्टि छान डाली? जो वस्तु मैं ही अपने-आपको न दे सका वह भला दूसरे मुझे क्यों देने लगे?

परन्तु, यहाँ तो जो वस्तु मैं अपने-आपको न दे सका था वह मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से मिली, जो मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से न मिली थी वह अपने-आप में मिली!

● पागल पथिक

'पथिक'—मैंने पूछा—"तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारी यात्रा तो लम्बी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त के आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है?"

उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया—"बन्धु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौन्दर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किन्तु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गयी है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।"

मैंने सखेद कहा, "हाय! तुम भारी भूल में पड़े हो। भला इस विश्व-मण्डल के बाहर तुम जा कैसे सकते हो? तुम जहाँ से चलोगे फिर वहीं पहुँच जाओगे। यह तो घटाकार न है। फिर, तुम उस स्थान की कल्पना तो इसी आदर्श पर करते हो और जब तुम्हें इस मूल ही में सुख नहीं मिलता तब अनुकरण में उसे कैसे पाओगे? मित्र, यहाँ तो सुख के साथ दुःख लगा है और उससे सुख को अलग कर लेने के उद्योग में भी एक सुख है। जब उसे ही नहीं पा सकते तब वहाँ का निरन्तर सुख तो तुम्हें एक अपरिवर्तनशील बोझ, नहीं यातना हो जायेगी। अरे, बिना नव्यता के सुख कहाँ? तुम्हारी यह कल्पना और संकल्प नितान्त मिथ्या और निस्सार है, और इसे छोड़ने ही में तुम्हें इतना सुख मिलेगा कि तुम छक जाओगे।"

परन्तु उसने मेरी एक न सुनी और अपनी राम-पोटरिया उठाकर चलता बना।

—राय कृष्णदास

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) आनन्द की खोज में मैं कहाँ-कहाँ न फिरा? सब जगह से मुझे उसी भाँति कलपते हुए निराश लौटना पड़ा जैसे चन्द्र की ओर से चकोर लड़खड़ाता हुआ फिरता है।
मेरे सिर पर कोई हाथ रखनेवाला न था और मैं रह-रहकर यही बिलखता कि जगन्नाथ के रहते भी मैं अनाथ कैसे रहता हूँ, क्या मैं जगत् के बाहर हूँ?
मुझे यह सोचकर अचरज होता है कि आनन्द-कन्द-मूलक इस विश्व-वल्लरी में मुझे आनन्द का अणुमात्र भी न मिला। हा! आनन्द के बदले में रुदन और शोच परिपोषित कर रहा था।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पथिक ने आनन्द की खोज में कहाँ-कहाँ भ्रमण किया?
(iv) पथिक ने अपनी तुलना किससे की है?
(v) पथिक को आनन्द के बदले क्या प्राप्त हुआ?

(ख) अन्त को मुझसे न रहा गया। मैं चिल्ला उठा– आनन्द, आनन्द, कहाँ है आनन्द! हाय! तेरी खोज में मैंने व्यर्थ जीवन गँवाया। बाह्य प्रकृति ने मेरे शब्दों को दुहराया, किन्तु मेरी आन्तरिक प्रकृति स्तब्ध थी। अतएव मुझे अतीव आश्चर्य हुआ। पर इसी समय ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण सजीव होकर मुझसे पूछ उठा– क्या कभी अपने-आप में भी देखा था? मैं अवाक् था।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक किस बात से अवाक् था?
(iv) लेखक को इस बात का पता कैसे चला कि आनन्द का स्रोत कहाँ है?
(v) किसकी खोज में पथिक ने अपना जीवन व्यर्थ गँवाया?

(ग) 'पथिक'– मैंने पूछा– "तुम कहाँ से चले हो और कहाँ जा रहे हो? तुम्हारी यात्रा तो लम्बी मालूम पड़ती है क्योंकि तुम्हारा तन सूखकर काँटा हो रहा है और उस पर का फटा वस्त्र तुम्हारे विदीर्ण हृदय की साख भर रहा है। श्रम से हारकर तुम्हारे पैर फूट-फूटकर रक्त के आँसू रो रहे हैं! यह बात क्या है?"

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पथिक किसका प्रतीक है?
(iv) पथिक का शरीर सूखकर क्यों काँटा हो रहा है?
(v) पथिक की यात्रा का गन्तव्य क्या है?

(घ) उसने दैन्य से दाँत निकालकर उत्तर दिया– "बन्धु मैं अपना मार्ग भूल गया हूँ। इस संसार के बाहर एक ऐसा स्थान है जहाँ इसके सुख और विलास की समस्त सामग्रियाँ तो अपने पूर्ण सौन्दर्य में मिलती हैं पर दुःख का वहाँ लेश भी नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे उसका ठीक पता बताया था और मैं चला भी था उसी पर। किन्तु मुझसे न जाने कौन-सी भूल हो गयी है कि मैं घूम-फिरकर बार-बार यहीं आ जाता हूँ। जो हो, मैं कभी न कभी वहाँ अवश्य पहुँचूँगा।"

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) पथिक कौन-सा मार्ग भूल गया है?

(iv) पथिक घूम-फिरकर बार-बार कहाँ आ जाता है?

(v) वह स्थान कौन-सा है जहाँ दुःख का नामोनिशान नहीं है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राय कृष्णदास की जीवनी एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. राय कृष्णदास का साहित्यिक परिचय दीजिए।
3. राय कृष्णदास की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. 'आनन्द की खोज, पागल पथिक' नामक पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) 'आनन्द के बदले रुदन और शोच को परिपोषित कर रहा था।'
   (ख) 'परंतु, यहाँ तो जो वस्तु मैं अपने-आपको न दे सका था, वह मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से मिली, जो मुझे अखिल ब्रह्माण्ड से न मिली थी वह अपने-आप से मिली!'
   (ग) 'यहाँ तो सुख के साथ दुःख लगा है और उससे सुख को अलग कर लेने के उद्योग में भी एक सुख है।'
   (घ) 'अरे, बिना नव्यता के सुख कहाँ?'
6. गद्य-गीत से आप क्या समझते हैं? एक श्रेष्ठ गद्य-गीत की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लेखक को आनन्द की अनुभूति किस स्थिति में हुई?
2. पागल पथिक का गन्तव्य क्या था? क्या कोई पथिक इस विश्व-मण्डल के बाहर जा सकता है?
3. 'आनन्द की खोज' और 'पागल पथिक' उपशीर्षकों के मूल प्रतिपाद्य पर विचार कीजिए।
4. प्रस्तुत निबंध के आधार पर राय कृष्णदास की भाषा-शैली की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
5. गद्य-गीत और कविता में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

●●●

7 राहुल सांकृत्यायन

राहुलजी का जन्म 9 अप्रैल, सन् 1893 ई0 को रविवार के दिन अपने नाना पं0 रामशरण पाठक के यहाँ पन्दहा ग्राम, जिला आजमगढ़ में हुआ था। इनके पिता पं0 गोवर्धन पाण्डे एक कट्टर धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। वे पन्दहा से दस मील दूर कनैला ग्राम में रहते थे। राहुल जी का बचपन का नाम केदारनाथ पाण्डे था। 'सांकृत्य' इनका गोत्र था। इसी के आधार पर सांकृत्यायन कहलाये। बौद्ध धर्म में आस्था होने पर अपना नाम बदल कर महात्मा बुद्ध के पुत्र के नाम पर 'राहुल' रख लिया। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा रानी की सराय और फिर निजामाबाद में हुई, जहाँ से इन्होंने सन् 1907 ई0 में उर्दू में मिडिल पास किया। इसके उपरान्त इन्होंने संस्कृत की उच्च शिक्षा वाराणसी में प्राप्त की। यहीं इनमें पालि-साहित्य के प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ। इनके पिता की इच्छा थी कि आगे भी पढ़ें, पर इनका मन कहीं और था। इन्हें घर का बन्धन अच्छा न लगा। घूमना चाहते थे। इनकी इस प्रवृत्ति के कई कारण थे। इनके नाना पं0 रामशरण पाठक सेना में सिपाही थे और उस जीवन में दक्षिण भारत की खूब यात्रा की थी। इस विगत जीवन की कहानियाँ वे बालक केदार को सुनाया करते थे, जिसने इनके मन में यात्रा-प्रेम को अंकुरित कर दिया। इसके बाद इन्होंने कक्षा 3 की उर्दू पाठ्य-पुस्तक (मौलवी इस्माइल की उर्दू की चौथी किताब) पढ़ी थी, जिसमें एक शेर इस प्रकार था—

सैर कर दुनिया की गाफ़िल जिन्दगानी फिर कहाँ?
जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?

इस शेर के सन्देश ने बालक केदार के मन पर गहरा प्रभाव डाला। इसके द्वारा इनके घुमक्कड़ी जीवन का सूत्रपात हुआ और आगे चलकर इन्होंने बाकायदा घुमक्कड़ों के निर्देशन के लिए 'घुमक्कड़-शास्त्र' ही लिख डाला। राहुल जी के यात्रा-विवरण अत्यन्त रोचक, रोमांचक, शिक्षाप्रद, उत्साहवर्धक और ज्ञान-प्रेरक हैं। इन्होंने पाँच-पाँच बार तिब्बत, लंका और सोवियत भूमि की यात्रा की थी। छह मास यूरोप में रहे थे। एशिया को इन्होंने जैसे छान ही डाला था। कोरिया, मंचूरिया,

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—9 अप्रैल, सन् 1893 ई0।
- **जन्म-स्थान**—पन्दहा (आजमगढ़), उ0 प्र0।
- **वास्तविक नाम**—केदारनाथ पाण्डे।
- **पिता**—गोवर्धन पाण्डे।
- **माता**—कुलवन्ती।
- **प्रारंभिक शिक्षा**—रानी की सराय तथा निजामाबाद।
- **लेखन-विधा**—कहानी, उपन्यास, यात्रा-साहित्य, आत्मकथा, यात्रा वृत्तान्त, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, कोशग्रन्थ।
- **भाषा**—संस्कृतनिष्ठ हिन्दी भाषा।
- **शैली**—वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक, उद्धरण।
- **प्रमुख रचनाएँ**—वोल्गा से गंगा, मेरी लद्दाख यात्रा, मेरी तिब्बत यात्रा, सतमी के बच्चे।
- **मृत्यु**—14 अप्रैल, सन् 1963 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—आधुनिक हिन्दी साहित्य के समर्थ रचनाकारों में इन्हें शामिल किया जाता है।

ईरान, अफगानिस्तान, जापान, नेपाल, केदारनाथ-बदरीनाथ, कुमायूँ-गढ़वाल, केरल-कर्नाटक, कश्मीर-लद्दाख आदि के पर्यटन को इनकी दिग्विजय कहने में कोई अत्युक्ति न होगी। कुल मिलाकर राहुल जी की पाठशाला और विश्वविद्यालय यही घुमक्कड़ी जीवन था। 14 अप्रैल, सन् 1963 ई0 को भारत के इस पर्यटनप्रिय साहित्यकार का निधन हो गया।

हिन्दी के महान् उपासक राहुल जी ने हिन्दी भाषा और साहित्य की बहुमुखी सेवा की है। इनका अध्ययन जितना विशाल था, साहित्य-सृजन भी उतना ही विराट् था। ये छत्तीस एशियाई और यूरोपीय भाषाओं के ज्ञाता थे और लगभग 150 ग्रंथों का प्रणयन करके इन्होंने राष्ट्रभाषा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। अपनी 'जीवन-यात्रा' में राहुल जी ने स्वीकार किया है कि उनका साहित्यिक जीवन सन् 1927 ई0 से प्रारम्भ होता है। वास्तविक बात तो यह है कि इन्होंने किशोरावस्था पार करने के बाद ही लिखना शुरू कर दिया था। इन्होंने धर्म, भाषा, यात्रा, दर्शन, इतिहास, पुराण, राजनीति आदि विषयों पर अधिकार के साथ लिखा है। हिन्दी-भाषा और साहित्य के क्षेत्र में इन्होंने 'अपभ्रंश काव्य साहित्य', 'दक्खिनी हिन्दी साहित्य' आदि श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत की थीं। इनकी रचनाओं में एक ओर प्राचीनता के प्रति मोह और इतिहास के प्रति गौरव का भाव विद्यमान है, तो दूसरी ओर इनकी अनेक रचनाएँ स्थानीय रंग लेकर मनमोहक चित्र उपस्थित करती हैं।

राहुल सांकृत्यायन को सबसे अधिक सफलता यात्रा-साहित्य लिखने में मिली है। जीवन-यात्रा लिखने के प्रयोजन को ये इन शब्दों में प्रकट करते हैं, *''अपनी लेखनी द्वारा मैंने उस जगत् की भिन्न-भिन्न गतियों और विचित्रताओं को अंकित करने की कोशिश की है, जिसका अनुमान हमारी तीसरी पीढ़ी बहुत मुश्किल से करेगी।''* सचमुच जीवन-यात्रा में स्वयं राहुल जी के बारे में कम मगर दूसरों के बारे में, परिवेश के बारे में अधिक जानकारी मिलती है।

राहुल जी की मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

कहानी—'वोल्गा से गंगा', 'कनैल की कथा', 'सतमी के बच्चे', 'बहुरंगी मधुपुरी'।

उपन्यास—'जय यौधेय', 'जीने के लिए', 'मधुर स्वप्न', 'सिंह सेनापति', 'विस्तृत यात्री', 'सप्त सिन्धु'।

आत्मकथा—'मेरी जीवन यात्रा'।

कोशग्रन्थ—'शासन शब्दकोश', 'राष्ट्रभाषा', 'तिब्बती-हिन्दी कोश'।

जीवनी साहित्य—'नए भारत के नए नेता', 'सरदार पृथ्वी सिंह, 'असहयोग के मेरे साथी', 'वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली'।

दर्शन—'दर्शन–दिग्दर्शन', 'बौद्ध-दर्शन' आदि।

देशदर्शन—'सोवियत भूमि', 'किन्नरदेश', 'हिमालय प्रदेश', 'जौनसार-देहरादून' आदि।

यात्रा-साहित्य—'मेरी तिब्बत यात्रा', 'मेरी लद्दाख यात्रा', 'यात्रा के पन्ने', 'रूस में पच्चीस मास', 'घुमक्कड़-शास्त्र' आदि।

विज्ञान—'विश्व की रूपरेखा'।

साहित्य और इतिहास—'आदि हिन्दी की कहानियाँ', 'दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा', 'मध्य एशिया का इतिहास', 'इस्लाम धर्म की रूपरेखा' आदि।

राहुल जी की भाषा-शैली में कोई बनावट या साहित्य-रचना का प्रयास नहीं है। सामान्यतः संस्कृतनिष्ठ परन्तु सरल और परिष्कृत भाषा को ही इन्होंने अपनाया है। न तो संस्कृत के क्लिष्ट या समासयुक्त शब्दों को इन्होंने प्रश्रय दिया है और न ही लम्बे-लम्बे वाक्यों को। संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए भी ये जनसाधारण की भाषा लिखने के पक्षपाती थे। इनकी शैली का रूप विषय और परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। इनकी शैली के वर्णनात्मक, विवेचनात्मक, व्यंग्यात्मक, उद्बोधन एवं उद्धरण आदि रूप देखने को मिलते हैं।

प्रस्तुत लेख **'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा'** राहुल जी की पुस्तक 'घुमक्कड़-शास्त्र' से लिया गया है। इस लेख में इन्होंने घुमक्कड़ी की सीमा किसी शास्त्र से कम नहीं मानी है और उसका गौरव शास्त्र के समान ही स्थापित किया है। इन्होंने आदिम काल से लेकर आधुनिक काल तक के अनेक महापुरुषों की सफलता का रहस्य घुमक्कड़ी में सिद्ध किया है।

●●●

अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा

संस्कृत से ग्रंथ को शुरू करने के लिए पाठकों को रोष नहीं होना चाहिए। आखिर हम शास्त्र लिखने जा रहे हैं, फिर शास्त्र की परिपाटी को मानना ही पड़ेगा। शास्त्रों में जिज्ञासा ऐसी चीज के लिए होनी बतलायी गयी है, जो कि श्रेष्ठ तथा व्यक्ति और समाज के लिए परम हितकारी हो। व्यास ने अपने शास्त्र में ब्रह्म को सर्वश्रेष्ठ मानकर उसे जिज्ञासा का विषय बनाया। व्यास-शिष्य जैमिनी ने धर्म को श्रेष्ठ माना। पुराने ऋषियों से मतभेद रखना हमारे लिए पाप की वस्तु नहीं है, आखिर छह शास्त्रों के रचयिता छह आस्तिक ऋषियों में भी आधों ने ब्रह्म को धता बता दी है। मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ से बढ़कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता। कहा जाता है, ब्रह्मा को सृष्टि करने के लिए न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हाँ, दुनिया के धारण की बात तो निश्चय ही न ब्रह्म के ऊपर है, न विष्णु और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया दुःख में हो चाहे सुख में, सभी समय यदि सहारा पाती है तो घुमक्कड़ों की ही ओर से। प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बागवानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथिवी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

आधुनिक काल में घुमक्कड़ों के काम की बात कहने की आवश्यकता है, क्योंकि लोगों ने घुमक्कड़ों की कृतियों को चुरा के उन्हें गला-फाड़कर अपने नाम से प्रकाशित किया, जिससे दुनिया जानने लगी कि वस्तुतः तेली के कोल्हू के बैल ही दुनिया में सब-कुछ करते हैं। आधुनिक विज्ञान में चार्ल्स डारविन का स्थान बहुत ऊँचा है। उसने प्राणियों की उत्पत्ति और मानव-वंश के विकास पर ही अद्वितीय खोज नहीं की, बल्कि कहना चाहिए कि सभी विज्ञानों को डारविन के प्रकाश में दिशा बदलनी पड़ी। लेकिन, क्या डारविन अपने महान् आविष्कारों को कर सकता था, यदि उसने घुमक्कड़ी का व्रत न लिया होता?

मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौन्दर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है। अधिक-से-अधिक यात्रा-पाठकों के लिए यही कहा जा सकता है कि दूसरे धन्धों की अपेक्षा उन्हें थोड़ा आलोक मिल जाता है और साथ ही ऐसी प्रेरणा भी मिल सकती है जो स्थायी नहीं तो कुछ दिनों के लिए तो उन्हें घुमक्कड़ बना ही सकती है। घुमक्कड़ क्यों दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है? इसीलिए कि उसी ने आज की दुनिया को बनाया है। यदि आदिम पुरुष एक जगह नदी या तालाब के किनारे गर्म मुल्क में पड़े रहते तो वह दुनिया को आगे नहीं ले जा सकते थे। आदमी की घुमक्कड़ी ने बहुत बार खून की नदियाँ बहायी हैं, इसमें संदेह नहीं, और घुमक्कड़ों से हम हरगिज नहीं चाहेंगे कि वे खून के रास्ते को पकड़ें, किन्तु घुमक्कड़ों के काफले न आते-जाते, तो सुस्त मानव जातियाँ सो जातीं और पशु से ऊपर नहीं उठ पातीं। आदिम घुमक्कड़ों में से आर्यों, शकों, हूणों ने क्या-क्या किया, अपने खूनी पंजों द्वारा मानवता के पथ को किस तरह प्रशस्त किया, इसे इतिहास में हम उतना स्पष्ट वर्णित नहीं पाते, किन्तु मंगोल घुमक्कड़ों की करामातों को तो हम अच्छी तरह जानते हैं। बारूद, तोप, कागज, छापाखाना, दिग्दर्शक, चश्मा यही चीजें थीं, जिन्होंने पश्चिम में विज्ञान युग का आरम्भ कराया और इन चीजों को वहाँ ले जानेवाले मंगोल घुमक्कड़ थे।

कोलम्बस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गयी, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया

का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

हाँ, मैं इसे भूलना ही कहूँगा, क्योंकि किसी समय भारत और चीन ने बड़े-बड़े नामी घुमक्कड़ पैदा किये। वे भारतीय घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने दक्षिण पूरब में लंका, बर्मा, मलाया, यवनद्वीप, स्याम, कम्बोज, चम्पा, बोर्नियो और सैलीबीज ही नहीं, फिलीपाइन तक धावा मारा था और एक समय तो जान पड़ा कि न्यूजीलैण्ड और आस्ट्रेलिया भी बृहत्तर भारत के अंग बननेवाले हैं। लेकिन कूप-मंडूकता तेरा सत्यानाश हो। इस देश के बुद्धुओं ने उपदेश करना शुरू किया कि समुन्दर के खारे पानी और हिन्दू धर्म में बड़ा बैर है, उसे छूने मात्र से वह नमक की पुतली की तरह गल जायेगा। इतना बतला देने पर क्या कहने की आवश्यकता है कि समाज के कल्याण के लिए घुमक्कड़ धर्म कितनी आवश्यक चीज है? जिस जाति या देश ने इस धर्म को अपनाया, वह चारों फलों का भागी हुआ और जिसने उसे दुराया, उसको नरक में भी ठिकाना नहीं। आखिर घुमक्कड़ धर्म को भूलने के कारण ही हम सात शताब्दियों तक धक्का खाते रहे, ऐरे-गैरे जो भी आये, हमें चार लात लगाते गये।

शायद किसी को संदेह हो मैंने इस शास्त्र में जो युक्तियाँ दी हैं, वे सभी तो लौकिक तथा शास्त्र-अग्राह्य हैं। अच्छा तो धर्म प्रमाण लीजिए। दुनिया के अधिकांश धर्मनायक घुमक्कड़ रहे। धर्माचार्यों में आचार-विचार, बुद्धि और तर्क तथा सहृदयता में सर्वश्रेष्ठ बुद्ध घुमक्कड़-राज थे। यद्यपि वह भारत से बाहर नहीं गये लेकिन वर्ष के तीन मासों को छोड़कर एक जगह रहना वह पाप समझते थे। वह अपने-आप ही घुमक्कड़ नहीं थे, बल्कि आरम्भ में ही अपने शिष्यों से उन्होंने कहा था—'चरथ भिक्खवे, 'चरथ' जिसका अर्थ है—'भिक्षुओं! घुमक्कड़ी करो।' बुद्ध के भिक्षुओं ने अपने गुरु की शिक्षा को कितना माना, क्या इसे बताने की आवश्यकता है? क्या उन्होंने पश्चिम में मकदूनिया तथा मिस्र से पूरब में जापान तक, उत्तर में मंगोलिया से लेकर दक्षिण में बाली और बाँका के द्वीपों तक रौंदकर रख नहीं दिया? जिस बृहत्तर भारत के लिए हरेक भारतीय को उचित अभिमान है, क्या उसका निर्माण इन्हीं घुमक्कड़ों की चरण-धूलि ने नहीं किया? केवल बुद्ध ने ही अपनी घुमक्कड़ी से प्रेरणा नहीं दी, बल्कि घुमक्कड़ों का इतना जोर बुद्ध से एक-दो शताब्दियों पूर्व भी था, जिसके कारण ही बुद्ध जैसे घुमक्कड़-राज इस देश में पैदा हो सके। उस वक्त पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ तक जम्बू-वृक्ष की शाखा ले, अपनी प्रखर प्रतिभा का जौहर दिखातीं, बाद में कूप-मंडूकों को पराजित करती सारे भारत में मुक्त होकर विचरण करती थीं।

कई-कई महिलाएँ पूछती हैं—क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती हैं, क्या उनको भी इस महाव्रत की दीक्षा लेनी चाहिए? इसके बारे में तो अलग अध्याय ही लिखा जानेवाला है, किन्तु यहाँ इतना कह देना है कि घुमक्कड़ धर्म ब्राह्मण-धर्म जैसा संकुचित धर्म नहीं है जिसमें स्त्रियों के लिए स्थान न हो। स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं,जितना पुरुष। यदि वे जन्म सफल करके व्यक्ति और समाज के लिए कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथों इस धर्म को स्वीकार करना चाहिए। घुमक्कड़ी धर्म छुड़ाने के लिए ही पुरुष ने बहुत से बंधन नारी के रास्ते लगाये हैं। बुद्ध ने सिर्फ पुरुषों के लिए घुमक्कड़ी करने का आदेश नहीं दिया, बल्कि स्त्रियों के लिए भी उनका यही उपदेश था।

भारत के प्राचीन धर्मों में जैन धर्म भी है। जैन धर्म के प्रतिष्ठापक श्रवण महावीर कौन थे? वह भी घुमक्कड़-राज थे। घुमक्कड़ धर्म के आचरण में छोटी से बड़ी तक सभी बाधाओं और व्याधियों को उन्होंने त्याग दिया था—घर-द्वार और नारी-संतान ही नहीं, वस्त्र का भी वर्जन कर दिया था। 'करतल भिक्षा तरुतल वास' तथा दिग्-अम्बर को उन्होंने इसलिए अपनाया था कि निर्द्वन्द्व विचरण में कोई बाधा न रहे। श्वेताम्बर-बन्धु दिगम्बर कहने के लिए नाराज न हों। वस्तुतः हमारे वैज्ञानिक महान् घुमक्कड़ कुछ बातों में दिगम्बरों की कल्पना के अनुसार थे और कुछ बातों में श्वेताम्बरों के उल्लेख के अनुसार। लेकिन इसमें तो दोनों संप्रदायों और बाहर के मर्मज्ञ भी सहमत हैं कि भगवान् महावीर दूसरी, तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ थे। वह आजीवन घूमते ही रहे। वैशाली में जन्म लेकर विचरण करते ही पावा में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बँधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

बुद्ध और महावीर जैसे महापुरुषों की घुमक्कड़ी की बात से यह नहीं मान लेना होगा कि दूसरे लोग ईश्वर के भरोसे गुफा या कोठरी में बैठकर सारी सिद्धियाँ पा गये या पा जाते हैं, यदि ऐसा होता तो शंकराचार्य, जो साक्षात् ब्रह्मस्वरूप थे, क्यों भारत के चारों कोनों की खाक छानते फिरे? शंकर को शंकर किसी ब्रह्मा ने नहीं बनाया उन्हें बड़ा बनानेवाला था यही घुमक्कड़ी धर्म। शंकर बराबर घूमते रहे—आज केरल देश में थे तो कुछ ही महीनों बाद मिथिला में और अगले साल काश्मीर या हिमालय के किसी दूसरे भाग में। शंकर तरुणाई में ही शिवलोक सिधार गये, किन्तु थोड़े से जीवन में उन्होंने सिर्फ तीन भाष्य ही नहीं लिखे बल्कि अपने आचरण से अनुयायियों को वह घुमक्कड़ी का पाठ पढ़ा गये कि आज भी उनके पालन करनेवाले सैकड़ों मिलते हैं। वास्कोडिगामा के भारत पहुँचने से बहुत पहले शंकर के शिष्य मास्को और यूरोप तक पहुँचे थे। उनके साहसी शिष्य सिर्फ भारत के चारों धामों से ही संतुष्ट नहीं थे बल्कि उनमें से कितनों ने जाकर वाकू (रूस) में धूनी रमायी। एक ने पर्यटन करते हुए वोल्गा तट पर निज्जी नोवोग्राद के महामेले को देखा।

रामानुज, मध्वाचार्य और वैष्णवाचार्य के अनुयायी मुझे क्षमा करें, यदि मैं कहूँ कि उन्होंने भारत में कूप-मंडूकता के प्रचार में बड़ी सरगर्मी दिखायी। भला हो रामानन्द और चैतन्य का, जिन्होंने कि पंक के पंकज बनकर आदिकाल से चले आते महान् घुमक्कड़ धर्म की फिर से प्रतिष्ठापना की, जिसके फलस्वरूप प्रथम श्रेणी के तो नहीं, किन्तु द्वितीय श्रेणी के बहुत से घुमक्कड़ उनमें पैदा हुए। ये बेचारे वाकू की बड़ी ज्वालामई तक कैसे जाते, उनके लिए तो मानसरोवर तक पहुँचना भी मुश्किल था। अपने हाथ से खाना बनाना, मांस अंडे से छू जाने पर भी धर्म का चला जाना, हाड़-तोड़ सर्दी के कारण हर लघुशंका के बाद बर्फीले पानी से हाथ धोना और हर महाशंका के बाद स्नान करना तो यमराज को निमंत्रण देना होता, इसीलिए बेचारे फूँक-फूँककर ही घुमक्कड़ी कर सकते थे। इसमें किसे उज्र हो सकता है कि शैव हो या वैष्णव, वेदान्ती हो या सैद्धान्ती, सभी को आगे बढ़ाया केवल घुमक्कड़-धर्म ने।

महान् घुमक्कड़-धर्म बौद्ध धर्म का भारत से लुप्त होना क्या था कि तब कूप-मंडूकता का हमारे देश में बोलबाला हो गया। सात शताब्दियाँ बीत गयीं और इन सातों शताब्दियों में दासता और परतंत्रता हमारे देश में पैर तोड़कर बैठ गयी। यह कोई आकस्मिक बात नहीं थी, समाज के अगुओं ने चाहे कितना ही कूप-मंडूक बनाना चाहा, लेकिन इस देश में ऐसे माई के लाल जब तक पैदा होते रहे, जिन्होंने कर्म-पथ की ओर संकेत किया। हमारे इतिहास में गुरु नानक का समय दूर का नहीं है, लेकिन अपने समय के वह महान् घुमक्कड़ थे। उन्होंने भारत भ्रमण को ही पर्याप्त नहीं समझा, ईरान और अरब तक का धावा मारा। घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धिदायिनी नहीं है और निर्भीक तो वह एक नम्बर का बना देती है।

दूसरी शताब्दियों की बात छोड़िए अभी शताब्दी भी नहीं बीती, इस देश से स्वामी दयानन्द को बिदा हुए। स्वामी दयानन्द को ऋषि दयानन्द किसने बनाया? घुमक्कड़ी धर्म ने। उन्होंने भारत के अधिक भागों का भ्रमण किया, पुस्तक लिखते, शास्त्रार्थ करते वह बराबर भ्रमण करते रहे। शास्त्रों को पढ़कर काशी के बड़े-बड़े पंडित महामंडूक बनने में ही सफल होते रहे, इसलिए दयानन्द को मुक्तबुद्धि और तर्कप्रधान बनाने का कारण शास्त्रों से अलग कहीं ढूँढ़ना होगा, और वह है उनका निरन्तर घुमक्कड़ी धर्म का सेवन। उन्होंने समुद्र-यात्रा करने, द्वीप-द्वीपान्तरों में जाने के विरुद्ध जितनी थोथी दलीलें दी जाती थीं सबको चिंदी-चिंदी करके उड़ा दिया और बताया कि मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं है, वह जंगम प्राणी है। चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं।

बीसवीं शताब्दी के भारतीय घुमक्कड़ों की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। इतना लिखने से मालूम हो गया होगा कि संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।

इतना कहने के बाद कोई संदेह नहीं रह गया कि घुमक्कड़ धर्म से बढ़कर दुनिया में धर्म नहीं है। धर्म भी छोटी बात है, उसे घुमक्कड़ के साथ लगाना 'महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस' वाली बात होगी। घुमक्कड़ होना आदमी के लिए परम सौभाग्य की बात है। यह पंथ अपने अनुयायी को मरने के बाद किसी काल्पनिक स्वर्ग का प्रलोभन नहीं देता, इसके लिए तो कह सकते हैं "क्या खूब सौदा नकद है इस हाथ ले उस हाथ दे।" घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चिन्त है। किन साधनों से सम्पन्न होकर आदमी घुमक्कड़ बनने का अधिकारी हो सकता है, यह आगे बतलाया जायेगा, किन्तु घुमक्कड़ी के लिए चिन्ताहीन होना आवश्यक है, और चिन्ताहीन होने के लिए घुमक्कड़ी भी आवश्यक है। दोनों का अन्योन्याश्रय होना दूषण

नहीं भूषण है। घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है, आखिर चिन्ताहीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगायेगा? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं—उसी तरह जैसे काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है। जाति का भविष्य घुमक्कड़ी पर निर्भर करता है। इसलिए मैं कहूँगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़ी व्रत ग्रहण करना चाहिए, इसके विरुद्ध दिये जानेवाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ का समझना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं तो समझना चाहिए कि वह भी प्रह्लाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हितू-बान्धव बाधा उपस्थित करते हैं तो समझना चाहिए कि वे दिवांध हैं। यदि धर्माचार्य कुछ उलटा-सीधा तर्क देते हैं तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी नेता अपनी कानूनी रुकावटें डालते हैं तो हजारों बार के तजुर्बा की हुई बात है कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ की गति को रोकनेवाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरेवाली राज्य सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आँख में धूल-झोंककर पार कर लिया। मैंने स्वयं एक से अधिक बार किया है। पहली तिब्बत यात्रा में अंग्रेजों, नेपाल राज्य और तिब्बत के सीमा-रक्षकों की आँख में धूल झोंककर जाना पड़ा था।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि यदि कोई तरुणी-तरुण घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा लेता है—यह मैं अवश्य कहूँगा कि यह दीक्षा वही ले सकता है जिसमें बहुत भारी मात्रा में हर तरह का साहस है—तो उसे किसी की बात नहीं सुननी चाहिए, न माता के आँसू बहने की परवाह करनी चाहिए, न पिता के भय और उदास होने की, न भूल से विवाह कर लायी अपनी पत्नी के रोने-धोने की और न किसी तरुणी को अभागे पति के कलपने की। बस, शंकराचार्य के शब्दों में यही समझना चाहिए—"निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः" और मेरे गुरु कपोतराज के वचन को अपना पथ प्रदर्शक बनाना चाहिए—

"सैर कर दुनिया की गाफ़िल, जिन्दगानी फिर कहाँ?
जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?"

—इस्माइल मेरठी

दुनिया में मनुष्य जन्म एक ही बार होता है और जवानी भी केवल एक ही बार आती है। साहसी मनस्वी तरुण-तरुणियों को इस अवसर से हाथ नहीं धोना चाहिए। कमर बाँध लो भावी घुमक्कड़ो! संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है।

—राहुल सांकृत्यायन

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

(क) मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालय के देवदारु के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौन्दर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) यात्रा सम्बन्धी साहित्य के बारे में राहुल जी के क्या विचार हैं?

(iv) प्रस्तुत गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।
(v) प्रस्तुत अवतरण में राहुल जी ने क्या सिद्ध करने का प्रयास किया है?

(ख) कोलम्बस और वास्कोडिगामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गयी, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतनी अक्ल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियाइयों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी। क्यों भारत और चीन, आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता किसने खोला?
(iv) चीन और भारत अपना झण्डा गाड़ने में कहाँ असफल रहे?
(v) भारत और चीन किस धर्म से विमुख थे?

(ग) बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बंधे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं, लेकिन मैं तो कहूँगा, घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बना जाता तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) 'तेली के बैल' बनने से क्या आशय है?
(iv) आजकल के साधुओं के सम्बन्ध में लेखक के क्या विचार हैं?
(v) लेखक ने किस बात को अहंकार का सूचक माना है?

(घ) संसार में यदि अनादि सनातन धर्म है तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान् है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) घुमक्कड़ धर्म को किस धर्म की संज्ञा दी गयी है?
(iv) कुछ धर्मों ने यश और महिमा किस कारण से प्राप्त की?
(v) प्रभु ईसा मसीह एवं उनके अनुयायियों के सन्दर्भ में लेखक के क्या विचार हैं?

(ङ) घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है, आखिर चिन्ताहीनता तो सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं, लेकिन उसे उसी तरह समझिए, जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगायेगा? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं– उसी तरह जैसी काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) लेखक के अनुसार संसार का सबसे बड़ा सुख क्या है?
(iv) सुख का सबसे बड़ा रूप क्या है?
(v) घुमक्कड़ी में किस तरह का कष्ट होता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राहुल सांकृत्यायन के जीवन-परिचय एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
2. राहुल सांकृत्यायन का साहित्यिक परिचय लिखिए।
3. राहुल सांकृत्यायन का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
4. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' पाठ का सारांश लिखिए।
5. निम्नलिखित सूक्तिपरक वाक्यों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) पुस्तकें घुमक्कड़ी का पूरा रस प्रदान नहीं कर पातीं।
   (ख) समुद्र के खारे पानी और हिन्दू धर्म में बड़ा बैर है।
   (ग) व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है।
   (घ) महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस।
   (ङ) मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं, वह जंगम प्राणी है।
   (च) घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धि-दायिनी नहीं है।
   (छ) स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं, जितना पुरुष।
   (ज) सैर कर दुनिया की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ।
   (झ) घुमक्कड़ दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है।
   (ञ) चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लेखक ने घुमक्कड़ी को 'शास्त्र' मानने के लिए क्या तर्क दिये हैं?
2. लेखक ने घुमक्कड़ को दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति क्यों कहा है?
3. "घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
4. 'अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा' पाठ के आधार पर घुमक्कड़ी का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
5. कुटिया या आश्रम बनाकर बैठनेवाले महात्माओं को लेखक ने 'तेली का बैल' क्यों कहा है?
6. एशिया के कूप-मंडूकों से लेखक का क्या आशय है? वे अमेरिका और आस्ट्रेलिया पर अपनी झंडी किस प्रकार गाड़ सकते थे?
7. ऋषि दयानन्द ने आधुनिक भारत की उन्नति में किस प्रकार भाग लिया?
8. आजकल आपको घुमक्कड़ी किन-किन रूपों में दिखायी पड़ती है?
9. लेखक ने घुमक्कड़ों में किन गुणों का होना आवश्यक माना है?
10. घुमक्कड़ी के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता होती है? संक्षेप में लिखिए।

●●●

8 रामवृक्ष बेनीपुरी

रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म सन् 1902 ई0 में बिहार स्थित मुजफ्फरपुर जिले के बेनीपुर गाँव में हुआ था। इनके पिता श्री फूलवन्त सिंह एक साधारण किसान थे। बचपन में ही इनके माता-पिता का देहावसान हो गया और इनका लालन-पालन इनकी मौसी की देखरेख में हुआ। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा बेनीपुर में ही हुई। बाद में इनकी शिक्षा इनके ननिहाल में भी हुई। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पूर्व ही सन् 1920 में इन्होंने अध्ययन छोड़ दिया और महात्मा गाँधी के नेतृत्व में प्रारम्भ हुए असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े। बाद में हिन्दी साहित्य सम्मेलन से 'विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण की। ये राष्ट्रसेवा के साथ-साथ साहित्य की भी साधना करते रहे। साहित्य की ओर इनकी रुचि 'रामचरितमानस' के अध्ययन से जागृत हुई। पन्द्रह वर्ष की आयु से ही ये पत्र-पत्रिकाओं में लिखने लगे थे। देश-सेवा के परिणामस्वरूप इनको अनेक वर्षों तक जेल की यातनाएँ भी सहनी पड़ीं। सन् 1968 में इनका निधन हो गया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1902 ई0।
- **जन्म-स्थान**—बेनीपुर, मुजफ्फरपुर, (बिहार)।
- **पिता**—फूलवन्त सिंह।
- **शिक्षा**—हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज से विशारद।
- **संपादन**—नई धारा, तरुण भारती आदि।
- **भाषा**—व्यावहारिक, लाक्षणिक, व्यंग्यात्मक हिन्दी।
- **शैली**—भावात्मक, शब्दचित्रात्मक, प्रतीकात्मक, वर्णनात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—गेहूँ और गुलाब, माटी की मूरतें, जंजीरें और दीवारें, पैरों में पंख बाँधकर, उड़ते चलें, मील के पत्थर।
- **मृत्यु**—सन् 1968 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में एक प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित।

बेनीपुरी जी के निबंध संस्मरणात्मक और भावात्मक हैं। भावुक हृदय के तीव्र उच्छ्वास की छाया इनके प्रायः सभी निबंधों में विद्यमान है। इन्होंने जो कुछ लिखा है वह स्वतंत्र भाव से लिखा है। ये एक राजनीतिक एवं समाजसेवी व्यक्ति थे। विधानसभा, सम्मेलन, किसान सभा, राष्ट्रीय आन्दोलन, विदेश-यात्रा, भाषा-आन्दोलन आदि के बीच में रमे रहते हुए भी इनका साहित्यकार व्यक्तित्व हिन्दी साहित्य को अनेक सुन्दर ग्रंथ दे गया है। इनकी अधिकांश रचनाएँ जेल में लिखी गयी हैं किन्तु इनका राजनीतिक व्यक्तित्व इनके साहित्यकार व्यक्तित्व को दबा नहीं सका। इनकी शैली की विशिष्टताएँ कई हैं जो इनके हर लेखन में मिलती हैं। बेनीपुरी का गद्य हिन्दी की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है, बातचीत के करीब है और कथ्य को सहज भाव से पाठकों की चेतना में उतार देता है।

बेनीपुरी जी ने उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, निबंध, रेखाचित्र आदि सभी गद्य-विधाओं पर अपनी कलम उठायी है। इनके कुछ प्रमुख ग्रंथ निम्नलिखित हैं :

निबन्ध और रेखाचित्र—'मशाल', 'गेहूँ और गुलाब', 'वन्दे वाणी विनायकौ', 'माटी की मूरतें', 'लालतारा' आदि।

संस्मरण—'मील के पत्थर', 'जंजीरें और दीवारें'।

नाटक—'अम्बपाली', 'सीता की माँ', 'रामराज्य'।

उपन्यास—'पतितों के देश में'।

कहानी संग्रह—'चिता के फूल'।

जीवनी—'जयप्रकाश नारायण', 'महाराणा प्रतापसिंह', 'कार्ल मार्क्स'।

यात्रावृत्तान्त—'उड़ते चलें', 'पैरों में पंख बाँधकर'।

आलोचना—'बिहारी सतसई की सुबोध टीका', 'विद्यापति पदावली'।

पत्र-पत्रिकाएँ—'तरुण भारती', 'युवक', 'हिमालय', 'नई धारा', 'कैदी', 'जनता', 'योगी', 'बालक', 'किसान-मित्र', 'चुन्नू-मुन्नू' आदि पत्र-पत्रिकाओं का कुशल संपादन। इनका संपूर्ण साहित्य 'बेनीपुरी ग्रंथावली' नाम से दस खण्डों में प्रकाशित है।

बेनीपुरी जी के सम्पूर्ण साहित्य को बेनीपुरी ग्रंथावली नाम से दस खण्डों में प्रकाशित कराने की योजना थी, जिसके कुछ खण्ड प्रकाशित हो सके। निबंधों और रेखाचित्रों के लिए इनकी ख्याति सर्वाधिक है। माटी की मूरत इनके श्रेष्ठ रेखाचित्रों का संग्रह है जिसमें बिहार के जन-जीवन को पहचानने के लिए अच्छी सामग्री है। कुल 12 रेखाचित्र हैं और सभी एक-से-एक बढ़कर हैं।

बेनीपुरी जी के गद्य-साहित्य में गहन अनुभूतियों एवं उच्च कल्पनाओं की स्पष्ट झाँकी मिलती है। भाषा में ओज है। इनकी खड़ीबोली में कुछ आंचलिक शब्द भी आ जाते हैं, किन्तु इन प्रांतीय शब्दों से भाषा के प्रवाह में कोई विघ्न नहीं उपस्थित होता। भाषा के तो ये 'जादूगर' माने जाते हैं। इनकी भाषा में संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू के प्रचलित शब्दों का प्रयोग हुआ है। भाषा को सजीव, सरल और प्रवाहमयी बनाने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया है। इनकी रचनाओं में विषय के अनुरूप विविध शैलियों के दर्शन होते हैं। शैली में विविधता है। कहीं चित्रोपम शैली, कहीं डायरी शैली, कहीं नाटकीय शैली। किन्तु सर्वत्र भाषा में प्रवाह एवं ओज विद्यमान है। वाक्य छोटे होते हैं किन्तु भाव पाठकों को विभोर कर देते हैं।

बेनीपुरी जी बहुमुखी प्रतिभावाले लेखक हैं। इन्होंने गद्य की विभिन्न विधाओं को अपनाकर विपुल मात्रा में साहित्य की सृष्टि की। पत्रकारिता से ही इनकी साहित्य-साधना का प्रारम्भ हुआ। साहित्य-साधना और देशभक्ति दोनों ही इनके प्रिय विषय रहे हैं। इनकी रचनाओं में कहानी, उपन्यास, नाटक, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, यात्रावृत्तान्त, ललित लेख आदि के अच्छे उदाहरण मिल जाते हैं।

प्रस्तुत निबंध **'गेहूँ बनाम गुलाब'** इनके गेहूँ और गुलाब नामक ग्रंथ का पहला निबंध है। इसमें लेखक ने गेहूँ को आर्थिक और राजनीतिक प्रगति का द्योतक माना है तथा गुलाब को सांस्कृतिक प्रगति का। इसमें इन्होंने प्रतिपादित किया है कि राजनीतिक एवं आर्थिक प्रगति सदा एकांगी रहेगी और इसे पूर्ण बनाने के लिए सांस्कृतिक प्रगति की आवश्यकता होगी। मानव-संस्कृति के विकास के लिए साहित्यकारों एवं कलाकारों की भूमिका गुलाब की भूमिका है और इसका अपना स्थान है। गेहूँ और गुलाब में प्राचीन काल में समन्वय था, किन्तु आज आवश्यकता इस बात की है कि गेहूँ पर विजय प्राप्त की जाय।

●●●

गेहूँ बनाम गुलाब

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते हैं। एक से शरीर की पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मन तृप्त होता है।

गेहूँ बड़ा या गुलाब? हम क्या चाहते हैं—पुष्ट शरीर या तृप्त मानस? या पुष्ट शरीर पर तृप्त मानस।

जब मानव पृथ्वी पर आया, भूख लेकर। क्षुधा, क्षुधा; पिपासा, पिपासा। क्या खाये क्या पिये? माँ के स्तनों को निचोड़ा, वृक्षों को झकझोरा, कीट-पतंग, पशु-पक्षी—कुछ न छूट पाये उससे!

गेहूँ—उसकी भूख का काफला आज गेहूँ पर टूट पड़ा है। गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ!

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग उजाड़े जा रहे हैं—गेहूँ के लिए।

बेचारा गुलाब—भरी जवानी में सिसकियाँ ले रहा है। शरीर की आवश्यकता ने मानसिक वृत्तियों को कहीं कोने में डाल रखा है, दबा रखा है।

किन्तु; चाहे कच्चा चरे, या पकाकर खाये—गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अन्तर? मानव को मानव बनाया गुलाब ने! मानव, मानव तब बना, जब उसने शरीर की आवश्यकताओं पर मानसिक वृत्तियों को तरजीह दी।

यही नहीं, जब उसके पेट में भूख खाँव-खाँव कर रही थी, तब भी उसकी आँखें गुलाब पर टँगी थीं, टँकी थीं।

उसका प्रथम संगीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँ को ऊखल और चक्की में कूट-पीस रही थीं। पशुओं को मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ, उनकी खाल का बनाया ढोल और उनकी सींग की बनायी तुरही। मछली मारने के लिए जब वह अपनी नाव में पतवार का पंख लगाकर जल पर उड़ा जा रहा था, तब उसके छप-छप में उसने ताल पाये, तराने छेड़े! बाँस से उसने लाठी ही नहीं बनायी, वंशी भी बजायी।

रात का काला घुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह उच्छ्वसित हुआ सिर्फ इसलिए नहीं कि अब पेट-पूजा की समिधा जुटाने में उसे सहूलियत मिलेगी; बल्कि वह आनन्द-विभोर हुआ ऊषा की लालिमा से, उगते सूरज की शनैः-शनैः प्रस्फुटित होनेवाली सुनहरी किरणों से, पृथिवी पर चमचम करते लक्ष-लक्ष ओस-कणों से! आसमान में जब बादल उमड़े, तब उसमें अपनी कृषि का आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ; उसके सौंदर्य-बोध ने उसके मनमोर को नाच उठने के लिए लाचार किया—इन्द्रधनुष ने उसके हृदय को भी इन्द्रधनुषी रंगों में रंग दिया।

मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किन्तु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।

जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानन्द रहा।

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था। उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

उसका साँवला दिन में गायें चराता था, रास रचाता था।

पृथिवी पर चलता हुआ वह आकाश को नहीं भूला था और जब आकाश पर उसकी नजरें गड़ी थीं, उसे याद था कि उसके पैर मिट्टी पर हैं।

किन्तु धीरे-धीरे यह संतुलन टूटा।

अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड्डी तोड़नेवाले, उबालनेवाले, नारकीय यंत्रणाएँ देनेवाले श्रम का—उस श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शान्त न कर सके।

और, गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का—भ्रष्टाचार का, गन्दगी और गलीज का! वह विलासिता—जो शरीर को नष्ट करती है और मानस को भी!

अब उसके साँवले ने हाथ में शंख और चक्र लिए। नतीजा—महाभारत और यदुवंशियों का सर्वनाश।

वह परम्परा चली आ रही है! आज चारों ओर महाभारत है, गृह-युद्ध है—सर्वनाश है, महानाश है!

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में—दोनों अपने-अपने पालनकर्त्ताओं के भाग्य पर, दुर्भाग्य पर—!

चलो, पीछे मुड़ो! गेहूँ और गुलाब में हम फिर एक बार संतुलन स्थापित करें।

किन्तु मानव क्या पीछे मुड़ा है; मुड़ सकता है?

यह महायात्रा! आगे बढ़ता रहा है, आगे बढ़ता रहेगा!

और क्या नवीन संतुलन चिर-स्थायी हो सकेगा? क्या इतिहास फिर दुहरकर नहीं रहेगा?

नहीं, मानव को पीछे मोड़ने की चेष्टा न करो।

अब गुलाब और गेहूँ में फिर संतुलन लाने की चेष्टा में सिर खपाने की आवश्यकता नहीं।

अब गुलाब गेहूँ पर विजय प्राप्त करे।

गेहूँ पर गुलाब की विजय-चिर-विजय! अब नये मानव की यह नयी आकांक्षा हो!

क्या यह संभव है?

बिलकुल सोलह आने संभव है।

विज्ञान ने बता दिया है—यह गेहूँ क्या है? और उसने यह भी जता दिया है कि मानव में यह चिर-बुभुक्षा क्यों है?

गेहूँ का गेहूँत्व क्या है, हम जान गये हैं। यह गेहूँत्व उसमें आता कहाँ से है, हम से यह भी छिपा नहीं है।

पृथिवी और आकाश के कुछ तत्त्व एक विशेष प्रक्रिया से पौधों की बालियों में संगृहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं। उन्हीं तत्त्वों की कमी हमारे शरीर में भूख नाम पाती है!

क्यों पृथिवी की जुताई, कुड़ाई, गुड़ाई! क्यों आकाश की दुहाई! हम पृथिवी और आकाश से उन तत्त्वों को सीधे ग्रहण क्यों न करें?

यह तो अनहोनी बात—उटोपिया, फुटोपिया!

हाँ, यह अनहोनी बात, उटोपिया तब तक बनी रहेगी जब तक विज्ञान संहार-कांड के लिए ही आकाश-पाताल एक करता रहेगा। ज्योंही उसने जीवन की समस्याओं पर ध्यान दिया, एक हस्तामलकवत् सिद्ध होकर रहेगी!

और, विज्ञान को इस ओर आना है, नहीं तो मानव का क्या, सारे ब्रह्माण्ड का संहार निश्चित है!

विज्ञान धीरे-धीरे इस ओर कदम बढ़ा भी रहा है!

कम से कम इतना तो वह तुरंत कर ही देगा कि गेहूँ इतना पैदा हो कि जीवन की अन्य परमावश्यक वस्तुएँ—हवा, पानी की तरह—इफरात हो जायँ। बीज, खाद, सिंचाई-जुताई के ऐसे तरीके निकलते ही जा रहे हैं, जो गेहूँ की समस्या को हल कर दें।

प्रचुरता—शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले साधनों की प्रचुरता—की ओर आज का मानव प्रभावित हो रहा है।

* * * *

प्रचुरता?—एक प्रश्न चिह्न?

क्या प्रचुरता मानव को सुख और शांति दे सकती है?

'हमारा सोने का हिन्दुस्तान'—यह गीत गाइए; किन्तु यह न भूलिए कि यहाँ एक सोने की नगरी थी, जिसमें राक्षसता वास करती थी!

राक्षसता—जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी, जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे, जो छह महीने सोती थी; जिसे दूसरे की बहू-बेटियों का उड़ा ले जाने में तनिक भी झिझक नहीं थी।

गेहूँ बड़ा प्रबल है—वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शान्त कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।

तो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय?

अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है—इंद्रियों के संयमन और वृत्तियों के उन्नयन का।

संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आये हैं। किन्तु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आये हैं—बड़े-बड़े तपस्वियों की लम्बी-लम्बी तपस्याएँ एक रम्भा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्खलित हो गयीं।

आज भी देखिए, गाँधीजी के तीस वर्ष के उपदेशों और आदेशों पर चलनेवाले हम तपस्वी किस तरह दिन-दिन नीचे गिरते जा रहे हैं।

इसलिए उपाय एकमात्र है—वृत्तियों के उन्नयन का।

कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठाकर सूक्ष्म भावनाओं की ओर प्रवृत्त कीजिए।

शरीर पर मानस की पूर्ण प्रभुता स्थापित हो—गेहूँ पर गुलाब की!

गेहूँ के बाद गुलाब—बीच में कोई दूसरा टिकाव नहीं, ठहराव नहीं।

* * * *

गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है।

जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया—मानस का संसार—सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसायेंगे।

जब गेहूँ से हमारा पिंड छूट जायगा और हम गुलाब की दुनिया में स्वच्छन्द विहार करेंगे।

गुलाब की दुनिया—रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया!

भौंरे नाच रहे, गूँज रहे, फलसुँघनी फुदक रही, चहक रही!

नृत्य, गीत—आनन्द, उछाह!

कहीं गन्दगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं! आँगन में गुलाब; खेतों में गुलाब! गालों पर गुलाब खिल रहे; आँखों से गुलाब झाँक रहा!

जब सारा मानव-जीवन रंगमय, सुगन्धमय, नृत्यमय, गीतमय बन जायगा? वह दिन कब आयगा?

वह आ रहा है—क्या आप देख नहीं रहे? कैसी आँखें हैं आपकी! शायद उन पर गेहूँ का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे को हटाइए और देखिए वहाँ अलौकिक, स्वर्गिक दृश्य इसी लोक में, अपनी इस मिट्टी की पृथिवी पर हो!

'शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर।'

—रामवृक्ष बेनीपुरी

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

(क) मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर। पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) मानव शरीर और पशु शरीर में क्या अंतर है?

(iv) मानव शरीर के प्रमुख तीन अंग कौन से हैं?

(v) गद्यांश का आशय स्पष्ट कीजिए।

(ख) गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किन्तु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक के अनुसार मानव के लिए क्या आवश्यक है?

(iv) प्राचीनकाल से मानव के व्रत, उपवास एवं तपस्या करने का क्या प्रयोजन था?

(v) मनुष्य को गेहूँ की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

(ग) गेहूँ बड़ा प्रबल है– वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा! पेट की क्षुधा शान्त कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।

तो प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय?

अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज मनोविज्ञान दो उपाय बताता है– इंद्रियों के संयमन और वृत्तियों के उन्नयन का।

संयमन का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आये हैं। किन्तु इसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने आये हैं–बड़े-बड़े तपस्वियों की लम्बी-लम्बी तपस्याएँ एक रम्भा, एक मेनका, एक उर्वशी की मुसकान पर स्खलित हो गयीं।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) गेहूँ को प्रबल क्यों कहा गया है?

(iv) अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए मनोविज्ञान ने कौन से उपाय बताये हैं?

(v) गद्यांश के अनुसार संयमन के कौन से दोष परिलक्षित होते हैं?

(घ) गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है– वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छायी है। जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है; राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया–मानस का संसार–सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगत् का नया लोक बसायेंगे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गद्यांश के अनुसार अब कौन-सा युग आने वाला है? इस युग का संसार कैसा होगा?
(iv) लेखक ने गेहूँ और गुलाब को किसका प्रतीक माना है?
(v) किसकी दुनिया खत्म होने जा रही है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. रामवृक्ष बेनीपुरी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. इस पाठ का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
3. रामवृक्ष बेनीपुरी की जीवनी एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।
4. रामवृक्ष बेनीपुरी का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
5. रामवृक्ष बेनीपुरी का साहित्यिक परिचय दीजिए।
6. निम्नांकित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
   (क) मानव ने बाँस से लाठी ही नहीं बनायी वंशी भी बजायी।
   (ख) गुलाब की दुनिया–रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया।
   (ग) उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।
   (घ) शौके दीदार अगर है तो नजर पैदा कर!
   (ङ) गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप से हम सब पर छायी है।
   (च) गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में।
   (छ) मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गेहूँ और गुलाब की आवश्यकता समाज को किस प्रकार से है?
2. 'गेहूँ बनाम गुलाब' नामक निबंध में गेहूँ व गुलाब किसके प्रतीक हैं?
3. 'मानव पशु से किस प्रकार श्रेष्ठ है'– समीक्षा कीजिए।
4. लेखक क्यों कहता है कि 'मानव को मानव बनाया गुलाब ने।'
5. गेहूँ और गुलाब में संतुलन टूटने पर क्या होता है?
6. गेहूँ पर गुलाब की प्रभुता का क्या तात्पर्य है?
7. लेखक के अनुसार गेहूँ पर विजय किस प्रकार पायी जा सकती है?
8. गुलाब को किस प्रकार की भावना का द्योतक बताया गया है?
9. विज्ञान मानव की लक्ष्य-प्राप्ति में किस प्रकार सहायक बन सकता है?
10. 'वृत्तियों के उन्नयन' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
11. मानव के भविष्य के कैसे चित्र की कल्पना लेखक ने की है?
12. 'गेहूँ बनाम गुलाब' पाठ का मुख्य संदेश क्या है?
13. गुलाब की दुनिया का वर्णन लेखक ने किस प्रकार किया है? स्पष्ट कीजिए।
14. 'गेहूँ और गुलाब' के मूल भाव पर विचार कीजिए।
15. बेनीपुरी ने पशु और मानव में क्या अन्तर बताया है?

●●●

9 सड़क सुरक्षा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के वर्ष 2008 के आँकड़ों के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण सड़क दुर्घटना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2011 में विश्व में सबसे अधिक 1,36,834 सड़क दुर्घटनाएँ भारत में हुईं, जिसमें दुपहिया वाहन 22 प्रतिशत, ट्रक 19 प्रतिशत, कार 10 प्रतिशत, टैम्पो/वैन 06 प्रतिशत, बस 09 प्रतिशत, पैदल चलने वाले 09 प्रतिशत तथा अन्य 10 प्रतिशत हैं।

सड़क दुर्घटनाओं को रोकने और सड़क सुरक्षा उपायों के प्रति आम नागरिकों को और अधिक जागरूक किये जाने की आवश्यकता है। विकसित देश न केवल सड़क सुरक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करते हैं वरन् वाहन सुरक्षा और सड़कों की आधारभूत संरचना पर भी ध्यान देते हैं।

वर्तमान में सड़क दुर्घटना से होने वाली चोट और मृत्यु बहुत सामान्य बात हो गई है। सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के वर्ष 2001 के आँकड़ों के अनुसार सड़क दुर्घटना में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 24 प्रतिशत हो गयी है। वर्ष 2001 में प्रति 100 व्यक्तियों पर मरने वालों की संख्या 19.6 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर प्रति 100 व्यक्तियों पर 28.6 हो गई है।

सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली वृद्धि का प्रमुख कारण सड़क सुरक्षा के नियमों की अनदेखी है। गलत दिशा में चलना, तीव्र गति से अथवा नशे का सेवन कर गाड़ी चलाने से होने वाली दुर्घटनाओं के समाचार प्रत्येक दिन सुने जा सकते हैं। सरकार द्वारा सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार के यातायात नियम बनाये गये हैं। यातायात के नियमों के पालन करने जैसे सही गति से वाहन चलाना, सुरक्षा उपायों यथा हेलमेट और सीट बेल्ट का प्रयोग करना एवं सड़कों पर बने यातायात संकेतों के पालन से दुर्घटनाओं में कमी आ सकती है।

वर्तमान में दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाते समय मोबाइल अथवा दूसरे इलेक्ट्रानिक उपकरणों के प्रयोग करने पर चालक का ध्यान भंग से होने वाली घटनायें बढ़ी हैं। यातायात के नियमों के पालन करने से यातायात अर्थदण्ड एवं ड्राइविंग लाइसेन्स के निरस्तीकरण से बचा जा सकता है।

वाहन चालन के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को किसी मान्यता प्राप्त चालन स्कूल के प्रशिक्षित प्रशिक्षक से चालन कोर्स करना चाहिए। सार्वजनिक स्थलों पर बिना ड्राइविंग लाइसेन्स के वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है और मोटरयान अधिनियम–1988 की धारा 181 के तहत इसके लिए ₹ 500 का अर्थदण्ड निर्धारित है। वाहन स्वामियों को अपने वाहनों की समय-समय पर जाँच कराते रहना चाहिए ताकि होने वाली दुर्घटना से बचा जा सके।

किसी भी यात्रा पर जाने के पूर्व वाहन स्वामी को प्राथमिक चिकित्सा बाक्स, टूल बाक्स एवं गैसोलीन आदि की जाँच करा लेनी चाहिए।

वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कुछ सुरक्षा नियम निम्नवत् दिये गये हैं–

1. वाहन चालक सड़क पर अपने बायें से चलें और खासकर दूसरी तरफ से आ रहे वाहन को जाने दें।
2. वाहन चालक को गाड़ी मोड़ते समय वाहन गति धीमी रखनी चाहिए।
3. दो पहिया वाहन चालकों को अच्छी गुणवत्ता वाले हेलमेट पहनने चाहिए तथा चार पहिया वाहन चालकों एवं आगे तथा

पीछे की सीट पर बैठने वाले व्यक्तियों को सीट बेल्ट अवश्य लगाना चाहिए।

4. वाहन की गति निर्धारित सीमा तक ही रखी जानी चाहिए, विशेष रूप से स्कूल, अस्पताल एवं कॉलोनी आदि क्षेत्रों में।
5. सभी वाहनों को दूसरे वाहनों से एक निश्चित दूरी बनाकर चलना चाहिए।
6. पैदल यात्रियों को भी सड़क पर चलने के नियम से परिचित होकर चलना चाहिए जैसे क्रासवाक एवं जेब्रा क्रासिंग का उपयोग।
7. वाहन चालक द्वारा यातायात नियमों का उल्लंघन करने जैसे–क्रासिंग पर लाल/पीली बत्ती पार करना एवं बिना संकेत दिए गली बदलना अथवा तीन सवारी के साथ दो पहिया वाहन चलाना धारा 199 के साथ मोटर यान अधिनियम–1988 की धारा 177 के तहत दण्डनीय अपराध है। प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 100 एवं दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दण्ड स्वरूप ₹ 300 की धनराशि निर्धारित है।
8. सार्वजनिक स्थान पर सड़क–सुरक्षा, ध्वनि नियंत्रण और वायु प्रदूषण के विहित मानकों का उल्लंघन करने पर मोटरयान अधिनियम–1988 की धारा 190(2) के तहत प्रथम बार अपराध करने पर ₹ 1000 तथा दूसरी बार या अनुवर्ती अपराध करने पर दण्ड स्वरूप ₹ 2,000 की धनराशि निर्धारित है।

अवयस्क व्यक्ति द्वारा दो पहिया अथवा चार पहिया वाहन चलाना अपराध की श्रेणी में आता है, साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को अपने वाहन का बीमा निर्धारित अवधि के अन्तर्गत अवश्य करा लेना चाहिए। बिना बीमा के वाहन चलाना मोटर अधिनियम–1988 की धारा 146 के साथ-साथ धारा 196 के तहत दण्डनीय अपराध है, जिसके लिये दण्ड स्वरूप ₹ 1,000 की जुर्माने की राशि निर्धारित है।

सड़क पर चलने वाले पैदल यात्रियों के साथ-साथ दो पहिया एवं चार पहिया वाहन चलाने वाले चालकों द्वारा यातायात के नियमों का सही ढंग से पालन करने एवं सुरक्षा उपायों को अपनाने पर वाहन से होने वाली दुर्घटनाओं पर काफी हद तक अंकुश लगाया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

➤ सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अस्पतालों में भर्ती होने वाले और उनसे होने वाली मृत्यु का प्रमुख कारण क्या है?
2. सड़क दुर्घटनाओं को रोकने का प्रमुख उपाय क्या है?
3. सड़क दुर्घटनाओं में मरने वाले लोगों पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।
4. वाहन स्वामियों की सुरक्षा हेतु कोई पाँच सुरक्षा नियम बताइए।
5. यातायात के नियमों का पालन करने से क्या लाभ है?
6. यातायात के नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड के क्या प्राविधान हैं?
7. वाहन चालन के पूर्व किन नियमों का पालन करना चाहिए?

●●●

10 गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण

वस्तुतः मानव सभ्यता को फलीभूत होने का मुख्य आधारबिन्दु प्राकृतिक संसाधन पर ही निर्भर है। परन्तु 'जल' एक ऐसा प्रकृति प्रदत्त उपहार है जिसका मानव सभ्यता के पास दूसरा विकल्प नहीं है। जीवन में जल का महत्त्व इसी से समझा जा सकता है कि बड़ी-बड़ी मानव-सभ्यता (वैदिक सभ्यता, सिन्धु सभ्यता, मेसोपोटामिया, मिस्र सभ्यता आदि) नदियों के किनारे ही फली-फूली और विकसित हुयी हैं। जल की अन्यतम स्रोत नदियों की उपयोगिता और रख-रखाव को उपेक्षित नहीं किया जा सकता है। हमारी सभ्यता और संस्कृति की अतुलनीय निधि, भारत भूमि की अन्यतम् पहचान, पवित्र और अमृत पयस्विनी माँ गंगा के महत्त्व को तो विशेष रूप से विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

पुराणों में उल्लिखित गंगा नदी को भगीरथ के कठोर तप से स्वर्ग से धरती पर अवतरित कराना बताया गया है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जिले के सतोपथ हिमानी से निकली अलकनन्दा और गंगोत्री गोमुख हिमानी ग्लेशियर से निकली भागीरथी नदी जब देवप्रयाग में आकर मिलती हैं तब संयुक्त रूप से गंगा के नाम से जानी जाती हैं। यह भारत की सबसे लम्बी नदी है। इसकी कुल लम्बाई 2525 किमी है जिसमें से 454 किमी इनका प्रवाह क्षेत्र बांग्लादेश में विस्तारित है। गंगा नदी का प्रवाह तंत्र अपनी प्रमुख सहायक नदियों–यमुना, रामगंगा, घाघरा, गोमती, सोन आदि के साथ भारत के पाँच राज्यों उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और झारखण्ड होते हुये बांग्लादेश से बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। उत्तराखण्ड राज्य में यह हरिद्वार जिले से मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती हुई बिजनौर जिले से उत्तर प्रदेश में प्रवेश करती है। अपने प्रवाह क्षेत्र में सबसे अधिक भू-भाग उत्तर प्रदेश का ही आबाद करती है। उत्तर प्रदेश के 28 जिले से होकर जिसमें से प्रमुखतः कन्नौज, कानपुर, इलाहाबाद (प्रयागराज), वाराणसी से बहती हुई भारतीय सभ्यता और संस्कृति को समृद्ध करने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। परन्तु माँ गंगा से पोषित एक अमूल्य संस्कृति और सभ्यता को प्राप्त करने के बावजूद मानव-सभ्यता इनके रख-रखाव एवं स्वच्छता के प्रति उदासीन बनी रही है।

'औद्योगिक क्रांति के बाद बढ़ते हुए औद्योगिकीकरण, नगरीकरण एवं शहरीकरण के कारण औद्योगिक एवं घरेलू अपशिष्टों के साथ-साथ सीवरों की जल निकासी भी नदियों से जोड़ दी गयी है', जिससे माँ गंगा की अविरल धारा दिन-ब-दिन (दिन-प्रतिदिन) प्रदूषित होती जा रही है।

संयुक्त राष्ट्र के आह्वान पर जल संरक्षण, पर्यावरण स्वच्छता एवं नदियों की सुरक्षा पर वैश्विक स्तर पर कई कार्यक्रम शुरू किये गये जिससे प्रभावित होकर भारत सरकार ने भी नदियों के संरक्षण के लिए उत्कृष्ट कार्यक्रम प्रारम्भ किया और विशेष कर गंगा नदी में व्याप्त प्रदूषण के उपशमन और जल गुणवत्ता में सुधार करने के उद्देश्य से 1985 ई0 में 'केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण' और 'गंगा परियोजना निदेशालय' का गठन किया गया है जिसके माध्यम से 14 जनवरी, 1986 को 'गंगा कार्य योजना' (GAP) का शुभारम्भ किया गया, दो चरणों में लागू की गई 'गंगा कार्य योजना' पर हजारों करोड़ रुपये व्यय करने के बाद भी बेहतर परिणाम प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल पायी। पूर्व योजनाओं की समीक्षा के बाद और प्राप्त आंकड़ों के आधार पर केन्द्र सरकार द्वारा 31 दिसम्बर, 2009 को 'मिशन क्लीन गंगा' प्रारम्भ करने की घोषणा की गई। इसी संदर्भ में व्यापक पैमाने पर कार्य करने के लिये प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण' का गठन भी किया गया। इस योजना से भी आशाजनक परिणाम प्राप्त नहीं होने पर केन्द्र सरकार ने 'नमामि गंगे एकीकृत गंगा संरक्षण मिशन' लागू किया और इस योजना में घोषित प्रमुख बिन्दुओं को धरातलीय स्तर पर प्राप्त करने के लिये लगातार प्रयास किया जा रहा है।

13 मई, 2015 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी की अध्यक्षता में सम्पन्न केन्द्रीय मंत्रि-मण्डल की बैठक में केन्द्र सरकार के महत्त्वाकांक्षी फ्लैगशिप कार्यक्रम **'नमामि गंगे'** को स्वीकृति प्रदान की गयी जिसका मुख्य उद्देश्य गंगा नदी को स्वच्छ और संरक्षित करने सम्बन्धी प्रयासों को व्यापक रूप से समेकित करना है। यह कार्यक्रम 'राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण' (NGRBA) के अन्तर्गत ही क्रियान्वित हो रहा है। 'नमामि गंगे' कार्यक्रम के प्रथम चरण में 05 वर्षों हेतु 20 हजार करोड़ रुपये का बजट आवंटित किया गया जो पिछले 30 वर्षों में हुए कुल व्यय से चार गुना अधिक था, बजट 2019-20 में 'नमामि गंगे' मिशन के लिए आवंटित धनराशि में 750 करोड़ रुपये आवंटित किया गया है जबकि 2018-19 में यह धनराशि 2250 करोड़ रुपये रही है।

गंगा नदी संरक्षण के लिए इस वृहद् योजना में पूर्व योजनाओं की तुलना में क्रियान्वयन के प्रारूप में एक बड़ा परिवर्तन किया गया है जिसके अन्तर्गत उत्कृष्ट और सतत् परिणाम प्राप्त करने लिए गंगा नदी के तट पर रहने वाली जन-आबादी को भी इस परियोजना में शामिल करने के लिए विशेष प्रयास किया गया है। इसके साथ ही इस कार्यक्रम में राज्यों के साथ-साथ जमीनी स्तर के संस्थानों यथा–

शहरी स्थानीय निकायों और पंचायती राज संस्थानों को भी क्रियान्वित करने के स्तर पर शामिल किये जाने का प्रयास किया गया है जिसे 'स्वच्छ गंगा हेतु राष्ट्रीय मिशन' (NMCG) तथा इसके अनुषंगी राज्य संगठनों अर्थात् 'राज्य कार्यक्रम प्रबन्ध समूह' (SPMG) द्वारा क्रियान्वित किया जाएगा।

'नमामि गंगे' कार्यक्रम के क्रियान्वयन को बेहतर बनाने के लिए परियोजना पर्यवेक्षण हेतु त्रिस्तरीय प्रणाली प्रस्तावित है–राष्ट्रीय स्तर पर कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में उच्च स्तरीय कार्यबल, राज्य स्तर पर मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य स्तरीय समिति, जनपद स्तर पर जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में जिला स्तरीय समिति का गठन किया जाना है जिसकी सहायता 'राज्य कार्यक्रम प्रबन्ध समूह' (SPMG) के द्वारा की जायेगी।

केन्द्र सरकार ने घोषित किया है कि त्रिस्तरीय कार्यप्रणाली का सम्पूर्ण वित्तीय-प्रबन्धन वह स्वयं करेगी जिससे कार्यक्रम की प्रगति, त्वरित कार्यान्वयन और उत्कृष्ट परिणाम को प्राप्त करने में गतिशीलता आ सके। पिछली गंगा कार्ययोजनाओं के असफल परिणामों को संज्ञान में लेते हुए केन्द्र-सरकार द्वारा न्यूनतम 10 वर्षों की अवधि तक इस कार्यक्रम के परिचालन और परिसम्पत्तियों के प्रबंधन की व्यवस्था स्वयं करने का निर्णय लिया गया है। इसके अतिरिक्त गंगा नदी के अति प्रदूषित स्थलों के लिए 'सार्वजनिक निजी भागीदारी' (PPP) और 'विशेष प्रयोजन वाहन व्यवस्था' को अपनाया जाना भी प्रस्तावित है। गंगा को प्रदूषित होने से अतिरिक्त बचाव के लिए केन्द्र सरकार द्वारा 'प्रादेशिक सैन्य इकाई' की तर्ज पर 'गंगा ईको टास्क फोर्स' की चार बटालियन को भी स्थापित करने की योजना है और साथ ही प्रदूषण पर पूर्ण नियंत्रण और नदी के संरक्षण पर कानून बनाने के लिए भी अलग से विचार किया जा रहा है।

केन्द्र सरकार द्वारा की गई प्रशासनिक एवं वित्तीय प्रबंधन जैसे तथ्यों को देखते हुए कहा जा सकता है कि उसके द्वारा लागू की गयी परियोजनाओं और एकीकृत संरक्षण के प्रयासों से माँ गंगा की पवित्र-पावन, अविरल जल धारा अपने विलुप्त हो रहे वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करने में अवश्य सफल होंगी किन्तु इसको सफल बनाने के लिए जन सहभागिता की भी अति आवश्यकता है। एक जिम्मेदार नागरिक होने के कारण यह हम सबका उत्तरदायित्व होता है कि अनुच्छेद-51 'क' में उल्लिखित मौलिक कर्तव्यों के अनुपालन में स्वयं भी माँ गंगा की स्वच्छता के प्रति सदैव सजग रहें। जैसे कि मुख्य पर्वों पर गंगा में मूर्ति विसर्जन, शव विसर्जन, पूजा सामग्री का विसर्जन, गंगा पर्यटन के समय खाद्य एवं अपशिष्ट पदार्थ और पॉलीथीन आदि को फेंकना, घरेलू और औद्योगिक अपशिष्टों को गंगा नदी में फेंकना जैसे इत्यादि ऐसे कार्य हैं जिस पर हम स्वयं ही नियंत्रण करके माँ गंगा की स्वच्छता जैसे महान कार्य में अपना सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण' शीर्षक पर एक निबन्ध लिखिए।
2. गंगा के प्रवाह क्षेत्र को संक्षेप में वर्णित कीजिए।
3. गंगा नदी को किस प्रकार प्रदूषण से मुक्त किया जा सकता है? व्याख्या कीजिए।
4. गंगा को स्वच्छ रखने के लिए कौन-कौन से कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं?
5. 'नमामि गंगे' कार्यक्रम पर एक लेख लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गंगा जी को धरती पर किसने अवतरित किया?
2. गंगा नदी का उद्गम स्थल कहाँ है?
3. गंगा नदी उत्तर प्रदेश के कितने शहरों से गुजरती हैं? उनके नाम लिखें।
4. गंगा की सहायक नदियों के नाम लिखिए।
5. गंगा नदी की कुल लम्बाई कितनी है?
6. गंगा नदी के प्रदूषित होने का मुख्य कारण क्या है?
7. गंगा कार्य योजना का शुभारम्भ कब किया गया?
8. 'केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण' का गठन कब किया गया?
9. 'नमामि गंगे' का प्रमुख उद्देश्य क्या है?
10. 'मिशन क्लीन गंगा' प्रारम्भ करने की घोषणा कब हुई?

●●●

परिशिष्ट

टिप्पणियाँ

◆ भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?

महसूल = किराया। **प्रतिदिन** = प्रतिक्षण। **चुपसाधि** = सुस्त या निष्क्रिय होकर। **उपकारी** = हितैषी। **मसल** = कहावत। **कतवार** = कूड़ा। **ताजी** = अरबी घोड़ा। **मर्दुमशुमारी** = जनगणना। **तिहवार** = त्योहार, पर्व। **फलानी** = फलाँ, अमुक, निर्दिष्ट व्यक्ति या वस्तु। **आयुष्य** = आयु। **लंकलाट** = एक महीन सूती कपड़ा (लांग क्लाथ का बिगड़ा हुआ रूप)। **अंगा** = अंगरखा, कुर्ता। **म्युनिसिपालिटी** = नगर पालिका। **विलायत** = विदेश।

◆ महाकवि माघ का प्रभात-वर्णन

सप्तर्षि = सात ऋषियों गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप और अत्रि के नाम पर सात तारों का मण्डल। **अंशुमाली** = सूर्य। **अवतीर्ण** = उतरना। **तिमिर** = अंधकार। **पराभव** = पराजित। **अधोभाग** = नीचे का हिस्सा। **जुवाँ** = बैलगाड़ी का वह भाग। **दानव** = राक्षस। **आघात** = प्रहार, चोट। **प्रभा** = कान्ति। **दीप्ति** = प्रकाश। **दिग्वधू** = दिशाओं रूपी वधू। **तुल्यता** = समानता। **लावण्यमय** = सुंदरता-युक्त। **पयोनिधि** = समुद्र। **सुता** = पुत्री। **अल्पवयस्क** = छोटी आयु, किशोर। **मिस** = बहाने। **समधिक** = अत्यधिक। **उच्छेद** = नाश। **दिननाथ** = सूर्य। **आप्यायित** = प्रसन्न। **श्री** = लक्ष्मी, शोभा। **अतिशायिनी** = प्रिया। **भाष्कर** = सूर्य।

◆ भारतीय साहित्य की विशेषताएँ

आश्रम चतुष्टय = ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास। **अन्यान्य कलाओं** = और कलाएँ जैसे वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत, काव्य आदि। **भिजई** = भिगोई। **आदर्शात्मक साम्य** = आदर्शों में समता, लक्ष्यगत समानता। **एकेश्वरवाद** = ईश्वर एक है इस सिद्धान्त को माननेवाला, दार्शनिकवाद। **ब्रह्मवाद** = ब्रह्म की सत्ता स्वीकार करने का सिद्धांत अर्थात् यह मानना कि ब्रह्म के अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है। **ऋचाओं** = ऋग्वेद के मंत्र। **परोक्ष** = अलौकिक या अप्रत्यक्ष (संसार की नहीं प्रत्युत अन्य लोक की)। **ऐहिक** = लौकिक, सांसारिक। **गुरुडम** = आचार्यत्व (इसका प्रयोग अच्छे अर्थ पर नहीं होता)। **वसन्तश्री** = वसंत की शोभा। **संश्लिष्ट** = मिला-जुला। **उद्रेक** = अभिव्यक्ति, जागृति करना। **पिंगल** = छन्द शास्त्र। **मार्मिक** = हृदयस्पर्शी। **पताका** = ध्वजा। **सार्थकता** = महत्त्व। **अवलम्ब** = सहारा। **साम्य** = समता। **बिजई** = विजयी। **मायाजन्य** = माया से उत्पन्न। **तत्सम्भव** = उससे उत्पन्न।

◆ आचरण की सभ्यता

ज्योतिष्मती = ज्योतिर्मयी, प्रकाशयुक्त। **निघण्टु** = वैदिक-शब्द-कोष। **मानसोत्पन्न** = मन से उत्पन्न। **क्लेशातुर** = दुःख से व्याकुल। **उन्मदिष्णु** = उन्मादयुक्त, मतवाला। **अश्रुतपूर्व** = जो पहले न सुना गया हो। **अंजील** = ईसाइयों का धर्मग्रंथ। **रामरोला** = व्यर्थ का शोरगुल। **रसूल** = ईश्वर का दूत। **संभूत** = उत्पन्न। **रेडियम** = एक प्रकाशमय धातु। **नेती** = हठयोग की एक क्रिया, इसमें

पेट में कपड़े की पतली पट्टी डालकर आँतें साफ करते हैं। **त्रिपीठक** (त्रिपिटक) = बौद्धों का मूल ग्रंथ जो विनय, सुत्त और अभिधम्म तीन पिटकों (भागों) में विभक्त है। **राजत्व** = राज पद जैसी गरिमा। **कङ्गाल** = निर्धन। **मृदु** = मीठा। **अन्न** = अनाज। **दीक्षा** = शिष्यत्व। **अलापना** = शास्त्रीय विधि के अनुसार गीत गुंजन।

◆ शिक्षा का उद्देश्य

पुरुषार्थ = मनुष्य के जीवन का प्रधान उद्देश्य, वह वस्तु या प्रयोजन जिसकी प्रवृत्ति या सिद्धि के लिए मनुष्य को उद्योग करना चाहिए। पुरुषार्थ चार माने गये हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। **प्रतीयमान** = जिससे प्रतीत हो रही हो, जान पड़ता हुआ, जो व्यंजना द्वारा प्रकट हो रहा हो। **वर्णाश्रम** = वर्ण और आश्रम। **मार्क्सवाद** = कार्ल मार्क्स के समाज दर्शन पर आधारित सिद्धांत। **संश्रय** = आधार, आश्रय। **अविद्यावशात्** = अज्ञान के कारण। **आत्मसाक्षात्कार** = आत्मा का अपरोक्ष ज्ञान। **दृश्यमान** = जो देखा जा रहा हो। **मुदिता** = हर्ष, आनन्द, चित्त की वह अवस्था जिसमें दूसरे का सुख देखकर सुख होता है। **निष्कामिता** = मन में वासनाएँ या कामनाएँ न रहने की स्थिति। **परार्थ साधन** = परोपकार। **लोकसंग्रह** = लोक कल्याण या जनता की सेवा। **विरत करना** = हटाना। **युगपत्** = साथ-साथ। **समष्टि** = सम्प्रभुता संपूर्णता, **हमारे कर्त्तव्यों की डोर.....पहुँचती है** = हमें अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह अपने पूर्वजों से लेकर आनेवाली पीढ़ियों तक करना चाहिए अर्थात् पूर्वजों के गुणों को ग्रहण और आनेवाली संतान के लिए कर्त्तव्यों की प्रेरणा देनी चाहिए। **अनुसूया** = दूसरे के गुणों में दोष ढूँढ़ने की वृत्ति का न होना या ईर्ष्या का अभाव। **स्वैरिणी** = स्वेच्छाचारिणी। **ऐहिक** = इस लोक से संबंधित। **आमुष्मिक** = दूसरे लोक से संबंध रखनेवाला। **अभिभूत** = वश में किया हुआ, आक्रांत। **घनिष्ठ** = गहरा। **कौटुम्बिक** = पारिवारिक। **आचारावलियाँ** = आचारों का समूह। **श्रेयस्कर** = उचित। **अभिलषित** = इच्छित, वांछित। **कामोद्दीपन** = काम को बढ़ाना।

◆ आनन्द की खोज, पागल पथिक

कलपते हुए = विलाप करते हुए। **आनन्द-कन्द-मूलक** = आनन्द के भँडार को देनेवाली। **विश्ववल्लरी** = संसाररूपी लता। **स्तब्ध** = गतिहीन। **ब्रह्माण्ड** = संपूर्ण विश्व। **अवाक्** = वाणी रहित, मूक, आश्चर्य से चुप। **विदीर्ण हृदय** = टूटा, शोकग्रस्त। **साख भर रहा है** = गवाही दे रहा है। **सखेद** = दुःख अथवा विवशता के साथ। **घटाकार** = घड़े के आकार का। **नव्यता** = नवीनता। **नितांत** = सर्वथा, पूर्णतः। **राम-पोटरिया** = पोटली के लिए लेखक द्वारा प्रयुक्त विशिष्ट शब्द अर्थात् पथिक का थोड़ा-सा निजी सामान। **सिर पर हाथ रखनेवाला** = ढाँढस बँधाने वाला, सहायता करने वाला।

◆ अथातो घुमक्कड़-जिज्ञासा

परिपाटी = पद्धति। **जिज्ञासा** = जानने की इच्छा। **छः शास्त्रों** (दर्शनों) = मीमांसा, वेदांत, न्याय, वैशेषिक, सांख्य और योग। **छः आस्तिक ऋषि** = छः दर्शनों के रचयिता। **ईश्वरवादी ऋषि** = जैमिनी, बादरायण, गौतम, कणाद, कपिल और पतंजलि। **शकों-हूणों** = भारतवर्ष के इतिहास में प्राचीनकालीन आक्रमणकर्ता। **समुन्दर के खारे पानी और हिंदू धर्म में वैर** = समुद्र यात्रा को हिन्दू धर्म के विरुद्ध मानना। **करतल भिक्षा तरुतल वास** = हाथ में भिक्षा और वृक्ष के नीचे सोना। **दिग-अम्बर** = दिशाएँ (आकाश) ही जिसके वस्त्र हों, अर्थात् नग्न। **मुक्तबुद्धि** = शास्त्रों से स्वतंत्र रहकर सोचनेवाला। **स्थावर** = स्थिर, न चलनेवाला। **जंगम** = चलने-फिरनेवाला। **अन्योन्याश्रय** = एक दूसरे पर निर्भर। **नवीन संस्करण** = आधुनिक रूप। **दिवांध** = दिन में भी अंधे। **निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः** = जो सत-रज-तम (तीनों गुणों) से रहित मार्ग पर विचरण करता है (योगी या घुमक्कड़) उसके लिए न कोई नियम होता है और न कोई रोक। **रोष** = क्रोध; गुस्सा। **जिज्ञासा** = जानने की इच्छा; उत्सुकता। **छहशास्त्र** = मीमांसा, न्याय, वेदान्त, वैशेषिक, साँख्य और योग। **तरूतल** = वृक्ष के नीचे। **वास** = रहना; सोना। **दिगम्बर** = दिशाएं ही जिनके वस्त्र हैं। **दिवांध** = दिन का अन्धा। **काफले** = समूह। **दिग्दर्शक** = दिशा का बोध कराने वाला (मन्त्र)। **श्वेताम्बर** = सफेद वस्त्रों वाला; श्वेत हैं वस्त्र जिसके।

◆ गेहूँ बनाम गुलाब

शरीर की आवश्यकता = भूख, प्यास, कामुकता आदि। **मानसिक वृत्ति** = सुरक्षा, आदर्शवादिता, सौन्दर्यानुभूति, रसात्मकता आदि। **कोने में डालना** = उपेक्षा करना। **तुरही** = फूँक कर बजाने का एक पतले मुँह का बाजा जो दूसरे सिरे की ओर बराबर चौड़ा होता जाता है। **उच्छ्वसित** = प्रफुल्ल, पूरा खिला हुआ। **समिधा** = यज्ञ की लकड़ी। **चिर बुभुक्षा** = सदा रहनेवाली भूख। **उटोपिया** = अप्राप्य विचार, आदर्श का सिद्धांत जो पूर्णता का प्रतीक हो पर हो काल्पनिक। **हस्तामलकवत्** = हाथ पर रखे आँवले की तरह, बिल्कुल स्पष्ट। **स्खलित हो गयी** = भंग होकर नीचे गिर गयी। **शौके दीदार है, तो नजर पैदा कर** = यदि दर्शन करने का शौक है तो अनुकूल दृष्टि उत्पन्न कीजिए। **मानस** = हृदय; मन। **क्षुधा** = भूख। **पिपासा** = प्यास। **शनैः शनैः** = धीरे-धीरे। **यंत्रणाएँ** = यातनाएँ, दुःख। **सोलह आने** = पूरी तरह। **मेनका** = एक अप्सरा, जिसने विश्वामित्र का तप भंग कर दिया था; शकुन्तला की माता। **उर्वशी** = पुरूरवा की पत्नी; इन्द्रलोक की प्रसिद्ध अप्सरा।

◆ सड़क सुरक्षा

विश्व = संसार। **जागरूक** = सजग, सावधान। **विकसित देश** = जिन देशों का विकास हो चुका है। **तीव्र** = तेज। **भंग** = टूटना, हटना। **अर्थदण्ड** = जुर्माना। **निरस्तीकरण** = रद्द करना। **खासकर** = विशेष रूप से। **गति** = चाल। **परिचित**= अवगत। **तहत** = अन्तर्गत। **हद** = सीमा। **अंकुश** = नियन्त्रण।

◆ गंगा की स्वच्छता एवं संरक्षण

प्रदत्त = दिया हुआ, **उपहार** = भेंट, **विस्मृत** = भूलना या भुलाया, **कठोर तप** = कठिन तपस्या, **धरती** = पृथ्वी, **प्रवाह** = बहाव, **घरेलू अपशिष्ट** = घर का कूड़ा-करकट, **अविरल धारा** = निरन्तर बहने वाली धारा, **वैश्विक स्तर** = विश्व स्तर, **प्रयास** = प्रयत्न, **वृहद्** = बड़ी, **वित्तीय प्रबन्धन** = धन प्रबन्धन, **तर्ज पर** = आधार पर, **पावन** = पवित्र, **सजग** = जागरूक, **पर्वों** = त्योहारों, **विलुप्त हो रही** = गायब हो रही।

●●●

काव्य

यह संकलन

साहित्य समाज का दर्पण है। युग और युगधर्म साहित्य में बिम्ब और प्रतिबिम्ब भाव से प्रतिभाषित होता है। कवि और युग एक-दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं। इसीलिए कहा जाता है कि कवि शून्य में रचना नहीं करता है, वह युग की परिस्थितियों से प्रभावित होता है और अपनी कथनी से युग को प्रभावित भी करता है। कवि जाने अथवा अनजाने में अपने वातावरण से प्रभावित भी होता है और यदि कवि सशक्त होता है तो वह स्वयं समाज को भी प्रभावित करता है। कवि भी समाज का ही एक अंग है, अतः वह जो कुछ लिखता है, उस पर समाज का प्रभाव स्वाभाविक है। कवि एक ओर युग को देता है, तो दूसरी ओर लेता भी है; क्योंकि कवि इसी संसार का प्राणी है। अतः किसी कवि का मूल्यांकन करने से पूर्व उस युग का अध्ययन करना आवश्यक है। इसीलिए प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक में कवियों की रचनाओं के संकलन के साथ ही उनके युगों से सम्बन्धित सामग्री भी भूमिका के अन्तर्गत दी गयी है।

इस संकलन में कालक्रम से, प्रमुख कवियों की महत्त्वपूर्ण रचनाएँ संकलित करते हुए मध्य युग के कुछ अन्य प्रतिनिधि कवियों–सेनापति, देव और घनानन्द की रचनाओं का समावेश 'विविधा' के अन्तर्गत किया गया है। सेनापति मध्य युग के एकमात्र ऐसे कवि हैं, जिन्होंने प्रकृति को अपनी काव्य-रचना का स्वतन्त्र विषय बनाया है और विभिन्न ऋतुओं के बड़े ही सरस वर्णन उपस्थित किये हैं। देव उन कवियों की श्रेणी में आते हैं जिनमें उच्चकोटि के आचार्यत्व के साथ उसी स्तर की काव्य-प्रतिभा भी विद्यमान है। घनानन्द उत्तर-मध्य युग के विशिष्ट कवि हैं, जिन्होंने किसी आश्रयदाता की रुचि का अनुसरण करते हुए काव्य-रचना नहीं की, वरन् मन की सहज प्रेरणा से कविताएँ लिखी हैं।

हिन्दी कवियों की रचनाओं का चयन करते हुए इस बात का बराबर ध्यान रहा है कि संकलित रचनाएँ छात्रों की मानसिक अवस्था, बौद्धिक क्षमता और ग्रहण-शक्ति के अनुरूप हों। कक्षा-11 के छात्र-छात्राएँ प्रायः पन्द्रह से सत्रह वर्ष की अवस्था के होते हैं। अतः उनकी अवस्था के अनुरूप सहज बोधगम्य रचनाएँ ही एकत्र की गयी हैं। किशोर-मन वयःसन्धि की स्थिति में जो कुछ सोचता-विचारता है, जैसी इच्छाओं, आकांक्षाओं को अपने मन में सँजोता है, जैसे स्वप्न देखता और कल्पनाएँ करता है, उन्हीं के अनुरूप रचनाओं का संकलन यहाँ किया गया है। इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि संकलित रचनाओं द्वारा युवा पीढ़ी के मन का संस्कार हो, उसके चरित्र का निर्माण हो, अपने देश की जीवन्त परम्पराओं से उसका परिचय हो, उसके मन में सौन्दर्य-भावना का विकास हो और वह आधुनिक जीवन-मूल्यों के प्रति सजग हो सके।

प्रत्येक कवि-परिचय के अन्तर्गत उसका जीवन-परिचय, काव्यगत विशेषताएँ, रचनाएँ एवं भाषा-शैली का विवेचन अनुच्छेदवार किया गया है। पाठ के अन्त में प्रश्न-अभ्यास दिया गया है। सम्भावित प्रश्नों और अवतरणों की व्याख्या का अभ्यास कराने से छात्रों की लेखन-शक्ति और रचनात्मक प्रतिभा का विकास होगा। पाठ्यक्रम में निर्धारित रसों, छन्दों और अलङ्कारों का परिचय पुस्तक के अन्त में दिया गया है। इसके बाद टिप्पणियाँ हैं जिनमें विभिन्न रचनाओं के आवश्यक सन्दर्भ दिये गये हैं।

आशा है, हमारा यह प्रयास विद्यार्थियों और अध्यापकों दोनों को रुचिकर होगा तथा हिन्दी कविता के अध्ययन-अध्यापन में भी लाभप्रद सिद्ध होगा।

●●●

भूमिका

● काव्य क्या है?

काव्य वह छन्दोबद्ध एवं लयात्मक साहित्यिक रचना है, जो श्रोता या पाठक के मन में भावात्मक आनन्द की सृष्टि करती है। व्यापक अर्थ में काव्य से तात्पर्य सम्पूर्ण गद्य एवं पद्य में रचित भावात्मक सामग्री से है, किन्तु संकुचित अर्थ में इसे 'कविता' का पर्याय समझा जाता है। काव्य के दो पक्ष होते हैं—भाव-पक्ष और कला-पक्ष। भाव-पक्ष में काव्य के समस्त वर्ण्य-विषय आ जाते हैं और कला-पक्ष में वर्णन-शैली के सभी अंग सम्मिलित हैं। ये दोनों पक्ष एक-दूसरे के सहायक और पूरक होते हैं। भाव-पक्ष का सम्बन्ध काव्य की वस्तु से है और कला-पक्ष का सम्बन्ध आकार-शैली से है। वस्तु या आकार एक-दूसरे से पृथक् नहीं हो सकते, कोई वस्तु आकारहीन नहीं हो सकती। वैसे तो व्यापक दृष्टि से भाव-पक्ष और कला-पक्ष दोनों ही रस से सम्बन्धित हैं; क्योंकि कला-पक्ष के अन्तर्गत जो अलङ्कार, लक्षणा, व्यञ्जना और रीतियाँ हैं, वे सभी रस की पोषक हैं, तदापि भाव-पक्ष का रस से सीधा सम्बन्ध है। वह उसका प्रधान अंग है, कला-पक्ष के विषय उसके सहायक और पोषक हैं।

काव्य के दो भेद किये जा सकते हैं—श्रव्य काव्य एवं दृश्य काव्य। श्रव्य काव्य में रसानुभूति पढ़कर या सुनकर होती है, जबकि दृश्य काव्य में रसानुभूति अभिनय एवं दृश्यों के द्वारा ही सम्भव है। श्रव्य काव्य के भी दो उपभेद हैं—प्रबन्ध काव्य एवं मुक्तक काव्य। प्रबन्ध काव्य में किसी कथा का आश्रय लेकर रचना की जाती है, जबकि मुक्तक काव्य में स्वतन्त्र पदों के रूप में भावाभिव्यक्ति की जाती है। प्रबन्ध काव्य के भी दो प्रकार हैं—महाकाव्य और खण्डकाव्य।

● काव्य साहित्य का विकास

प्रत्येक भाषा का साहित्य उस भाषा को बोलनेवाले समाज का सजीव चित्र होता है। साथ ही, वह उस समाज को बदलने और उसको प्रगति की प्रेरणा देने का समर्थ साधन भी होता है। उस समाज को पृष्ठभूमि में रख कर ही उस भाषा के साहित्य के इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है। साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियाँ, विभिन्न काव्य-धाराएँ एवं विभिन्न युग एक-दूसरे पर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हुए अविच्छिन्न धारा में प्रवाहित होते हैं। इसी दृष्टि से हम हिन्दी काव्य साहित्य के स्वरूप एवं विकास का संक्षिप्त सर्वेक्षण निम्न पंक्तियों में करेंगे—

हिन्दी साहित्य मूलतः खड़ीबोली के परिनिष्ठित रूप का साहित्य है, पर इसकी परिधि में मैथिली, अवधी, ब्रज, राजस्थानी जैसी साहित्यिक बोलियों का साहित्य भी आ जाता है। इन सभी बोलियों में हमें एक जैसी ही अनुभूति और विचारधारा का साहित्य मिलता है। समय-समय पर साहित्य के विषय बदलते रहे और विभिन्न युगों में हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ प्रधान रहीं। वीरगाथा काल में राजस्थानी, पूर्व-मध्यकाल में अवधी तथा उत्तर-मध्यकाल में ब्रजभाषा की प्रधानता रही। आधुनिक युग मूलतः खड़ीबोली का युग है।

गत दस शताब्दियों में हरियाणा प्रान्त से लेकर मध्य प्रदेश तक तथा राजस्थान से बिहार प्रदेश तक का समाज जो कुछ अनुभव करता रहा है, जो कुछ भी सोचता रहा है, जो उसकी आशा-निराशा और आकांक्षाएँ रही हैं, उन सब की अभिव्यक्ति ही हिन्दी साहित्य है। इस साहित्य में भारत की अखण्ड सामाजिक संस्कृति के साथ ही जनपदीय लोक-संस्कृतियों का प्रतिबिम्ब भी है।

अन्य भाषाओं की तरह हिन्दी का स्वरूप भी परिवर्तित होता रहा है। सातवीं शती के उत्तरार्द्ध से अपभ्रंश से विकसित होती हुई हिन्दी भाषा का साहित्य उपलब्ध होने लगता है। भाषा के स्वरूप में परिवर्तन होने पर हिन्दी के आदिकाल में अपभ्रंश साहित्य की प्रवृत्तियाँ चलती रही हैं। अतः अपभ्रंश साहित्य का सामान्य लेखा-जोखा हिन्दी साहित्य की गतिविधि समझने के लिए आवश्यक है। अपभ्रंश में साहित्य की बहुविध प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं—धर्म, शृंगार, भक्ति, वीर-भावना तथा अनेक प्रकार की रहस्य साधनाएँ इस साहित्य के प्रमुख विषय रहे हैं। एक ओर जैन आचार्यों और कवियों का धर्म एवं नीतिपरक साहित्य मिलता है, तो दूसरी ओर बौद्ध सिद्धों की रहस्यमय एवं गुह्य साधना की वाणी। बौद्ध सिद्धों, नाथों एवं जैन आचार्यों की रहस्य-गुह्य-योग-साधना और धार्मिक सिद्धान्तों की रचनाएँ मूलतः साहित्येतर हैं, पर उस युग के साहित्य को समझने के लिए अपरिहार्य हैं। नाथ साहित्य में भक्ति का पूर्वाभास भी होने लगता है। इस काल में कविता का प्रवाह अवरुद्ध नहीं था। जैन कवियों की रचनाएँ कविता की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। शृंगार रस का अच्छा विरह-काव्य भी इस युग में मिलता है। 'प्रबन्ध चिन्तामणि', 'कुमारपालचरित' जैसी महान् रचनाएँ और पुष्पदन्त, हेमचन्द्र जैसे श्रेष्ठ कवि भी इसी युग में हुए। इस प्रकार मूल हिन्दी साहित्य वस्तुतः अपभ्रंश साहित्य से ही विकसित हुआ है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन सदैव ही समस्यामूलक एवं विवादग्रस्त रहा है। अपभ्रंश के अञ्चल से हिन्दी के उदय के अनन्तर उसमें साहित्य-सृजन का क्रम चलता रहा है। एक सहस्र वर्षों के रचनाकाल को किस आधार से विभाजित किया जाय, निःसन्देह एक समस्या है। डॉ० ग्रियर्सन, मिश्र-बन्धु, डॉ० रामकुमार वर्मा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि विद्वानों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास का अलग-अलग काल-विभाजन किया है, जिसमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के काल-विभाजन को अधिकतर विद्वान् मानते हैं, जो उचित प्रतीत होता है। डॉ० श्यामसुन्दर दास तथा डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी आचार्य शुक्ल के काल-विभाजन को ही स्वीकृति दी है। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने डॉ० ग्रियर्सन तथा मिश्र-बन्धुओं के काल-विभाजन का समीकरण किया है। उन्होंने अपने काल-विभाजन को काल-क्रम से स्थिर किया है और प्रवृत्तियों के आधार पर उसका नामकरण किया है। शुक्लजी द्वारा निर्धारित काल-विभाजन इस प्रकार है—

1. **आदिकाल (वीरगाथाकाल) — संवत् 1050 वि० से 1375 वि० तक।**
2. **पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) — संवत् 1375 वि० से 1700 वि० तक।**
3. **उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) — संवत् 1700 वि० से 1900 वि० तक।**
4. **आधुनिककाल (गद्य काल) — संवत् 1900 वि० से अब तक।**

शुक्लजी का उक्त काल-विभाजन प्रामाणिक है। इसमें काव्य-प्रणयन शैली तथा ग्रन्थों की प्रसिद्धि को आधार माना गया है। वीर रस-परक रचनाओं की प्रधानता के कारण आदिकाल को वीरगाथाकाल कहा गया है। भक्ति-काव्य के प्राधान्य के कारण पूर्व-मध्यकाल को भक्तिकाल का नाम दिया गया है। शृङ्गार तथा लक्षण ग्रन्थों के बाहुल्य के कारण उत्तर-मध्यकाल को रीतिकाल और गद्य-रचना की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होने के कारण आधुनिककाल को गद्य-काल नाम दिया गया है।

आदिकाल

● नामकरण

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक और इतिहासकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आदिकाल का समय सन् 993 ई० (संवत् 1050 वि०) से 1318 ई० (संवत् 1375 वि०) तक माना था और उसे वीरगाथा काल की संज्ञा दी थी, क्योंकि वे इस अवधि में वीरगाथाओं की रचना-प्रवृत्ति को प्रधान मान कर चले थे। किन्तु, परवर्ती विद्वान् 769 ई० से 14वीं शताब्दी के मध्य तक की अवधि को हिन्दी साहित्य का आदिकाल ही कहते हैं। आदिकाल ऐसा नाम है, जिसे किसी-न-किसी रूप में सभी इतिहासकारों ने स्वीकार किया है। भाषा की दृष्टि से हम इस काल के साहित्य में हिन्दी के आदि रूप का बोध पा सकते हैं, तो भाव की दृष्टि से हम इसमें भक्तिकाल

प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

- **चन्दबरदायी**—पृथ्वीराज रासो।
- **नरपति नाल्ह**—बीसलदेव रासो।
- **अब्दुल रहमान**—सन्देशरासक।
- **जगनिक**—आल्हखण्ड।
- **दलपति विजय**—खुमाण रासो।
- **नल्ल सिंह**—विजयपाल रासो।

से आधुनिक काल तक की सभी प्रमुख प्रवृत्तियों के प्रारम्भिक बीज खोज सकते हैं। इस काल की आध्यात्मिक, शृङ्गारिक तथा वीरता की प्रवृत्तियों का ही विकसित रूप परवर्ती साहित्य में मिलता है।

अधिकांश विद्वान् हिन्दी का प्रथम कवि **सरहपा** को मानते हैं जिनका रचनाकाल 769 ई0 से प्रारम्भ होता है। अतः हिन्दी साहित्य के आरम्भ की सीमा 8वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध मानी जाती है। दूसरी ओर विद्यापति को भी आदिकाल के अन्तर्गत माना जाता है, इनका रचना-काल 1375 ई0 से 1418 ई0 तक है। इस दृष्टि से आदिकाल की अन्तिम सीमा 1418 ई0 निर्धारित की जा सकती है, किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं है कि भक्तिकाल में जिन प्रवृत्तियों का विकास हुआ, उनकी भूमिका विद्यापति के पूर्व ही पूर्ण हो चुकी थी, अतः विद्यापति को भक्तिकाल में रखकर 14वीं शताब्दी के मध्य को आदिकाल की अन्तिम सीमा मानना ही समीचीन होगा।

साहित्य मानव-समाज की भावनात्मक स्थिति और गतिशील चेतना की अभिव्यक्ति है। इसलिए आदिकालीन साहित्य के इतिहास को समझने के लिए तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों को जानना अपेक्षित है।

● राजनीतिक परिस्थिति

हिन्दी साहित्य का आदिकाल वर्धन-साम्राज्य की समाप्ति के समय से प्रारम्भ होता है। अन्तिम वर्धन-सम्राट् हर्षवर्धन के समय से ही सिन्ध प्रान्त पर अरबों के आक्रमण आरम्भ हो गये थे। हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद भारत की संगठित सत्ता खण्ड-खण्ड हो गयी। तदनन्तर राजपूत राजा निरन्तर युद्धों की आग में जल गये और अन्ततः एक विशाल इस्लाम साम्राज्य की स्थापना हो गयी। ईसा की 8वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक के भारतीय इतिहास की राजनीतिक परिस्थिति हिन्दू-सत्ता के धीरे-धीरे क्षय होने तथा इस्लाम सत्ता के धीरे-धीरे उदय होने की कहानी है। आदिकाल के इस युद्ध-प्रभावित जीवन में कहीं भी सन्तुलन नहीं था। जनता पर विदेशी आक्रान्ताओं के अत्याचारों के साथ-साथ युद्धकामी देशी राजाओं के अत्याचारों का क्रम भी बढ़ता चला गया। वे परस्पर लड़ने लगे और प्रजा पीड़ित होने लगी। पृथ्वीराज चौहान, जयचन्द आदि की पारस्परिक लड़ाइयाँ अन्तहीन कथा बनती गयीं। विदेशी शक्तियों के आक्रमण का प्रभाव मुख्यतः पश्चिमी भारत और मध्यप्रदेश पर ही पड़ा था। यही वह क्षेत्र था, जहाँ हिन्दी भाषा का विकास हो रहा था। अतः इस काल का समस्त हिन्दी साहित्य आक्रमण और युद्ध के प्रभावों की मनःस्थितियों का प्रतिफलन है।

● धार्मिक परिस्थिति

ईसा की छठी शताब्दी तक देश का धार्मिक वातावरण शान्त था किन्तु 7वीं शताब्दी के साथ देश की धार्मिक परिस्थितियों में परिवर्तन आरम्भ हुआ। इस समय आलम्बार और नायम्बार सन्त दक्षिण भारत से उत्तर भारत की ओर धार्मिक आन्दोलन लाये। बौद्ध धर्म का पतन प्रारम्भ हो गया था। शैव और जैन मत आगे बढ़ने की होड़ में परस्पर टकराने लगे थे। देशव्यापी धार्मिक अशान्ति के इस काल में बाहरी धर्म इस्लाम का भी प्रवेश हो रहा था। अशिक्षित जनता के सामने अनेक धार्मिक राहें बनती जा रही थीं। बौद्ध संन्यासी यौगिक चमत्कारों का प्रभाव दिखा रहे थे। वैदिक एवं पौराणिक मतों के समर्थक खण्डन-मण्डन की भूल-भुलैयों में पड़े थे। उधर जैन धर्म पौराणिक आख्यानों को नये ढंग से गढ़कर जनता की आस्थाओं पर नया प्रभाव जमा रहा था। आदिकाल की धार्मिक परिस्थितियाँ अत्यन्त विषम तथा असन्तुलित थीं। कवियों ने इसी स्थिति के अनुरूप खण्डन-मण्डन, हठयोग, वीरता एवं शृङ्गार का साहित्य लिखा।

● सामाजिक परिस्थिति

तत्कालीन राजनीतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों का देश की सामाजिक परिस्थितियों पर भी गहरा प्रभाव पड़ा था। जनता शासन तथा धर्म दोनों ओर से निराश होती जा रही थी। युद्धों के समय उसे बुरी तरह पीसा जाता था। समाज के उच्च वर्ग में विलासिता बढ़ गयी थी। निर्धन वर्ग श्रमिक था। अन्धविश्वास जोरों पर था। साम्प्रदायिक तनाव बढ़ रहा था। योगियों का गृहस्थों पर आतंक छाया हुआ था। जनता दुर्भिक्ष, युद्ध और महामारियों का निरन्तर शिकार हो रही थी। सामाजिक परिस्थिति की इस विषमता में हिन्दी के कवियों को जनता की स्थिति के अनुसार काव्य-रचना की सामग्री जुटानी पड़ी।

● सांस्कृतिक परिस्थिति

आदिकाल भारतीय और इस्लाम इन दो संस्कृतियों के संक्रमण एवं ह्रास-विकास की गाथा है। इस काल में भारतीय

संस्कृति का जो स्वरूप मिलता है वह परम्परागत गौरव से विच्छिन्न तथा मुस्लिम संस्कृति के गहरे प्रभाव से निर्मित है। तत्कालीन जन-जीवन के स्वरूप में इस संस्कृति की व्यापक छाप मिलती है। उत्सव, मेले, वेश-भूषा, आहार, विवाह, मनोरंजन आदि सब में मुस्लिम रंग मिल गया था। संगीत, चित्र, वास्तु एवं मूर्ति-कलाओं की मूल भारतीय परम्परा धीरे-धीरे क्षय होती गयी।

साहित्यिक परिस्थिति

इस काल में साहित्य-रचना की तीन धाराएँ थीं। प्रथम धारा संस्कृत साहित्य की थी जिसका विकास परम्पराबद्ध था। दूसरी धारा का साहित्य प्राकृत एवं अपभ्रंश में लिखा जा रहा था। तीसरी धारा हिन्दी भाषा में लिखे जानेवाले साहित्य की थी, जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों की प्रतिक्रिया प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में प्रतिबिम्बित हो रही थी।

आदिकाल के साहित्य को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) सिद्ध साहित्य (2) जैन साहित्य (3) नाथ साहित्य (4) रासो साहित्य (5) लौकिक साहित्य। इस युग में काव्य-रचनाएँ प्रबन्ध तथा मुक्तक दोनों रूपों में प्राप्त होती हैं।

सिद्ध साहित्य

बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्त्व का प्रचार करने के लिए सिद्धों ने जो साहित्य लोक-भाषा में लिखा, वह हिन्दी का सिद्ध साहित्य है। इन सिद्धों में सरहपा, शबरपा, लुइपा, डोम्मिपा, कण्हपा एवं कुक्कुरिपा हिन्दी के मुख्य सिद्ध कवि हैं। सरहपा को हिन्दी का प्रथम कवि माना जाता है। इनकी कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

नाद न बिन्दु न रवि न शशि मण्डल,
चिअराअ सहाबे मूकल।
अजुरे उजु छाड़ि मा लेहु रे बंक,
निअहि बोहिया जाहुरे लाँक।
हाथ रे कांकाण मा लोउ दापण,
अपणे अपा बुझतु निअ-मण।

सरहपा की इस कविता से स्पष्ट है कि उस समय अपभ्रंश से हिन्दी का विकास होना प्रारम्भ हो गया था।

जैन साहित्य

जिस प्रकार हिन्दी के पूर्वी क्षेत्र में, हिन्दी कविता के माध्यम से सिद्धों ने बौद्ध धर्म के वज्रयान मत का प्रचार किया, उसी प्रकार पश्चिमी क्षेत्र में जैन साधुओं ने भी अपने मत का प्रचार हिन्दी कविता के माध्यम से किया। जैन साहित्य का सबसे अधिक लोकप्रिय रूप 'रास' ग्रन्थ है। संस्कृत के 'रस' शब्द को जैन साधुओं ने 'रास' रूप देकर रचना की प्रभावशाली शैली बनाया। देवसेन रचित 'श्रावकाचार', मुनिजिनविजय कृत 'भरतेश्वर-बाहुबली रास', जिनधर्मसूरि कृत 'स्थूल भद्र रास', विजयसेन सूरि का 'रेवंत गिरि रास' आदि जैन साहित्य की निधि हैं।

नाथ साहित्य

सिद्धों की वाममार्गी योगसाधना की प्रतिक्रिया में नाथपन्थियों की हठयोग-साधना प्रारम्भ हुई। गोरखनाथ, नाथ साहित्य के व्यवस्थापक माने जाते हैं। उन्होंने ईसा की 13वीं शताब्दी के आरम्भ में अपना साहित्य लिखा था। गोरखनाथ से पहले अनेक सम्प्रदाय थे, उन सबका नाथ पन्थ में विलय हो गया था। गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं में गुरु-महिमा, इन्द्रिय-निग्रह, प्राण-साधना, वैराग्य, कुण्डलिनी जागरण, शून्य-समाधि आदि का वर्णन किया है। गोरखनाथ ने लिखा है कि धीर वह है जिसका चित्त विकार-साधन होने पर भी विकृत नहीं होता—

नौ लख पातरि आगे नाचैं, पीछे सहज अखाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी खेलैं, तब अंतरि बसै भँडारा।।

रासो साहित्य

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में रचित जैन 'रास काव्य' वीरगाथाओं के रूप में लिखित रासो-कव्यों से भिन्न है। दोनों

की रचना-शैलियों का अलग-अलग भूमियों पर विकास हुआ है। जैन रास काव्यों में धार्मिक दृष्टि प्रधान है, जबकि रासो परम्परा में रचित काव्य मुख्यतः वीरगाथापरक हैं। दलपति विजय कृत 'खुमाण रासो', नरपति नाल्ह रचित 'बीसलदेव रासो', चन्दबरदायी कृत 'पृथ्वीराज रासो' तथा जगनिक रचित 'परमाल रासो' (आल्हखण्ड), शारंगधर कृत 'हम्मीर रासो' आदि प्रसिद्ध रासो ग्रन्थ हैं। 'पृथ्वीराज रासो' आदिकाल का इस परम्परा का श्रेष्ठ महाकाव्य है। इसके रचयिता दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान के सामन्त तथा राजकवि चन्दबरदायी हैं। इसमें पृथ्वीराज चौहान के चरित्र का वर्णन है। यह महाभारत की तरह विशाल महाकाव्य है। इस काव्य में दो प्रमुख रस हैं— शृङ्गार और वीर। इसकी भाषा में ब्रज और राजस्थानी का मिश्रण है। शब्द-चयन रसानुकूल है। वीर रस के चित्रणों में प्राकृत और अपभ्रंश के शब्द भी यत्र-तत्र मिलते हैं। अलङ्कारों का सहज प्रयोग हुआ है। लगभग 68 प्रकार के छन्द इसमें प्रयुक्त हुए हैं। एक उदाहरण देखिए—

बज्जिय घोर निसांन रान चौहान चहूँ दिशि।
सफल सूर सामन्त समर बल जंत्र मंत्र तिसि।
उट्ठि राज प्रथिराज बाग लग्ग मनहु वीर नट।
कढ़त तेग मन वेग लगत मनहु बीजु झट्ट घट्ट॥

वीर छन्द में विरचित परमाल रासो (आल्हखण्ड) भी बड़ा लोकप्रिय काव्य है।

● लौकिक साहित्य

आदिकाल में कुछ ऐसे ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं, जो पूर्वोक्त प्रमुख प्रवृत्तियों से भिन्न हैं। ऐसे सभी उपलब्ध काव्यों को लौकिक साहित्य की सीमा में गिना जाता है। ऐसे काव्यों में कुशल रायवाचक कृत 'ढोला-मारू-रा-दूहा' और खुसरो की पहेलियाँ प्रसिद्ध हैं। कुछ मुक्तक छन्द भी मिलते हैं जो हेमचन्द्र के 'प्रबन्ध चिन्तामणि' में संकलित हैं।

आदिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. बौद्ध-सिद्धों की रचनाओं में एक ओर गुह्य साधनाओं की चर्चा है, दूसरी ओर वर्णाश्रम व्यवस्था का तीव्र विरोध है।
2. जैनाचार्यों की रचनाओं में जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के बड़े ही सरस वर्णन हैं, नैतिक आदर्शों का प्रचार-प्रसार है।
3. नाथ सम्प्रदाय के साधकों की रचनाओं में हठयोग की साधना-पद्धति का दर्शन है, तीव्र वैराग्य की भावना जगायी गयी है और वर्ण-जाति के बन्धन से ऊपर उठने का आग्रह है।
4. रासो साहित्य में आश्रयदाताओं के युद्धोत्साह, केलि-क्रीड़ा आदि के बड़े सरस वर्णन हैं। इतिहास के साथ कल्पना का प्रचुर उपयोग किया गया है। वीर और शृङ्गार रस का प्राधान्य है और प्रसंगानुसार कहीं परुष और कहीं कोमलकान्त शब्दावली का प्रयोग है।
5. लौकिक साहित्य में शृङ्गार, वीर और नीतिपरक भावनाओं को अभिव्यक्ति मिली है। खुसरो की पहेलियों में व्यंग-विनोद की अभिव्यञ्जना है।

आदिकाल में हिन्दी भाषा जन-जीवन से रस लेकर आगे बढ़ी है। उसने अपनी अनेक बोलियों को एकरूपता की ओर बढ़ा कर एक-सूत्र में बाँधा है। जीवन के विविध पक्षों का उसके काव्य में चित्रण हुआ है। परवर्ती कालों के लिए उसने अनेक परम्पराएँ डाली हैं, अनेक काव्य-रूप और शैली-शिल्प आदिकालीन साहित्य में प्रकट और पुष्ट हुए हैं, अतः आदिकाल को हिन्दी साहित्य का समृद्ध काल कहा जा सकता है।

भक्तिकाल

जिस काल में मुख्यतः भागवत धर्म के प्रचार तथा प्रसार के परिणामस्वरूप भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था, हिन्दी-साहित्य के इतिहास में उसे भक्तिकाल कहा जाता है। लोकोन्मुखी प्रवृत्ति के कारण इस काल की भक्ति-भावना लोक-प्रचलित भाषाओं में अभिव्यक्त हुई। इस युग को हिन्दी साहित्य का पूर्व मध्यकाल भी कहते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्तिकाल

का निर्धारण सन् 1318 ई0 (संवत् 1375 वि0) से 1643 ई0 (संवत् 1700 वि0) तक किया है। भक्ति काव्य की परम्परा परवर्ती काल तक भी प्रवाहित होती रही है। अतः अध्ययन की सुविधा के लिए भक्तिकाल को 14वीं शती के मध्य से 17वीं शती के मध्य तक मानना उचित होगा। विदेशी सत्ता प्रतिष्ठित हो जाने के कारण देश की जनता में गौरव, गर्व और उत्साह का अब अवसर न रह गया था। अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवद्-भक्ति ही एक सहारा था। युगद्रष्टा भक्त कवियों ने देश की जनता को सँभालने के लिए जिस काव्य का गान किया, भक्तिकाल उसी का शुभ परिणाम है।

प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

- **सूरदास**—सूरसागर।
- **गोस्वामी तुलसीदास**—रामचरितमानस।
- **कबीरदास**—बीजक।
- **मलिक मुहम्मद जायसी**—पद्मावत।
- **मंझन**—मधु मालती।
- **उस्मान**—चित्रावली।
- **कुतबन**—मृगावती।

● राजनीतिक परिस्थिति

भक्तिकाल का आरम्भ दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक (1325-1351) के राज्यकाल में हुआ। शासक वंशों में सत्ता प्राप्त करने के लिए विद्रोह होते रहते थे। शेरशाह ने सैन्य-योजना सुसंगठित की थी, जिसका लाभ अकबर ने भी उठाया था। मुगलों में अकबर का राज्यकाल सभी दृष्टियों से सर्वोपरि रहा। वह हिन्दू-मुसलमान के समन्वय सम्बन्धी प्रयत्नों में शान्ति तथा व्यवस्था की स्थापना में सफल हुआ। जहाँगीर और शाहजहाँ ने भी बहुत कुछ अकबर का ही अनुसरण किया था। इस समय तक देश की सैनिक शक्ति प्रायः क्षीण हो चुकी थी और विजेताओं का राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित हो चुका था। ऐसी अवस्था में वीरों के प्रशस्ति-गीत अपना प्रभाव खो चुके थे।

● सामाजिक परिस्थिति

भारतीय समाज में वर्णों और जातियों का विशिष्ट स्थान है। विशेषता यह है कि जिस समाज ने पारसी, यवन (यूनानी), शक, हूण आदि अनेक जातियों के साथ समन्वय करके उन्हें आत्मसात कर लिया, उसी का पैगम्बरी धर्म के अनुयायियों के साथ आपसी मेल-मिलाप उसी गति के साथ सम्भव न हो सका। फलस्वरूप दोनों पक्षों के बीच परस्पर सन्देह, जुगुप्सा और भेदभाव का वातावरण प्रबल हो उठा। विदेशी एवं विजातीय शासक हिन्दू जनता के साथ दुर्व्यवहार करते थे। छुआछूत के नियम कठोर और व्यापक थे। समाज में स्त्रियों का स्थान निम्न था। पर्दा-प्रथा जोरों पर थी। समाज में ऊँच-नीच की भावना पारस्परिक कटुता और घृणा की अवस्था तक पहुँच गयी थी। तत्कालीन साधु-समाज पर भी पाखण्ड की काली छाया मँडराने लगी थी। दैनिक-जीवन, रीति-रिवाज, रहन-सहन, पर्व-त्योहार आदि की दृष्टि से तत्कालीन भारतीय समाज सुविधा-सम्पन्न और असुविधा-ग्रस्त इन दो वर्गों में विभक्त था। प्रथम वर्ग राजा-महाराजा, सुल्तान, अमीर, सामन्त और सेठ-साहूकारों का था। दूसरा वर्ग किसान, मजदूर और घरेलू उद्योग-धन्धे में लगी सामान्य जनता का था। दूसरा वर्ग विपन्न और दुःखी था।

गोस्वामी तुलसीदास कृत 'कवितावली' की निम्नलिखित पंक्तियों में तत्कालीन स्थिति का स्पष्ट परिचय मिलता है—

खेती न किसान को, भिखारी को न भीख बलि,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहैं एक एकन सों कहाँ जाइ, का करी।

● धार्मिक परिस्थिति

वैदिक धर्म की आस्था पर सिद्धों और नाथ-पन्थियों की रहस्य-गुह्य-साधना गहरा आघात कर चुकी थी। पूजा-पाठ, धार्मिक-क्रिया-कलाप आदि के प्रति जो आस्था हिन्दू-समाज में थी, उसकी जड़ें प्रायः हिल चुकी थीं। साम्प्रदायिकता तथा अन्ध-विश्वासों का बड़ा विस्तार था। पाखण्ड की पूजा हो रही थी। पण्डित और मौलवी धर्म की मनमानी व्याख्या करके हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म को परस्पर विरोधी बना रहे थे। इस काल में धर्म साधनाओं की बाढ़-सी आ गयी थी। धर्माचार के नाम पर

अनाचार और मिथ्याचार पलने लग गया था। ऐसे समय में उसे किसी समन्वयवादी दर्शन और आचार-पद्धति की आकांक्षा थी, जो जीवन की सहज अनुभूति पर आधारित हो। इसी की पूर्ति भक्ति-आन्दोलन में हुई।

● साहित्यिक परिस्थिति

साहित्य की समृद्धि की दृष्टि से तो भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहलाता है। भक्ति की जो पुनीत धारा इस युग में प्रवाहित हुई, उसने अभी तक जन-मानस को आप्लावित कर रखा है। ब्रज तथा अवधी दोनों भाषाओं में काव्य-रचना हुई। सूर, तुलसी, कबीर और जायसी जैसे कवियों को इसी युग ने जन्म दिया।

➡ भक्ति-आन्दोलन

हिन्दी के वास्तविक साहित्य का प्रारम्भ भक्त कवियों की रचनाओं से ही होता है। इस भक्ति-भावना को जन-जीवन में व्याप्त करने के लिए ही वस्तुतः हिन्दी परिनिष्ठित अपभ्रंश, प्राकृताभास आदि से अलग हुई थी। उस युग की भक्ति-भावना सम्पूर्ण देश की युग चेतना में परिव्याप्त थी। उत्तर भारत में भक्ति-भावना को प्रवाहित करने का श्रेय स्वामी रामानन्द तथा महाप्रभु वल्लभाचार्य को है। उत्तर भारत की तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक अवस्थाएँ इस भक्ति आन्दोलन के जागरण के लिए उत्तरदायी हैं। मध्यकालीन धर्मों में हिन्दू, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी, ईसाई, इस्लाम प्रमुख थे; और परस्पर सम्पर्क रखते थे। उन दिनों हिन्दू और इस्लाम प्रधान धर्म थे। वैष्णव धर्म मूलतः भक्ति-प्रधान था। सूफी, इस्लाम धर्म की एक शाखा थी। उसकी उपासना-पद्धति में प्रेम की प्रधानता है। किसी ने भगवान् को निर्गुण समझा, किसी ने सगुण। कोई उसे ज्ञान से प्राप्त करना चाहता था, तो कोई विशुद्ध प्रेम से। इन धर्मों के अनुयायियों द्वारा भक्ति काव्य की उत्कृष्ट रचनाएँ हुईं। इस प्रकार भक्ति साहित्य का विपुल भण्डार समृद्ध हुआ। भक्ति-आन्दोलन का व्यापक प्रभाव तत्कालीन वास्तु-कला, मूर्तिकला और चित्रकला पर भी पड़ा है।

भक्ति एक साथ ही कई धाराओं में बँट कर प्रवाहित हुई जिसे निर्गुण भक्तिधारा और सगुण भक्तिधारा कहते हैं।

(क) निर्गुण भक्ति

जिस भक्ति में भगवान् के निर्गुण-निराकार रूप की आराधना पर बल दिया गया, वह निर्गुण भक्ति कहलायी। जिन कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच की कटुता को कम करके उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का प्रयास किया, उन्होंने निर्गुण-साधना पर बल दिया। निर्गुण भक्ति की दो शाखाएँ हैं—

(i) ज्ञानाश्रयी शाखा—यह उपासना ज्ञान और प्रेम पर आधारित है। भगवान् के स्वरूप का तात्त्विक एवं अपरोक्ष साक्षात्कार तथा उसके प्रति अनन्य एवं सहज प्रेम ही निर्गुण उपासना का मूल स्वरूप है। निर्गुण सम्प्रदाय ने सहज एवं साधनापूर्ण जीवन-पद्धति का निर्देश दिया है। भक्तिकाल से पहले के जीवन में जो एक ओर व्रत आदि की रूढ़िवादिता थी और दूसरी तरफ रहस्य गुह्य साधनाओं की जटिलता थी, उनसे मुक्ति केवल सहज प्रेम, ज्ञान एवं सरल तथा सदाचारी जीवन-दर्शन से ही मिल सकती है। यह कार्य निर्गुण भक्ति ने किया। यही कारण है कि इस युग की सहज अनुभूति की कविता जनमानस की भाषा में अभिव्यक्त हुई। ज्ञानाश्रयी शाखा में भगवान् के अवतारों की कल्पना का निषेध है। केवल निर्गुण और निराकार ब्रह्म की उपासना है। हिन्दी में इस ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रधान कवि कबीर हैं। वे स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। उनकी भक्ति-भावना में बाह्याडम्बर, तीर्थ, व्रत, गेजा-नमाज आदि का खण्डन है और भगवान् को अद्वितीय ज्ञान एवं शुद्ध प्रेम से प्राप्त करने का सन्देश है। भक्ति-भावना की अभिव्यक्ति उनका प्रमुख उद्देश्य है और वह अनुभूति ही काव्य बन गयी है। इस धारा के अन्य सन्त-कवि नानक, दादू, मलूकदास, रैदास आदि हैं।

(ii) प्रेमाश्रयी शाखा—इस शाखा के काव्यों का मूल विषय सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त एवं केवल सौन्दर्य वृत्ति से प्रेरित स्वच्छन्द प्रेम तथा प्रगाढ़ प्रणय-भावना है। इसके लिए नायक अनेक संकटों का सामना करने का साहस रखता है। सामाजिक रूढ़ियों में बँधे हुए परम्परागत प्रेम से हटकर स्वच्छन्द प्रेम की पवित्रता की स्थापना भी इन काव्यों का मुख्य प्रयोजन एवं प्रमुख उपलब्धि है। लौकिक प्रेम की सहज अनुभूति में आध्यात्मिकता तथा उसकी प्राप्ति के प्रयास में योग-साधना के

दर्शन कराके इन कवियों ने जीवन को एक आस्था दी है जो रहस्य गुह्य साधनाओं तथा कठोर धर्मोपदेश, व्रत, नियम आदि से उखड़-सी गयी थी। ये कार्य प्रेम-कथाओं पर आध्यात्मिकता, रहस्यवाद, दार्शनिकता आदि के आरोप से तथा समासोक्ति या अन्योक्ति शैली को अपनाने से बड़ी ही सरलता से सिद्ध हो गया। इनकी कथावस्तु में लोक-कथाओं, इतिहास तथा कल्पना का मिश्रण है। इन काव्यों में रस, अलङ्कार आदि काव्यांगों का भी प्रौढ़ रूप मिलता है। इस धारा में मुसलमान और हिन्दू दोनों ही धर्मों के कवि आते हैं। अधिकांश तो सूफी हैं, पर कुछ निर्गुण सन्त और कृष्ण भक्त कवि भी हैं। इसमें बहुत से रहस्यवादी कवि भी हैं। रहस्यवाद के दर्शन से इस धारा के अधिकांश कवियों का भक्त कवियों में अन्तर्भाव हो जाता है। शुक्लजी ने प्रेममार्गी भक्तों की रचना-शैली को मसनवी कहा है, पर कुछ आलोचकों ने इन्हें भारतीय परम्परा का कथा-काव्य माना है। इन काव्यों में वातावरण और चरित्र-चित्रण भारतीयता के अनुरूप हुआ है। जायसी, मंझन, कुतबन आदि इस धारा के प्रमुख कवि तथा 'पद्मावत', 'अखरावट', 'मधुमालती' आदि प्रमुख ग्रन्थ हैं। इस शाखा के अधिकांश कवियों की भाषा अवधी है, पर अनेक कवियों ने राजस्थानी, ब्रज और राजस्थानी मिश्रित ब्रज का भी प्रयोग किया है।

(ख) सगुण भक्ति

जीवन में व्यापक आस्था लाने तथा समन्वयवादी जीवन-दर्शन एवं आचार-पद्धति प्रदान करने की भावना से भक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ था। निर्गुण भक्ति—प्रधानतः निवृत्ति मार्ग, वैराग्य, ज्ञान, निराकार के प्रति प्रेम, योग-साधना आदि के द्वारा अपनी अपेक्षाकृत एकांगी जीवनदृष्टि, अभिव्यञ्जना की शुष्कता एवं व्यंग्यों की तीक्ष्णता के कारण समग्र जीवन में आस्था लाने का कार्य सम्पन्न नहीं कर सकी। उसने बाह्याडम्बर, क्लिष्ट साधनाओं, पारस्परिक विद्वेष तथा कटुता के झाड़-झंखाड़ काट कर फेंक दिये और इस प्रकार एक समतल भूमि तैयार कर दी। प्रेममार्गी कवियों ने प्रेम की सरसता से इस जीवन-भूमि को सिंचित किया और फिर जीवन की आस्था और विश्वास का बगीचा सगुण भक्तिधारा के कवियों ने लगाया। कृष्ण-भक्ति ने जीवन की सामान्य भावनाओं वात्सल्य, सख्य, रति-भाव के सभी रूपों को भक्ति में परिणत कर दिया। सारा जीवन ही साधना बन गया। इससे नित्य का लौकिक जीवन भक्तिमय हो गया। वैदिक धर्म की पुनः प्रतिष्ठा की; जो आकांक्षा हिन्दू जीवन में थी, वह राम-भक्त तुलसीदास जी द्वारा पूर्ण हुई। उन्होंने जीवन की सभी परिस्थितियों के लिए आचार एवं धर्म के मानदण्ड दिये। जीवन को मर्यादा का मार्ग दिखाया तथा उस सब में भक्ति-रस प्रवाहित कर दिया। गृहस्थ और वैरागी, निवृत्तिमार्गी और प्रवृत्तिमार्गी दोनों के लिए धर्म के वास्तविक स्वरूप की प्रतिष्ठा तुलसीदास के द्वारा ही हुई। यही सगुण भक्ति की देन है।

(i) कृष्णभक्ति शाखा—भगवान् कृष्ण का लीला पुरुषोत्तम रूप इस शाखा के भक्तों का आराध्य है। राधा-कृष्ण की विभिन्न लीलाएँ कृष्ण-साहित्य के प्रमुख विषय हैं। विद्यापति को इस शाखा का प्रथम कवि कहा जा सकता है। उनके बाद वल्लभ, निम्बार्क, राधा-वल्लभ, हरिदासी और चैतन्य सम्प्रदायों के भक्त कवियों ने कृष्ण-लीला का गान किया। इन भक्तों ने अपने-अपने सम्प्रदायों की भावना के अनुसार कृष्ण की बाल-लीला, किशोर-लीला एवं यौवन-लीला का वर्णन किया है। वल्लभ सम्प्रदाय में कृष्ण के बाल-रूप की ही आराधना है। शेष सम्प्रदायों में कृष्ण की किशोर एवं यौवन-लीला की प्रमुखता है। सूर तथा अष्टछाप के अन्य कवि वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी थे, अत: उनके काव्य में अन्य लीलाओं की अपेक्षा बाल-लीला का वर्णन अधिक है। बाल-वर्णन के क्षेत्र में सूरदास हिन्दी के ही नहीं, विश्व के श्रेष्ठ कवि हैं। कृष्ण-भक्ति के कवियों की भाषा ब्रज है। इन्होंने लीला रस प्रवाहित करनेवाले मुक्तक पद लिखे हैं। 'सूरसागर' सूर का विशाल काव्य है। इस ग्रन्थ का उपजीव्य भागवत है। इसमें कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन का चित्र है, पर कवि का मन कृष्ण की बाल-लीला तथा गोपियों के साथ की गयी प्रेम-लीला के संयोग एवं वियोग पक्षों के हृदयस्पर्शी वर्णन में अधिक रमा है। इनकी भक्ति पुष्टिमार्गीय कहलाती है। इसमें भगवान् के अनुग्रह से ही सब कुछ प्राप्त हो जाता है, साधनाओं का कोई महत्त्व नहीं है। कृष्ण-भक्ति ने जीवन की सभी इच्छाओं का आलम्बन कृष्ण को बनाकर सारे जीवन को ही भक्तिमय कर दिया।

(ii) रामभक्ति शाखा—इस शाखा के कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र का वर्णन किया। राम के चरित्र द्वारा ही जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए धर्म, सदाचार एवं कर्त्तव्य का सन्देश जनसाधारण को हृदयंगम कराया जा सकता था। राम के चरित्र से भारतीय संस्कृति के समन्वयवादी रूप की पुन: प्रतिष्ठा हो सकी। राम का चरित्र इतना महान् और व्यापक है कि इसमें सम्पूर्ण मानव-मात्र को धर्म और जीवन का सन्देश देने की क्षमता है। यही कारण है कि काव्य के प्रबन्ध, मुक्तक, गीति आदि प्रकारों एवं दोहा, चौपाई, कवित्त, घनाक्षरी आदि शैलियों का आश्रय लेकर रामचरित्र वर्णित हो सका। रामकाव्य

में जैसे भक्ति के सर्वांगीण रूप का परिपाक हुआ है, वैसे ही काव्योत्कर्ष भी अपनी चरम सीमाओं का स्पर्श करता है। भाव, अनुभाव, रस, अलङ्कार किसी भी दृष्टि से देखें, राम-काव्य हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है। तुलसी इस धारा के सबसे प्रमुख कवि हैं। जीवन का समन्वयवादी एवं मर्यादावादी दृष्टिकोण ही तुलसी की सबसे बड़ी देन है। जीवन की इसी चेतना का स्पन्दन आज भी भारतीय समाज अनुभव कर रहा है। तुलसी ने अवधी और ब्रज दोनों ही भाषाओं में राम का गुणगान किया है। रामचरितमानस, कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका आदि उनके अनुपम ग्रन्थ हैं। विनयपत्रिका की भक्ति में ज्ञान और भक्ति का पूर्ण सामंजस्य है। रामभक्ति की धारा प्रधानत: प्रबन्ध काव्य के रूप में बही। राम का चरित्र इसके लिए पूर्णतया उपयुक्त भी है, पर गीति और मुक्तक का क्षेत्र भी रामभक्ति से भरा पड़ा है। केशव की रामचन्द्रिका भी इसी धारा का ग्रन्थ है। नाभादास आदि महाकवि भी इसी धारा के हैं।

भक्तिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. निर्गुणोपासना की ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि निराकार ईश्वर के उपासक थे। गुरु के महत्त्व पर उनका विश्वास था और अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, मिथ्याडम्बर तथा जाति-पाँति के बन्धनों के वे विरोधी थे। इनके काल की भाषा में अनेक बोलियों का मिश्रण था तथा वह सीधी-सादी होती थी। प्रधान छन्द साखी (दोहा) और पद थे। विश्वबन्धुत्व की भावना जगाना इनका प्रधान उद्देश्य था।
2. निर्गुणोपासना की प्रेमाश्रयी शाखा के कवि भारतीय लोकजीवन में प्रचलित कथाओं एवं इतिहास-प्रसिद्ध प्रेमगाथाओं पर आधारित काव्य लिखते थे। इनमें सूफी उपासना-पद्धति का प्रभाव था। गुरु का महत्त्व था। भाषा अवधी थी तथा दोहा एवं चौपाई प्रमुख छन्द थे।
3. सगुणोपासना में कृष्ण-भक्ति काव्य के आधार कृष्ण और राम-भक्ति काव्य के आधार राम भगवान् के अवतार रूप में उपास्य थे। इनका गुणगान और लीलाओं का वर्णन प्रमुख था। सूर की काव्य-भाषा ब्रज थी। उन्होंने केवल मुक्तक पदों की रचना की, जिन्हें बाद में लीलाक्रम अथवा श्रीमद्भागवत के कथा-क्रम में संकलित कर लिया गया। तुलसी ने अवधी तथा ब्रजभाषा दोनों को काव्य-भाषा बनाया। तुलसी ने दोहा, चौपाई, सोरठा, बरवै, हरिगीतिका, सवैया आदि विविध छन्दों का प्रयोग किया है। विनयपत्रिका में विनय के पद हैं।
4. इस काल की विशिष्ट प्रवृत्ति कवियों का राजाश्रय से स्वतन्त्र होना है।
5. कृष्ण-भक्ति में शृङ्गार तथा वात्सल्य रस और सख्य भाव की प्रमुखता है। राम भक्ति में शान्त रस तथा दास्यभाव की प्रधानता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति-काल को हिन्दी का स्वर्ण युग कहा जाता है। भक्त कवियों ने चित्त की जिस उदात्त भूमिका में रम कर हृदय-सागर का मन्थन कर मनोरम भावों के नवनीत को प्रदान किया है, वह भारतीय साहित्य की शाश्वत विभूति है। निर्गुणोपासना की ज्ञानाश्रयी शाखा के सन्त कवियों ने समाज-कल्याण के हितकारी उपदेश दिये। उन्होंने ज्ञान और सच्चे गुरु के महत्त्व को प्रतिष्ठा दी। प्रेमाश्रयी शाखा के सूफी सन्त कवियों ने ईश्वर-प्राप्ति का मुख्य साधन प्रेम बताया। सगुणोपासक कवियों ने कृष्ण की मनोरम लीलाओं एवं राम के मर्यादा पुरुषोत्तम चरित्र की बड़ी ही मनोरम झाँकियाँ प्रस्तुत कीं। सीमित वर्ण्य-विषयों का असीम वर्णन इस काव्य की विशेषता है। इन कवियों की रचनाओं की केवल विषयवस्तु ही नहीं, अपितु काव्यशास्त्रीय पक्ष भी परम समृद्ध है।

रीतिकाल

हिन्दी साहित्य का उत्तर-मध्य काल, जिसमें सामान्य रूप से शृङ्गार प्रधान लक्षण ग्रन्थों की रचना हुई, रीतिकाल कहा जाता है। 'रीति' शब्द काव्यशास्त्रीय परम्परा का अर्थवाहक है। इस युग में कवियों की प्रवृत्ति रीति सम्बन्धी ग्रन्थ रचने की थी। इस काल के कवियों ने यदि शृङ्गारिक छन्द भी रचे तो वे स्वतन्त्र न होकर शृङ्गार रस की सामग्री के लक्षणों के उदाहरण होने के कारण रीतिबद्ध ही थे। इसीलिए इस काल को रीतिकाल की संज्ञा दी गयी है। शृङ्गार की रचनाओं की प्रमुखता के कारण इसे **शृङ्गार काल** भी कहा जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसका समय सन् 1643 ई0 (संवत् 1700 वि0) से 1843

ई० (संवत् 1900 वि०) तक निश्चित किया है, परन्तु किसी भी युग की प्रवृत्तियाँ न तो सहसा प्रादुर्भूत ही होती हैं और न सहसा समाप्त हो जाती हैं। अनेक दशाब्दियों तक आगे-पीछे उनके प्रभाव पाये जाते हैं। अतः अध्ययन की सुविधा के लिए रीतिकाल की सीमाएँ हमें सामान्य रूप में 17वीं शती के मध्य से 19वीं शती के मध्य तक मान लेनी चाहिए।

प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

- **बिहारी** – सतसई
- **केशवदास** – रामचन्द्रिका, कविप्रिया, रसिकप्रिया, नखशिख
- **भूषण** – शिवराज भूषण, शिवा बावनी छत्रसाल दशक

● राजनीतिक परिस्थिति

राजनीतिक दृष्टि से यह काल मुगलों के शासन के वैभव के चरमोत्कर्ष और उसके बाद उत्तरोत्तर ह्रास, पतन और विनाश का युग कहा जा सकता है। शाहजहाँ के शासनकाल में मुगल वैभव अपनी चरम सीमा पर रहा। जहाँगीर ने अपने शासनकाल में राज्य का जो विस्तार किया था, शाहजहाँ ने उसकी वृद्धि इतनी की कि उत्तर भारत के अतिरिक्त दक्षिण में अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुण्डा राज्य तथा पश्चिम में सिन्ध के लहरी बन्दरगाह से लेकर पूर्व में आसाम में सिलहट और दूसरी ओर अफगान प्रदेश तक एकच्छत्र साम्राज्य की स्थापना हो गयी थी। राजपूतों ने भी मुगलों के विश्वासपात्र एवं स्वामिभक्त सेवक होकर दिल्ली के शासन की अधीनता स्वीकार कर ली थी। देश में सामान्य रूप से शान्ति थी। राजकोष भरा-पूरा था। औरंगजेब के शासन की बागडोर सँभालते ही उपद्रव प्रारम्भ हो गये थे। उसने उनका दमन किया। उसके पश्चात् उसके पुत्रों में संघर्ष हुआ। 1857 ई० में देशव्यापी राजक्रान्ति के बाद अंग्रेजों का शासन स्थापित हो गया। अवध, राजस्थान और बुन्देलखण्ड के रजवाड़ों का भी अन्त मुगल साम्राज्य के समान ही हुआ।

● सामाजिक परिस्थिति

सामाजिक दृष्टि से यह काल घोर अधःपतन का काल था। इस काल में सामन्तवाद का बोलबाला था। सामन्तशाही के जितने भी दोष होने चाहिए, सभी इस काल में थे। सामाजिक व्यवस्था का केन्द्र-बिन्दु बादशाह था। उसके अधीन थे मनसबदार और अमीर-उमराव। समाज में दो वर्ग प्रधान थे– एक था शासक और दूसरा शासित। शासित वर्ग में एक ओर श्रमजीवी और कृषक थे तो दूसरी ओर सेठ-साहूकार और व्यापारी। जनसाधारण की बड़ी ही शोचनीय दशा थी। सेठ-साहूकार भाग्यवादी थे। विलास के उपकरणों की खोज, उनका संग्रह तथा सुरा-सुन्दरी की आराधना अभिजात वर्ग का अधिकार था। मध्यम और निम्न वर्ग के लोग उसका अनुकरण करते थे।

● सांस्कृतिक परिस्थिति

सामाजिक दशा के समान ही देश की सांस्कृतिक स्थिति भी बड़ी शोचनीय थी। सन्तों एवं सूफियों के उपदेशों से प्रभावित होकर अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने हिन्दू और इस्लाम संस्कृतियों को निकट लाने का जो उपक्रम किया था वह औरंगजेब की कट्टरवादी नीति के कारण समाप्तप्राय था। विलास-वैभव का खुला प्रदर्शन हो रहा था, धार्मिक नियमों का पालन कठिन हो गया था। मन्दिरों में भी ऐश्वर्य एवं विलास की लीला होने लगी थी। विलास के साधनों से हीन वर्ग कर्म एवं आचार के स्थान में अन्धविश्वासी हो चला था। जनता के इस अन्धविश्वास का लाभ धर्माधिकारी उठाते थे।

● साहित्य एवं कला की परिस्थिति

साहित्य एवं कला की दृष्टि से यह काल पर्याप्त समृद्ध था। इस युग में कवि एवं कलाकार साधारण वर्ग के होते थे, तथापि उनका बड़ा सम्मान होता था। उनके आश्रयदाता मुगल सम्राट् एवं राजा-महाराजा होते थे। कवियों एवं कलाकारों को अपने आश्रयदाताओं की अभिरुचि के अनुसार सृजन करना पड़ता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इस युग के कवि एवं कलाकार प्रतिभावान होकर भी अपनी उत्कृष्ट मौलिकता समाज को प्रदान नहीं कर सके। विलासी आश्रयदाताओं के लिए रचा गया इस युग का काव्य स्वभावतः शृङ्गार-प्रधान हो गया। नारी के बाह्य सौन्दर्य के निरूपण में कवियों का श्रम सफल समझा जाता था। भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष का उत्कर्ष हुआ। इस काल का काव्यशास्त्रीय अध्ययन संस्कृत के आचार्यों का स्मरण दिलाता

है। काव्य-कला के समान ही चित्रकला की भी इस युग में बड़ी उन्नति हुई। स्थापत्य, संगीत एवं नृत्य कलाओं की उन्नति तो इस काल की अपनी विशेषता है। इस युग में शृङ्गार रस प्रधान था। भूषण जैसे कवि ने वीर रस की रचना की। रीतिमुक्त कवियों में भाव की तन्मयता देखी जा सकती है। दोहा, सवैया, घनाक्षरी, कवित्त जैसे छन्द प्रचलित थे। ब्रजभाषा ही मुख्यतः काव्यभाषा थी।

भक्तिकाल तक हिन्दी काव्य प्रौढ़ता को पहुँच चुका था। भक्त कवियों ने अपने आराध्य के लीला-वर्णन में लौकिक रस का जो क्षीण रूप प्रस्तुत किया था, उत्तर-मध्यकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनुकूल परिस्थितियाँ पाकर वह पूर्ण ऐहिकता-परक प्रधानतः शृङ्गार रस के रूप में विकसित हुआ। भक्तिकालीन कवियों में सर्वप्रथम नन्ददास ने नायिकाभेद पर 'रसमंजरी' नाम की पुस्तक की रचना की। संस्कृत की काव्यशास्त्रीय परम्परा पर हिन्दी काव्य में 'रीति' के वास्तविक प्रवर्तक केशवदासजी हैं। इस दृष्टिकोण से रचे गये 'कविप्रिया', 'रसिकप्रिया' इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। इसके बाद हिन्दी रीति ग्रन्थों की परम्परा निरन्तर विकसित होती गयी। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस युग के सम्पूर्ण साहित्य को 'रीतिबद्ध' और 'रीतिमुक्त' दो वर्गों में बाँटा गया है—

(i) रीतिबद्ध काव्य—रीतिबद्ध काव्य के अन्तर्गत वे काव्य-ग्रन्थ आते हैं जिनमें काव्य-तत्त्वों के लक्षण देकर उदाहरण रूप में काव्य-रचनाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। इस परम्परा में कतिपय ऐसे आचार्य थे, जिन्होंने काव्यशास्त्र की शिक्षा देने के लिए रीति ग्रन्थों का प्रणयन किया था। समस्त रसों के निरूपक आचार्यों में चिन्तामणि का नाम सर्वप्रथम आता है। 'रस विलास', 'छन्दविचार', 'पिंगल', 'शृङ्गार मंजरी', 'कविकुल कल्पतरु' आदि इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। चिन्तामणि की परम्परा के दूसरे महत्त्वपूर्ण कवि आचार्य कुलपति मिश्र, देव, भिखारीदास, ग्वाल कवि आदि हैं। जिन कवियों के कृतित्व के कारण रीतिकाव्य प्रतिष्ठित हुआ, उनमें देव का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। नव रसों का सफल निरूपण करनेवाले आचार्यों में पद्माकर तथा सैयद गुलाम नबी 'रसलीन' आदि प्रसिद्ध हैं। शृङ्गार-रस-विषयक साँगोपाँग विवेचन करने वाले आचार्यों में मतिराम का नाम सर्वप्रथम है। रीतिबद्ध काव्य-परम्परा के कवियों में कुछ ऐसे भी हैं जिन्होंने रीति ग्रन्थों की रचना न करके काव्य-सिद्धान्तों या लक्षणों के अनुसार काव्य-रचना की है। ऐसे कवियों में सेनापति, बिहारी, वृन्द, नेवाज, कृष्ण आदि की गणना की जाती है। सेनापति का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'कवित्त रत्नाकर' है। बिहारी रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनकी ख्याति का मूल आधार इनकी श्रेष्ठ कृति 'सतसई' है। दोहा जैसे छोटे से छन्द में एक साथ ही अनेक भावों का समावेश कर सकने की सफलता के कारण इनके काव्य में 'गागर में सागर' भरने की उक्ति चरितार्थ होती है।

(ii) रीतिमुक्त काव्य—रीति परम्परा के साहित्यिक बन्धनों एवं रूढ़ियों से मुक्त इस काल की स्वच्छन्द काव्यधारा को रीतिमुक्त काव्य कहा जाता है। आन्तरिक अनुभूति, भावावेग, व्यक्तिपरक अभिव्यञ्जना की सांकेतिक काव्य-रूढ़ियों से मुक्ति, कल्पना की प्रचुरता आदि इसकी विशेषताएँ हैं। इस धारा के प्रमुख कवि **घनानन्द** हैं। इनकी काव्य-शैली बड़ी भावनात्मक तथा मार्मिक है। इस धारा के कवियों की लगभग सारी विशेषताएँ इनके काव्य में एक-साथ प्राप्त हो जाती हैं। इस धारा के अन्य प्रमुख कवि हैं—आलम, ठाकुर, बोधा और द्विजदेव।

रीतिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

1. **रीति निरूपण :** इस युग में रीति ग्रन्थों की रचना मुख्यतः तीन दृष्टियों से की गयी है। इनमें प्रथम उन रीति ग्रन्थों का निर्माण है जिनका उद्देश्य काव्यांग विशेष का परिचय कराना है, कवित्व का आग्रह नहीं है। जसवन्त सिंह का 'भाषा-भूषण', याकूब खाँ का 'रस-भूषण', दलपतिराय वंशीधर का 'अलङ्कार-रत्नाकर' आदि रचनाएँ इसी कोटि में आती हैं। द्वितीय दृष्टि में रीति-कर्म और कवि-कर्म का समन्वय मिलता है। इनमें चिन्तामणि, मतिराम, भूषण, देव, पद्माकर, ग्वाल आदि आते हैं। लक्षणों का निर्माण न करके काव्य-परम्परा के अनुसार साहित्य-सृजन करनेवाले कवियों बिहारी, मतिराम आदि को तीसरी कोटि में रखा जाता है।
2. **शृङ्गारिकता :** शृङ्गार की प्रवृत्ति रीतिकाल की कविता में प्रधान है। शृङ्गार के संविधान में नायक-नायिकाओं के भेद, उद्दीपक सामग्री, अनुभावों के विविध रूपों, संचारियों, संयोग के विविध भाव तथा वियोग की विभिन्न कार्यदशाओं का निरूपण इस प्रवृत्ति का प्राण है। इसमें नारी के बाह्य चित्रण की प्रमुखता है।

3. **राज-प्रशस्ति :** यह प्रवृत्ति अलङ्कार और छन्दों के विवेचन करने वाले ग्रन्थों में भी देखने को मिलती है। इसका मुख्य विषय आश्रयदाताओं की दानवीरता अथवा युद्धवीरता की प्रशंसा ही रही है।
4. **भक्ति की प्रवृत्ति :** रीतिग्रन्थों के प्रारम्भ में मङ्गलाचरणों, ग्रन्थों के अन्त में आशीर्वचनों, भक्ति एवं शान्त रसों के उदाहरणों में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है। राम और कृष्ण को विष्णु के अवतार के रूप में ग्रहण किया गया है। इस काल के कवियों के आकुल मन के लिए भक्ति शरण-भूमि थी। विलासिता के वर्णन से ऊबे हुए कवियों के द्वारा भक्ति की रची गयी फुटकर रचनाएँ बड़ी सुन्दर हैं।
5. **नीति की प्रवृत्ति :** अन्योपदेश तथा अन्योक्तिपरक रचनाओं में नीति की प्रवृत्ति मिलती है। इस प्रकार की रचनाओं में वैयक्तिक अनुभवों का विशेष स्थान है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल का अपना विशिष्ट स्थान है। इस काल में भारतीय काव्यशास्त्र की हिन्दी में अवतारणा हुई। इस काल की कविता का सामाजिक मूल्य भी है। पराभव के उस युग में समाज के अभिशप्त जीवन में सरसता का संचार कर रीति-कालीन कवियों ने अपने ढंग से समाज का उपकार किया था। कला की दृष्टि से भी रीतिकाल के काव्य का महत्त्व असन्दिग्ध है। इसी काल के कवियों ने ब्रजभाषा को पूर्ण विकास तक पहुँचाने का कार्य किया।

आधुनिक काल

हिन्दी साहित्य में आधुनिकता का सूत्रपात अंग्रेजों की साम्राज्यवादी शासन-प्रणाली के नवीन अनुभव से हुआ था, जिसमें बाहर से बड़ी शान्ति दृष्टिगत होती थी, किन्तु भीतर धन का अविरल प्रवाह विदेश की ओर अग्रसर रहता था। यद्यपि अंग्रेज हमारा आर्थिक शोषण करते रहे और अपने देश के सरकारी और साथ-ही-साथ व्यक्तिगत खजाने भी लगातार भरते रहे, तथापि भारतवर्ष में वैज्ञानिक बोध का प्रसार अंग्रेजों के सम्पर्क के फलस्वरूप ही हुआ। आधुनिक युग, जीवन की यथार्थता के ग्रहण, विश्व के विभिन्न व्यापारों के बुद्धिपरक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और साहित्य में सामान्य मानव की प्रतिष्ठा का युग रहा है और यह आधुनिक चेतना हमें अंग्रेजों के सम्पर्क से उपलब्ध हुई। आधुनिक हिन्दी काव्य इसी आधुनिक बोध से ओत-प्रोत आधुनिक चेतना से अनुप्राणित काव्य है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आधुनिक काल का प्रारम्भ सन् 1843 ई0 (संवत् 1900 वि0) से माना है। अन्य अनेक विद्वानों की सम्मति में इसका प्रारम्भ 19वीं शती के मध्य होता है। 7-8 वर्ष आगे-पीछे माने जाने से यह तथ्य विवादास्पद नहीं है। अध्ययन की सुविधा के लिए आधुनिक काल का उपविभाजन इस प्रकार किया गया है—

1. पुनर्जागरण काल (भारतेन्दु-युग) — सन् 1857-1900 ई0
2. जागरण-सुधार-काल (द्विवेदी-युग) — सन् 1900-1922 ई0
3. छायावादी युग — सन् 1923-1938 ई0
4. छायावादोत्तर युग—
   (क) प्रगतिवाद, प्रयोगवाद — सन् 1938-1960 ई0
   (ख) नयी कविता युग — सन् 1960 ई0 से.....

प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

भारतेन्दु युग	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र श्रीधर पाठक	प्रेम-माधुरी कश्मीर-सुषमा
द्विवेदी युग	मैथिलीशरण गुप्त अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	साकेत प्रिय-प्रवास
छायावादी युग	जयशंकर 'प्रसाद' महादेवी वर्मा	कामायनी यामा

प्रगतिवादी युग	शिवमंगल सिंह 'सुमन' रामधारीसिंह 'दिनकर'	प्रलय-सृजन उर्वशी
प्रयोगवादी युग	'अज्ञेय' नागार्जुन	आँगन के पार द्वार प्यासी-पथरायी आँखें
नयी कविता युग	गिरिजाकुमार माथुर भवानीप्रसाद मिश्र	धूप के धान खुशबू के शिलालेख

● भारतेन्दु युग

हिन्दी कविता में आधुनिकता का स्वर सर्वप्रथम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की रचनाओं में सुनने को मिला। हिन्दी काव्यधारा में नवजीवन के संचरण के लिए उन्होंने ही **'कविता-वर्धिनी सभा'** जैसी नवीन साहित्यिक संस्था की स्थापना की थी और उसके मुखपत्र के रूप में **'कविवचन सुधा'** प्रकाशित की थी। भारतेन्दुजी की इस साहित्यिक संस्था की बैठकों की सूचना इसी पत्रिका में छपा करती थी। इसी पत्रिका में उसकी बैठकों में पठित रचनाएँ प्रकाशित हुआ करती थीं और इसी पत्रिका में उन पर मिलने वाले पुरस्कारों की घोषणा होती थी। हिन्दी के आधुनिक काल का कवि अपनी रुचि के विषय को लेकर अपनी रुचि की भाषा और अपनी रुचि के साहित्यिक संविधान में कुछ कहने को स्वच्छन्द था। आधुनिक हिन्दी काव्य आधुनिक कवियों के इसी स्वच्छन्द और समर्थ व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है।

यह मनुष्य की सीमा है कि नवीनता के प्रति अत्यधिक आग्रहशील व्यक्ति भी परम्परा के प्रभाव से अपने को पूर्णतः मुक्त नहीं कर पाता। भारतेन्दु को एक ओर हम देश के आर्थिक शोषण से विक्षुब्ध, स्वदेशानुराग की भावना से ओतप्रोत, मातृभाषा की प्रतिष्ठावृद्धि के लिए कृतसंकल्प, समाज के सुसंस्कार के हित में सहज तत्पर, प्रकृति की दिव्य शोभा के प्रति स्नेह-विह्वल देखते हैं और दूसरी ओर वे वल्लभ सम्प्रदाय से दीक्षा ग्रहण करते हैं, राजाश्रित कवियों की भाँति महारानी विक्टोरिया की प्रशंसा में तल्लीन हैं, रीतिकालीन कवियों के समान काव्य की शृङ्गार-सज्जा में प्रवीण हैं। उनके समकालीन कवियों में भी इसी द्विधा व्यक्तित्व की अभिव्यञ्जना मिलती है। भारतेन्दु स्वयं तो सन् 1885 में दिवंगत हो गये थे, किन्तु उनके समकालीन प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', अम्बिकादत्त व्यास आदि का काव्याभ्यास 19वीं शताब्दी के अन्त तक चलता रहा। उत्तरार्द्ध के कवि श्रीधर पाठक में आधुनिक कविता का स्वच्छन्दतावादी स्वर और अधिक मुखरित हुआ।

● द्विवेदी युग

सन् 1900 ई0 में 'सरस्वती' के प्रकाशन के साथ हिन्दी कविता में आधुनिक प्रवृत्तियाँ बद्धमूल होनी आरम्भ हुईं। भारतेन्दु युग में उस काल की द्विधा वृत्ति के अनुरूप साहित्यिक भाषा के भी दो रूपों का प्रचलन रहा। गद्य रचनाएँ तो खड़ीबोली में लिखी गयीं, किन्तु काव्य-साधना ब्रजभाषा में ही चलती रही। आधुनिकता को हिन्दी साहित्य में पूर्णतः बद्धमूल करने के लिए आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जैसे जागरूक, व्यवस्थित और सशक्त व्यक्तित्व की अपेक्षा थी। सन् 1903 में उन्होंने 'सरस्वती' का सम्पादन-भार ग्रहण किया और अपने महाप्राण व्यक्तित्व की छाया में हिन्दी भाषा और साहित्य का सम्पूर्ण संविधान ही बदल डाला, इसीलिए सन् 1900 से 1922 ई0 तक के काल को द्विवेदी युग की संज्ञा दी जाती है।

आचार्य द्विवेदी की विशेष प्रसिद्धि हिन्दी गद्य को परिष्कृत, परिमार्जित और व्याकरणसम्मत बनाने की दृष्टि से है, किन्तु इससे भी अधिक उनका महत्त्व हिन्दी के शब्दभण्डार की अभिवृद्धि, उसकी अभिव्यञ्जना शक्ति के संवर्धन और उसे ज्ञान-विज्ञान की नवीनतम धाराओं की अभिव्यक्ति के योग्य बनाने का रहा है। हिन्दी कवियों को उन्होंने ब्रजभाषा के मध्ययुगीन माध्यम को छोड़कर खड़ीबोली का आधुनिक माध्यम अपनाने की प्रेरणा दी। आचार्य द्विवेदी के काव्यदर्शन में विशेषरूप से उसके जड़ पक्षों के प्रति प्रबल विद्रोह का स्वर है और साथ-ही-साथ नये क्षेत्रों एवं प्रदेशों के पथ पर अग्रसर होने का आह्वान भी है।

आधुनिक काव्य-दृष्टि के अनुरूप उन्होंने कविता को मन के भावावेग का सहज उद्गार बताया। उनकी धारणा थी कि चींटी से लेकर हाथी पर्यन्त पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यन्त मनुष्य, बिन्दु से लेकर समुद्र पर्यन्त जल, अनन्त आकाश, अनन्त पर्वत सभी को लेकर कविता लिखी जा सकती है, सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी के वर्णन से मनोरंजन हो सकता है। आचार्य द्विवेदी के इस व्यापक काव्य-दर्शन को लेकर मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', कामताप्रसाद

गुरु, लोचनप्रसाद पाण्डेय आदि ने कविताएँ लिखीं। इनकी रचनाओं में भी हमें परम्परा और प्रयोग दोनों के स्वर सुनने को मिलते हैं। आचार्य द्विवेदी सहृदय होते हुए भी मूलतः बुद्धिवादी थे और उनके इसी व्यक्तित्व के अनुरूप उनके युग के साहित्य में इस जगत् के जीवन-प्रवाह का बुद्धिपरक व्याख्यान मिलता है। मैथिलीशरण गुप्त को हम भारतीय इतिहास के लगभग सभी पृष्ठों की बुद्धिपरक व्याख्या उपस्थित करते हुए देखते हैं, जो उनके रसात्मक व्यक्तित्व के कारण सरस भी है। उपाध्यायजी ने पहले कृष्ण और राधा की कथा को आधुनिक बुद्धिवादी दृष्टिकोण के अनुरूप नवीन कलेवर देकर उपस्थित किया और फिर कालान्तर में इसी दृष्टि से वैदेही-बनवास का प्रसंग प्रस्तुत किया। इस काल में अकेले 'रत्नाकर' परम्परा के साथ पूर्णतः आबद्ध होकर मध्ययुगीन विषयों पर मध्ययुगीन काव्यभाषा में मध्ययुगीन कला-सौष्ठव की ही सृष्टि करते रहे।

● छायावादी युग

प्रसादजी का रचनाकाल, जिनकी प्रारम्भिक रचनाओं में ही स्वानुभूति का स्वर प्रधान है, द्विवेदी युग के मध्य काल सन् 1909 से 'इन्दु' पत्रिका के प्रकाशन के साथ आरम्भ होता है। 'इन्दु' की प्रथम कला की प्रथम किरण में ही हम उन्हें स्वच्छन्दतावाद का उद्घोष करते देखते हैं।

स्वच्छन्दतावाद साहित्य में विद्रोह का स्वर रहा है। सामाजिक जीवन में वह रूढ़ियों और परम्पराओं के प्रति विरोध और व्यक्ति के अपनी रुचि के अनुसार कार्य करने की प्रवृत्ति रूप में प्रकट हुआ है। साहित्य में वह अत्यधिक सामाजिकता के विरोध में, आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति को प्रश्रय देता है। स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार स्वभावतः अनुभूतिशील और भावुक मनोवृत्ति का होता है। वह जीवन को अपनी भावना और कल्पना से अनुरंजित करके उपस्थित करता है। वह मूलतः सौन्दर्य का साधक होता है और उसकी यह सौन्दर्य-साधना कभी मानवीय रूप के लिए होती है, कभी प्रकृति के प्रति उन्मुख तथा कभी किसी दिव्य अनुभूति से संप्रेरित होती है।

स्वच्छन्दतावादी काव्य-रचनाओं का कला-पक्ष भी नवीनता लिये होता है। उसमें मौलिक कल्पना का स्वच्छन्द विलास ही दृष्टिगत होता है। हिन्दी का छायावादी काव्य इन सभी विशेषताओं से समन्वित है, साथ ही उसमें भारतीय जीवनधारा की कुछ परम्परागत और कुछ युगीन प्रवृत्तियाँ भी प्रकट हुई हैं। परम्परागत प्रवृत्तियाँ—आध्यात्मिकता का संस्पर्श और वैष्णव भक्ति-भावना तथा युगीन प्रवृत्तियाँ—राष्ट्रीयता, पीड़ित जनता के प्रति सहानुभूति, दुःखवाद या निराशावाद की हैं। प्रत्येक व्यक्ति की अनुभूतियों का स्वरूप भी भिन्न होता है, इसीलिए हिन्दी के इन स्वच्छन्दतावादी कवियों का भी अपना अलग-अलग व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में उभरा है। उनकी काव्य-प्रवृत्तियों में इसीलिए पर्याप्त वैभिन्य है।

हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा में आधुनिक काल के आध्यात्मिक महापुरुषों—रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, रामतीर्थ और कालान्तर में अरविन्द का प्रभाव रहा है। रवीन्द्रनाथ की आध्यात्मिक रचनाओं से भी हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने बहुत कुछ ग्रहण किया है। इसीलिए प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी की रचनाओं में अनेक स्थानों पर इस जगत् के विभिन्न स्वरूपों में उस परब्रह्म का छायाभास पाने जैसी प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। इसी आध्यात्मिक छायादर्शन की प्रवृत्ति के कारण इस काव्यधारा को छायावाद काव्यधारा कहा गया, किन्तु छायावादी कवियों का सम्पूर्ण साहित्य इस आध्यात्मिक प्रवृत्ति से ओत-प्रोत नहीं है।

छायावादी कविता के ह्रास का सबसे बड़ा कारण विदेशी शासन के दमन-चक्र के नीचे पिसते हुए भारतीय जनसाधारण की निरन्तर बढ़ती हुई पीड़ा को कहा जा सकता है; उसी के बोध को लेकर प्रसाद, निराला और पन्त अपने मनोलोक की भावना और कल्पना के प्रदेशों से निकल कर कठोर यथार्थ की भूमि पर उतर आये, पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति प्रकट करने लगे, जनता के दुःख-दर्द को वाणी देने लगे और अपने चारों ओर की कुरूपताओं को मिटाने में तत्पर हो उठे। प्रसाद ने कथा-साहित्य, पन्त ने काव्य-रचनाओं और निराला ने गद्य और पद्य दोनों ही विधानों में अपने चारों ओर के कठोर यथार्थ का चित्रण करनेवाली रचनाएँ उपस्थित कीं। किन्तु जीवन का यह नया यथार्थ अपने समुचित विकास के लिए नये जीवन-दर्शन की अपेक्षा रखता था। यह नया यथार्थ एक तो बाहर का था जिसमें एक ओर पूँजी की वृद्धि होती थी और दूसरी ओर दीनता का प्रसार होता था। मनुष्य के मन के भीतर की घुटन, निराशा, कुण्ठा आदि व्यक्तित्व को खण्डित करने वाली अनेक वृत्तियाँ बड़ी सरगर्मी से चक्कर लगा रही थीं। जीवन के बाह्य यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए कार्ल मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का दर्शन अपनाया गया और मनुष्य के मन के भीतर सिगमण्ड फ्रॉयड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त को उपयोगी समझा गया। साहित्य में प्रथम को प्रगतिवाद और दूसरे को प्रयोगवाद की संज्ञाएँ मिलीं।

● छायावादोत्तर युग

(क) प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद—हिन्दी कविता में प्रगतिवाद की प्रतिष्ठा पश्चिम की मार्क्सवादी विचारधारा को लेकर हुई। किन्तु हमारे देश की भूमि पहले से ही इस नये जीवनदर्शन के लिए परिपक्व थी। यूरोप में पूँजीवादी सभ्यता के पर्याप्त विकसित हो जाने पर उसकी दुर्बलताओं को भली प्रकार पहचान कर उन्हें दूर करके नवीन सभ्यता के आविर्भाव की दृष्टि से साम्यवाद एवं अन्य प्रगतिशील विचारधाराओं का जन्म हुआ था। हमारे देश में भी औद्योगिकीकरण का क्रम बड़ी द्रुतगति के साथ चल रहा था और उसके फलस्वरूप मजदूर-संगठन और उनकी देखा-देखी किसान सभाएँ भी बनने लगी थीं। सन् 1917 में रूस की राज्य-क्रान्ति के अनन्तर सोवियत शासन स्थापित हो जाने पर भारतीय बुद्धिवादी भी सर्वहारा वर्ग को संगठित करके जनक्रान्ति की बात सोचने लगा था। पण्डित जवाहरलाल नेहरू और रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महापुरुषों ने भी रूसी क्रान्ति और सोवियत शासन का अभिनन्दन किया था। इसी पृष्ठभूमि में सन् 1936 की लखनऊ कांग्रेस के समय **प्रगतिशील लेखक संघ** की स्थापना हुई। गाँधीजी की विचारधारा से पर्याप्त प्रभावित प्रेमचन्दजी इस संस्था के प्रथम अधिवेशन के सभापति हुए। इस प्रकार हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी आन्दोलन चाहे मार्क्सवाद से अधिक अनुप्राणित हो गया हो, किन्तु आरम्भ में गाँधीवादियों और कांग्रेस के वामपन्थी विचारधारा के अनेक व्यक्तियों ने इसका सम्पोषण किया था। नरेन्द्र शर्मा का काव्य-विकास प्रेम और प्रकृति के उपरान्त गाँधीवाद और प्रगतिवाद की भूमिका तक पहुँचा। अब वे दर्शन एवं चिन्तन प्रधान हो गये हैं। सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाओं से आधुनिक काव्य में प्रगतिवादी आन्दोलन का आरम्भ हुआ। गजाननमाधव मुक्तिबोध ने अपने सम्बन्ध में, अपने समाज, देश और विदेश के सम्बन्ध में गम्भीरता से सोचने को बाध्य किया और एक चिन्तन दिशा प्रदान की। रामधारीसिंह 'दिनकर' ने इसके क्रान्तिकारी पक्ष को वाणी दी और फिर रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', शिवमंगलसिंह 'सुमन', डॉ0 रामविलास शर्मा की रचनाओं में उसका स्वरूप और निखरा।

प्रगतिवाद के साथ-साथ मनुष्य के मन के यथार्थ को अभिव्यक्त करनेवाली प्रयोगवादी काव्यधारा भी सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' के नेतृत्व में प्रवाहित हुई। इस धारा के कवियों पर प्रारम्भ में फ्रॉयड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त का प्रभाव विशेष रूप से था। सन् 1943 में 'अज्ञेय' ने अपनी पीढ़ी के छह कवियों के सहयोग से 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया।

इस काव्यधारा को प्रयोगवाद की संज्ञा क्यों दी गयी, इस सम्बन्ध में भी **'अज्ञेय'** का यह वक्तव्य द्रष्टव्य है—

"प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किया है....किसी एक काल में किसी विशेष दिशा में प्रयोग करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक ही है। किन्तु कवि क्रमशः अनुभव करता आया है कि जिन क्षेत्रों में प्रयोग हुए हैं उनसे आगे बढ़कर अब उन क्षेत्रों का अन्वेषण होना चाहिए जिन्हें अभी नहीं छुआ गया है या जिनको अभेद्य मान लिया गया है।"

(ख) नयी कविता-युग—सन् 1959 ई0 में तीसरे तारसप्तक के प्रकाशन तथा प्रयोगवाद की समाप्ति के साथ ही सन् 1960 ई0 से नयी कविता का जन्म माना गया। मनुष्य के मन का आलोक अब तक सर्वाधिक अभेद्य रहा था और अज्ञेयजी अथवा प्रयोगवादी कवियों के सौभाग्य से फ्रॉयड ने उसकी अर्गला खोल दी थी। भवानीप्रसाद मिश्र, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती आदि की रचनाओं में आधुनिक मनोविज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों 'सम्बन्धित विचार प्रवाह', 'मुक्त चेतनाधारा', 'मनोविश्लेषण' आदि के अनुरूप मनुष्य के मनोलोक के भावना-प्रवाह, स्वप्न, अवचेतन के भाव-खण्डों आदि के चित्रण देखने को मिलते हैं। हिन्दी कविता इस प्रयोगशीलता की प्रवृत्ति से भी आगे बढ़ गयी है और अब पहले की कविता से अपनी पूर्ण 'पृथकता' घोषित करने के लिए 'नयी कविता' प्रयत्नशील है। सन् 1954 में डॉ0 जगदीश गुप्त और डॉ0 रामस्वरूप चतुर्वेदी के सम्पादन में 'नयी कविता' काव्य संकलन के प्रकाशन से आधुनिक काव्य के इस नये रूप का शुभारम्भ हुआ था और वह इसी नाम के संकलनों में ही नहीं 'कल्पना', 'ज्ञानोदय' आदि पत्रिकाओं के माध्यम से भी आगे बढ़ती रही है। पन्तजी ने 'कला और बूढ़ा चाँद' तथा दिनकर ने 'चक्रवाल' की कुछ रचनाओं में इसी नवीन काव्य-प्रवृत्ति को अपनाया। नयी कविता की आधारभूत विशेषता है कि वह किसी भी दर्शन के साथ बँधी हुई नहीं है और वर्तमान जीवन के सभी स्तरों के यथार्थ को नयी भाषा, नवीन अभिव्यञ्जना विधान और नूतन कलात्मकता के साथ अभिव्यक्त करने में संलग्न है। हिन्दी का यह नया काव्य कविता के परम्परागत स्वरूप से इतना अलग हो गया है कि कविता न कहकर अकविता कहा जाने लगा है। आधुनिक कवि भावुकता के स्थान पर जीवन को बौद्धिक दृष्टिकोण से देखता है और इसीलिए उसे काल्पनिक आदर्शवाद के स्थान पर कटु यथार्थ अधिक आकृष्ट करता है।

●●●

काव्य साहित्य के विकास पर आधारित प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. आदिकाल के सिद्ध साहित्य और जैन साहित्य के एक-एक प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
2. 'मधु मालती' और 'साहित्य लहरी' के रचयिताओं के नाम लिखिए।
3. 'श्रृंगार मंजरी' और 'रस मंजरी' के रचयिताओं के नाम लिखिए।
4. 'कवितावर्धिनी सभा' के संस्थापक का नाम लिखिए तथा उसके मुख्य पत्र का नाम लिखिए।
5. भक्तिकाल की प्रेमाश्रयी शाखा के किसी एक महाकाव्य और उसके रचयिता का नाम लिखिए।
6. नरपति नाल्ह और चन्दबरदाई द्वारा रचित ग्रन्थों के नाम लिखिए।
7. आधुनिक युग के दो महाकाव्यों के नाम लिखिए।
8. आदिकाल के नाथ साहित्य के किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।
9. 'आखिरी कलाम' और 'रामचन्द्रिका' के लेखकों के नाम लिखिए।
10. 'कवित्त रत्नाकर' और 'कविकुल कल्पतरु' के रचयिताओं के नाम लिखिए।
11. 'आनन्द कादम्बिनी' और 'ब्राह्मण' पत्रिका के सम्पादकों के नाम लिखिए।
12. सूफी काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि एवं उनकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।
13. निर्गुण भक्ति काव्यधारा के दो प्रसिद्ध कवियों के नाम बताइए।
14. चन्दबरदाई और नरपति नाल्ह के एक-एक ग्रन्थ का नाम लिखिए।
15. भारतेन्दु के समकालीन दो कवियों के नाम बताइए।
16. प्रगतिशील लेखक-संघ का प्रथम अधिवेशन किसकी अध्यक्षता में और कब हुआ था?
17. गजानन माधव मुक्तिबोध किस सप्तक में संकलित हैं? उनकी एक रचना का नाम लिखिए।
18. रासो ग्रन्थों में किन दो भाषाओं का प्रयोग किया गया है?
19. रामभक्ति शाखा के तुलसीदास के अतिरिक्त किन्हीं दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
20. 'कविकुल-कल्पतरु' एवं 'रामचन्द्रिका' के लेखकों के नाम लिखिए।
21. द्विवेदी युग के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
22. आदिकालीन दो रचनाओं के नाम लिखिए।
23. वीरगाथा काल के दो प्रमुख कवि और उनकी रचना का नाम लिखिए।
24. ज्ञानाश्रयी-शाखा की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।

अथवा निर्गुण भक्ति की ज्ञानाश्रयी शाखा की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

25. प्रेममार्गी काव्यधारा के तीन कवियों के नाम लिखिए।
26. प्रयोगवादी काव्य की कोई दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ लिखिए।
27. कृष्ण को नायक मानकर रचना करनेवाले दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
28. आदिकाल के लिए प्रयुक्त विभिन्न नामों में से किन्हीं दो नामों का उल्लेख कीजिए।
29. रीतिकालीन कविता की दोनों प्रमुख धाराओं का नाम लिखिए।
30. अष्टछाप के दो कवियों के नाम लिखिए।
31. भक्तिकाल की दो प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।

32. प्रयोगवादी काव्यधारा का नेतृत्व करनेवाले कवि का नामोल्लेख कीजिए और उनकी रचना का नाम लिखिए।
33. प्रयोगवादी काव्यधारा के किन्हीं दो कवियों एवं उनकी एक-एक रचना का उल्लेख कीजिए।
34. रीतिकाल की किन्हीं दो प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
अथवा रीतिकाल काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ लिखिए।
35. आदिकाल (वीरगाथा काल) की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
अथवा वीरगाथा काल की किन्हीं चार प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
36. महाकवि सूरदास की दो रचनाओं के नाम लिखिए।
37. छायावादी (आधुनिककाल) कवियों की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
38. दो छायावादी प्रमुख कवियों एवं उनकी रचनाओं के नाम लिखिए।
39. प्रगतिवाद की दो विशेषताएँ अपने शब्दों में लिखिए।
40. रासो साहित्य से सम्बन्धित किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।
41. भक्तिकाल के चार प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
42. छायावाद के एक प्रमुख कवि एवं उसकी एक रचना का नाम लिखिए।
43. रीतिकाल की दो प्रमुख काव्य-कृतियों के नाम लिखिए।
44. रीतिबद्ध काव्य के दो कवियों के नाम लिखिए।
अथवा रीतिकाल के दो कवियों के नाम बताइए और उनकी एक-एक रचनाएँ भी लिखिए।
45. रामभक्ति शाखा की दो प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
46. प्रेममार्गी शाखा के प्रमुख कवि का नाम बताइए तथा उसकी दो रचना का उल्लेख कीजिए।
47. रीतिकाल के वीर रस के किसी एक कवि और उसके द्वारा रचित एक ग्रन्थ का नाम लिखिए।
48. रीतिमुक्त काव्यधारा के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
49. द्विवेदीकालीन दो महाकाव्यों के नाम लिखिए।
50. ब्रजभाषा तथा अवधी भाषा के मध्यकालीन एक-एक प्रसिद्ध महाकाव्य का नाम लिखिए।
51. 'तारसप्तक' का अभिप्राय क्या है?
52. नयी कविता की आधारभूत विशेषताओं का उल्लेख करते हुए किन्हीं दो रचनाओं के नाम लिखिए।
53. हिन्दी की रीतिबद्ध और रीतिमुक्त कविता का अन्तर स्पष्ट कीजिए।
54. 'तारसप्तक' का सम्पादन किसने और किस समय किया?
अथवा 'तारसप्तक' किस सन् में प्रकाशित हुआ था? उसमें संग्रहीत किसी एक कवि का नाम लिखिए।
55. छायावाद के पतन का कारण संक्षेप में लिखिए।
56. पुनर्जागरण काल (भारतेन्दु युग) के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
57. भारतेन्दुकालीन कविता के विकास में योगदान देने वाले दो कवियों के नाम निर्देश कीजिए।
58. 'तारसप्तक' की कविताएँ किस काव्यधारा से सम्बन्धित हैं?
59. अवधी भाषा के किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए।
60. भक्तिकालीन विभिन्न काव्यधाराओं में किस धारा का काव्य सर्वश्रेष्ठ है और उसका सर्वश्रेष्ठ कवि कौन है?
61. राम-भक्ति शाखा के सबसे प्रमुख कवि का नाम तथा उसकी एक प्रमुख रचना का नाम लिखिए।
62. 'साहित्य लहरी', 'चिदम्बरा' और 'कामायनी' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम बताइए।
63. सुमित्रानन्दन पन्त की एक रचना का नाम लिखिए।
64. छायावाद युग के दो महत्त्वपूर्ण कवियों के नाम लिखिए।
65. नयी कविता के दो महत्त्वपूर्ण कवियों के नाम लिखिए।

66. हिन्दी पद्य साहित्य के इतिहास के विभिन्न कालों के नाम लिखिए।
67. प्रेमाश्रयी शाखा की कविताओं की विशेषताएँ लिखिए।
68. 'आँसू', 'उर्वशी', 'राम की शक्ति-पूजा', 'उद्धवशतक' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम लिखिए।
69. सन्त काव्य का अर्थ स्पष्ट कीजिए। इस धारा के प्रमुख कवि का नाम भी लिखिए।
70. भक्ति काव्य की दो प्रमुख शाखाओं के नाम लिखिए।
71. निम्नलिखित में से किन्हीं दो कवि/कवयित्री की एक-एक प्रसिद्ध रचना का नाम लिखिए–
(i) महादेवी वर्मा, (ii) अज्ञेय, (iii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, (iv) दिनकर।
72. 'पद्मावत', 'दोहावली', 'गंगावतरण' में से किन्हीं दो के रचनाकारों के नाम लिखिए।
73. सगुण भक्तिकाव्य की विशेषताएँ संक्षेप में बताइए।
74. आदिकाल के दो रासो काव्य के नाम लिखिए।
75. आचार्य केशवदास की दो प्रमुख काव्य-रचनाओं के नाम लिखिए।
76. हिन्दी के उस कवि का नाम लिखिए जिसकी रचनाओं में आधुनिकता का स्वर सर्वप्रथम सुनने को मिला। उसकी एक रचना का नाम भी लिखिए।
77. महादेवी वर्मा की दो प्रमुख काव्य-रचनाओं के नाम लिखिए।
78. 'कीर्तिलता' और 'परमालरासो' नामक काव्यों के रचनाकारों के नाम बताइए।
79. निर्गुण भक्ति की प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि तथा उनकी एक रचना का नामोल्लेख कीजिए।
80. छायावादोत्तर काल के किसी एक कवि तथा उनकी एक रचना का नाम निर्देश कीजिए।
81. तुलसीदास और केशवदास की एक-एक रचना का नाम लिखिए।
82. रीतिमुक्त काव्यधारा की किन्हीं दो प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
83. 'पद्मावत' और 'रामचन्द्रिका' के रचयिताओं का नामोल्लेख कीजिए।
84. 'रामचन्द्रिका', 'प्रियप्रवास', 'आँसू' और 'शिवा बावनी' नामक काव्य-कृतियों के रचनाकारों का नाम लिखिए।
85. निम्नलिखित पत्रिकाओं के सम्पादकों का नाम लिखिए–
(i) कविवचन सुधा, (ii) सरस्वती।
86. पुनर्जागरण काल किस युग को मानते हैं? उस युग की एक काव्यकृति का उल्लेख कीजिए।
87. रीतिकाल का यह नाम क्यों पड़ा? इस काल के एक प्रसिद्ध कवि का नाम लिखिए।
88. किन्हीं दो प्रगतिवादी काव्यधारा के कवियों के नाम लिखिए।
89. सूफी काव्य के दो कवियों के नाम लिखिए।
90. भारतेन्दु द्वारा सम्पादित दो पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
91. किसी एक प्रगतिवादी कवि का नाम और उसकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।
92. हिन्दी के किस कवि को 'कठिन काव्य का प्रेत' कहा गया है? उसकी किसी एक रचना का नाम लिखिए।
93. मलिक मुहम्मद जायसी तथा सूरदास किस भाषा के कवि हैं?
94. 'भक्तन कौं कहा सीकरी सौं काम' यह पद किस भक्त कवि द्वारा रचित है? यह कवि भक्तिकाल की किस शाखा से सम्बन्धित है?
95. रीतिकाल के किसी एक 'रीतिसिद्ध' कवि का नामोल्लेख करते हुए उसकी किसी एक कृति का नाम लिखिए।
96. धर्मवीर भारती किस 'सप्तक' के कवि हैं? यह सप्तक किस सन् में प्रकाशित हुआ था?
97. 'जयमयंक जसचन्द्रिका' तथा 'पाहुड़ दोहा' कृतियों के रचनाकारों का नाम लिखिए।
98. हिन्दी का प्रथम महाकाव्य किसे माना जाता है? उसका रचनाकार कौन है?
99. 'रास पंचाध्यायी' तथा 'कनुप्रिया' कृतियों के रचनाकारों का नामोल्लेख कीजिए।
100. भक्तिकाल की राम भक्ति शाखा के दो कवियों के नाम लिखिए।

101. डॉ0 रामविलास शर्मा, अज्ञेय, जगदीश गुप्त और शिवमंगलसिंह 'सुमन' में से दो प्रगतिवादी कवियों के नाम लिखिए।
102. आदिकाल के सिद्ध साहित्य के दो कवियों के नाम लिखिए।
103. केशवदास, कुलपति मिश्र, द्विजदेव और आलम में से रीतिमुक्त काव्यधारा के दो प्रतिनिधि कवि लिखिए।
104. प्रगतिशील लेखक-संघ का स्थापना वर्ष और उसके प्रथम सभापति का नाम बताइए।
105. 'पृथ्वीराज रासो' काव्य की रचना किस काल में हुई और उसके रचयिता कौन हैं?
106. 'रसिकप्रिया' और 'सतसई' नामक काव्य कृतियों के रचनाकारों के नाम लिखिए।
107. ज्ञानाश्रयी शाखा के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए।
108. सूरदास एवं तुलसीदास किस भक्ति-धारा के कवि हैं?
109. 'प्रियप्रवास' के रचयिता का नाम लिखिए।
110. 'तीसरा सप्तक' का प्रकाशन कब और किसके संपादन में हुआ था?
111. निर्गुण भक्ति की दो शाखाओं के नाम लिखिए।
112. वीरगाथा काल की दो विशेषताएँ लिखिए।
113. छायावाद काल के दो रचनाकारों के नाम लिखिए।
114. मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा प्रणीत दो ग्रन्थों के नाम लिखिए।
115. गीतावली और दोहावली भक्तिकाल के किस कवि की रचनाएँ हैं?
116. महादेवी वर्मा किस काव्यधारा की कवयित्री हैं?
117. मोहिका हँसेसि, कि कोहरहिं कहनेवाले कवि का क्या नाम था?
118. जयशंकर प्रसाद की दो काव्यकृतियों का नामोल्लेख कीजिए।
119. 'सिवा को सराहौं, कै सराहौं छत्रसाल को' उक्ति किसने कही थी?
120. 'अवधी' के दो महाकाव्यों और उनके रचनाकारों के नाम लिखिए।
121. 'साकेत' एवं 'उर्वशी' के रचनाकारों के नाम लिखिए।
122. अज्ञेय का पूरा नाम लिखिए।
123. 'नयी कविता' पत्रिका के सम्पादकों के नाम लिखिए।
124. द्वैतवाद के प्रवर्तक का नाम लिखिए।
125. जनवादी कविता की वृहद्त्रयी के लेखकों के नाम लिखिए।
126. गुसाईं दत्त को कवि के रूप में किस नाम से जाना जाता है?
127. सप्तक परम्परा के दो कवियों के नाम लिखिए।
128. दूसरा तारसप्तक के सम्पादक का पूरा नाम लिखिए।
129. 'कविवचन सुधा' किस युग की साहित्यिक पत्रिका है? इसके सम्पादक का नाम लिखिए।
130. हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग किस काल को कहा जाता है?
131. प्रगतिवादी युग के किसी एक कवि का नामोल्लेख कीजिए।
132. भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा के दो कवियों का नामोल्लेख कीजिए।
133. छायावाद युग के प्रमुख कवि का नाम लिखिए।
134. तुलसीदास किस काल के कवि हैं? उनकी एक प्रमुख रचना का नाम लिखिए।
135. भूषण किस रस के कवि हैं?
136. साठोत्तरी कविता के किन्हीं दो कवियों और उनकी रचनाओं का नामोल्लेख कीजिए।
137. 'रसवन्ती' के रचनाकार का नाम लिखिए।
138. द्विवेदी युग के किसी एक महाकाव्य का वर्णन कीजिए।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से कौन प्रेमाश्रयी शाखा के कवि नहीं हैं–
(i) जायसी (ii) सूरदास (iii) मंझन (iv) कुतबन

2. निम्नांकित में रामभक्ति शाखा के कौन नहीं हैं–
(i) तुलसीदास (ii) चतुर्भुजदास (iii) अग्रदास (iv) नाभादास

3. निम्नलिखित में से किस कवि को बाल-वर्णन के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है–
(i) तुलसीदास (ii) बिहारी (iii) सूरदास (iv) केशवदास

4. निम्नलिखित कवियों में वल्लभाचार्य का शिष्य कौन था–
(i) भूषण (ii) भिखारीदास (iii) रघुराज सिंह (iv) कृष्णदास

5. निम्नलिखित कवियों में स्वामी रामानन्द का शिष्य कौन था–
(i) नानक (ii) मलूकदास (iii) कबीर (iv) रैदास

6. निम्नलिखित में से कौन सगुणभक्ति शाखा के कवि नहीं हैं–
(i) सूरदास (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iii) तुलसी (iv) मीरा

7. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ सगुणभक्ति धारा का श्रेष्ठ ग्रन्थ है–
(i) कवितावली (ii) साहित्यलहरी (iii) श्रीरामचरितमानस (iv) रामलला नहछू

8. हिन्दी साहित्य के इतिहास में निम्न में से किस काल को 'स्वर्ण युग' कहा जाता है–
(i) रीतिकाल (ii) आदिकाल (iii) भक्तिकाल (iv) आधुनिककाल

9. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ रीतिकालीन काव्य-परम्परा से सम्बन्धित है–
(i) रामचरितमानस (ii) बिहारी सतसई (iii) दीपशिखा (iv) रश्मिरथी

10. रीतिकाल की निम्नलिखित प्रमुख प्रवृत्तियों में से कौन-सी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है–
(i) राज-प्रशस्ति (ii) शृङ्गारिकता (iii) रीति-निरूपणता (iv) नीति

11. निम्नलिखित पत्रिकाओं में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कौन-सी पत्रिका प्रकाशित की थी–
(i) कविवचन सुधा (ii) सरस्वती (iii) कल्पना (iv) ज्ञानोदय

12. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना द्विवेदी युग में लिखी गयी है–
(i) कामायनी (ii) तारसप्तक (iii) प्रियप्रवास (iv) ग्राम्या

13. निम्नलिखित में से छायावादयुगीन कवि हैं–
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर'
(iii) रामधारीसिंह 'दिनकर' (iv) कबीरदास

14. ''प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किया है.....किसी एक काल में किसी विशेष दिशा में प्रयोग करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक ही है।''
ऊपर उद्धृत वक्तव्य निम्नलिखित रचनाकारों में से किसका है–
(i) निराला (ii) अज्ञेय (iii) प्रसाद (iv) महादेवी वर्मा

15. निम्नलिखित में से कौन-सी रचना छायावाद युग में लिखी गयी है–
(i) प्रेम-माधुरी (ii) उद्धव-शतक (iii) चित्राधार (iv) सूरसागावली

16. 'तारसप्तक' का प्रकाशन वर्ष है–
(i) सन् 1954 ई0 (ii) सन् 1943 ई0 (iii) सन् 1938 ई0 (iv) सन् 1936 ई0

17. निम्नलिखित में से प्रयोगवादी कवि कौन हैं–
(i) भूषण (ii) सुमित्रानन्दन पन्त (iii) बिहारी (iv) अज्ञेय

18. 'नयी कविता' काव्य संकलन के सम्पादक थे–
(i) रामेश्वर शुक्ल और डॉ0 रामविलास शर्मा (ii) डॉ0 जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी
(iii) बालकृष्ण शर्मा और रामधारीसिंह 'दिनकर' (iv) अज्ञेय और शिवमंगलसिंह 'सुमन'

19. 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना कब हुई–
(i) सन् 1943 ई0 में (ii) सन् 1954 ई0 में
(iii) सन् 1938 ई0 में (iv) सन् 1936 ई0 में

20. निम्नलिखित में से कौन छायावादी कवि हैं–
(i) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (ii) भूषण
(iii) बिहारी (iv) रामधारीसिंह 'दिनकर'

21. निम्नलिखित में कौन-सा कथन छायावाद से सम्बन्धित है–
(i) इस काव्य में लौकिक वर्णनों के माध्यम से अलौकिकता की व्यञ्जना की गयी है,
(ii) धार्मिक क्षेत्र में रूढ़िवाद और बाह्याडम्बर का विरोध किया गया है
(iii) इस काव्य में मूलतः सौन्दर्य और प्रेम-भावना मुखरित हुई है
(iv) इस काव्य में भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष की प्रधानता है

22. निम्नलिखित में से किस पत्रिका का सम्पादन पं0 प्रतापनारायण मिश्र ने किया है–
(i) विश्वामित्र (ii) सरस्वती (iii) हिन्दी प्रदीप (iv) ब्राह्मण

23. निम्नांकित में से कौन-सी रचना भारतेन्दु युग में लिखी गयी है–
(i) प्रेममाधुरी (ii) कामायनी (iii) निरूपमा (iv) युगवाणी

24. निम्नलिखित में छायावादोत्तर कवि कौन हैं–
(i) हरिऔध (ii) मैथिलीशरण गुप्त (iii) महादेवी वर्मा (iv) अज्ञेय

25. 'विनय पत्रिका' के कवि का नाम है–
(i) सूरदास (ii) कबीरदास (iii) तुलसीदास (iv) जायसी

26. 'अष्टछाप' के कवियों का सम्बन्ध भक्तिकाल की किस शाखा से है?
(i) ज्ञानाश्रयी शाखा (ii) प्रेमाश्रयी शाखा (iii) कृष्णभक्ति शाखा (iv) रामभक्ति शाखा

27. हिन्दी साहित्य में आधुनिकता का प्रवर्तक साहित्यकार किसे माना जाता है?
(i) भूषण (ii) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (iii) मतिराम (iv) गंगकवि

28. निम्नलिखित में छायावादयुगीन कवि नहीं है–
(i) जयशंकर प्रसाद (ii) सुमित्रानन्दन पन्त (iii) मैथिलीशरण गुप्त (iv) महादेवी वर्मा

29. निम्नलिखित में से वीरगाथात्मक रचना नहीं है?
(i) परमाल रासो (ii) विद्यापति (iii) पृथ्वीराज रासो (iv) बीसलदेव रासो

30. वीरगाथा काल की विशेषता है–
(i) नारी का रूप सौन्दर्य चित्रण (ii) प्रकृति चित्रण
(iii) युद्धों का सजीव चित्रण (iv) मुक्तक काव्य की रचना

31. निम्नलिखित में से महाकवि भूषण की रचना है–
(i) रेणुका (ii) चिदम्बरा (iii) दीपशिखा (iv) छत्रसाल दशक

32. 'परमालरासो' किस काल की रचना है?
(i) आदिकाल (ii) भक्तिकाल (iii) रीतिकाल (iv) आधुनिककाल

33. निम्नलिखित में से 'पृथ्वीराज रासो' के रचनाकार हैं–
(i) जायसी (ii) मंझन (iii) कुतबन (iv) चन्दबरदायी

34. 'विनय पत्रिका' किस भाषा की कृति है?
(i) अवधी (ii) ब्रजभाषा (iii) खड़ीबोली हिन्दी (iv) भोजपुरी

35. 'कृष्ण काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं–
(i) मीरा (ii) रसखान (iii) परमानन्ददास (iv) सूरदास

36. निम्नलिखित में से श्रृङ्गार और लक्षण ग्रन्थों की रचना किस काल में की गयी?
(i) आदिकाल (ii) भक्तिकाल (iii) रीतिकाल (iv) वर्तमानकाल

37. वीरगाथाकाल के कवि हैं–
(i) भूषण (ii) बिहारीलाल (iii) केशव (iv) चन्दबरदायी

38. रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं?
(i) घनानन्द (ii) बिहारी (iii) बोधा (iv) आलम

39. जायसी का पद्मावत किस भाषा में लिखा गया है?
(i) ब्रजभाषा (ii) अवधी (iii) खड़ीबोली (iv) फारसी

40. आदिकाल का एक अन्य नाम है–
(i) स्वर्णयुग (ii) सिद्ध-सामन्तकाल (iii) श्रृङ्गारकाल (iv) भक्तिकाल

41. निम्नलिखित में से कौन भक्तिकाल का काव्य नहीं है?
(i) रामचरितमानस (ii) विनयपत्रिका (iii) कवितावली (iv) बीसलदेव रासो

42. 'समन्वय की विराट चेष्टा' तुलसी के किस ग्रन्थ में मिलती है?
(i) रामचरितमानस (ii) विनय पत्रिका (iii) कवितावली (iv) दोहावली

43. रामधारीसिंह 'दिनकर' किस काव्यधारा के कवि हैं?
(i) छायावाद (ii) प्रगतिवाद (iii) नयी कविता (iv) राष्ट्रीय काव्यधारा

44. निम्न में से कौन कवि रीतिमुक्त काव्यधारा का है?
(i) चिन्तामणि (ii) केशव (iii) ठाकुर (iv) देव

45. निम्न में कौन महादेवी की रचना है?
(i) धूप के धान (ii) चाँद का मुँह टेढ़ा (iii) सान्ध्यगीत (iv) पल्लव

46. निम्नलिखित में से कौन प्रयोगवादी कवि नहीं है?
(i) प्रभाकर माचवे (ii) मुक्तिबोध (iii) शिवमंगलसिंह 'सुमन' (iv) अज्ञेय

47. 'खुमाण रासो' किसकी रचना है?
(i) जगनिक (ii) नरपति नाल्ह (iii) दलपति विजय (iv) भट्ट केदार

48. निम्नलिखित में से कौन कवि राष्ट्रीय काव्यधारा का नहीं है?
(i) दिनकर (ii) मैथिलीशरण गुप्त (iii) जयशंकर प्रसाद (iv) अज्ञेय

49. जयशंकर प्रसाद की रचना है–
(i) युगवाणी (ii) अनामिका (iii) लहर (iv) साकेत

50. निम्नलिखित में से कौन प्रगतिवादी कवि नहीं है?
(i) नागार्जुन (ii) त्रिलोचन (iii) केदारनाथ अग्रवाल (iv) नेमिचन्द जैन

51. 'जयचन्द्र प्रकाश' किसकी रचना है?
(i) चन्दबरदायी (ii) नरपति नाल्ह (iii) भट्ट केदार (iv) विद्यापति

52. निम्नलिखित में से भक्तिकालीन कवि कौन हैं?
(i) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (ii) कुम्भनदास (iii) हरिऔध (iv) महादेवी वर्मा

53. छायावाद की विशेषता है–
(i) इतिवृत्तात्मकता (ii) शृङ्गारिक भावना (iii) सौन्दर्य एवं प्रेम (iv) उपदेशात्मक वृत्ति

54. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ रीतिकाल का है?
(i) साकेत (ii) उद्धवशतक (iii) रामचरितमानस (iv) बिहारी-सतसई

55. निम्नलिखित में से कौन-सा ग्रन्थ भक्तिकाल का है?
(i) पृथ्वीराज रासो (ii) साकेत (iii) कामायनी (iv) विनयपत्रिका

56. 'आँसू' की रचना किस कवि ने की?
(i) बिहारी (ii) नरपति नाल्ह (iii) जयशंकर प्रसाद (iv) अज्ञेय

57. निम्नलिखित में से रीतिकालीन कवि कौन-सा है?
(i) मीराबाई (ii) रसखान (iii) घनानन्द (iv) मैथिलीशरण गुप्त

58. प्रयोगवाद के प्रवर्तक हैं–
(i) निराला (ii) अज्ञेय
(iii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर' (iv) मैथिलीशरण गुप्त

59. मैथिलीशरण गुप्त आधुनिककाल के किस युग से सम्बन्धित हैं?
(i) शुक्ल युग (ii) द्विवेदी युग (iii) छायावाद युग (iv) छायावादोत्तर युग

60. निम्नलिखित में कौन-सा ग्रन्थ रीतिकाल में लिखा गया है?
(i) साकेत (ii) बिहारी-सतसई (iii) विनयपत्रिका (iv) पृथ्वीराज रासो

61. निम्नलिखित में से कौन-सी दो रचनाएँ भक्तिकाल की नहीं हैं?
(i) सूरसागर (ii) बिहारी-सतसई (iii) बीजक (iv) आँसू

62. निम्नलिखित वाक्यों में से भक्तिकाल की दो सही प्रवृत्तियों को लिखिए–
(i) शृंगार रस की प्रधानता (ii) स्वान्तः सुखाय की भावना
(iii) राजप्रशस्ति की अभिव्यक्ति (iv) भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष का समन्वय

63. निम्नलिखित में से कौन-सी रचनाएँ आधुनिककाल की हैं?
(i) विनय-पत्रिका (ii) साकेत (iii) कामायनी (iv) पद्मावत

64. 'साहित्य सुधानिधि' के सम्पादक हैं–
(i) जगन्नाथ दास रत्नाकर (ii) महावीरप्रसाद द्विवेदी
(iii) अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (iv) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

65. 'हरिऔध' का जन्म-स्थान है–
(i) एबटाबाद (ii) निजामाबाद (iii) काशी (iv) फर्रुखाबाद

66. 'प्रसाद' का काव्य प्रवृत्ति-निवृत्ति मिश्रित है–
(i) लहर में (ii) आँसू में (iii) झरना में (iv) कामायनी में

67. कवि पंत को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला–
(i) चिदम्बरा पर (ii) वीणा पर
(iii) लोकायतन पर (iv) कला और बूढ़ा चाँद पर

68. 'नीहार' कृति है–
(i) जयशंकर प्रसाद की (ii) महादेवी वर्मा की
(iii) सुमित्रानन्दन पंत की (iv) 'निराला' की

69. निम्नलिखित में से प्रयोगवादी कवि कौन है?
(i) भूषण (ii) बिहारी (iii) सुमित्रानन्दन पंत (iv) 'अज्ञेय'

70. 'अनामिका' के रचयिता हैं–
(i) महादेवी वर्मा (ii) सुमित्रानन्दन पंत (iii) 'निराला' (iv) 'अज्ञेय'

71. कौन-सा कवि अष्टछाप का नहीं है?
(i) परमानन्द (ii) नन्ददास (iii) नाभादास (iv) चतुर्भुजदास

72. रीतिकाल के किस कवि ने वीर रस की रचना लिखी है–
(i) घनानन्द (ii) भूषण (iii) बिहारी (iv) सेनापति

73. तारसप्तक के सम्पादक हैं–
(i) निराला (ii) महादेवी वर्मा (iii) अज्ञेय (iv) श्यामनारायण पाण्डेय

74. 'कामायनी' महाकाव्य के रचयिता हैं–
(i) सुमित्रानन्दन पंत (ii) निराला (iii) जयशंकर प्रसाद (iv) धर्मवीर भारती

75. निम्नलिखित में कौन-सा ग्रन्थ आदिकाल का है?
(i) रामचरित मानस (ii) पद्मावत (iii) पृथ्वीराज रासो (iv) कामायनी

76. ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं–
(i) तुलसीदास (ii) सूरदास (iii) नन्ददास (iv) कबीरदास

77. तुलसीदास ने रामचरित मानस की रचना की है–
(i) ब्रजभाषा में (ii) भोजपुरी में (iii) अवधी में (iv) खड़ीबोली में

78. रीतिकाल का अन्य नाम है–
(i) स्वर्णकाल (ii) उद्भवकाल (iii) शृंगारकाल (iv) संक्रान्तिकाल

79. कविवर बिहारी की रचना है–
(i) गंगा लहरी (ii) सतसई (iii) रस मीमांसा (iv) वैदेही वनवास

80. 'पृथ्वीराज रासो' का रचनाकाल है–
(i) पूर्वकाल (ii) भक्तिकाल (iii) आदिकाल (iv) रीतिकाल

81. तारसप्तक के सम्पादक हैं–
(i) कुँवर नारायण (ii) अज्ञेय (iii) श्रीधर पाठक (iv) हरिऔध

82. रीतिबद्ध काव्य के कवि हैं–
(i) बिहारी (ii) माखनलाल चतुर्वेदी (iii) भिखारीदास (iv) ठाकुर

83. अखरावट के रचनाकार हैं–
(i) मलिक मुहम्मद जायसी (ii) सन्त कबीर (iii) जगन्नाथदास 'रत्नाकर' (iv) घनानन्द

84. भक्तिकाल की रचना है–
(i) साकेत (ii) विनय पत्रिका (iii) लहर (iv) प्रेम माधुरी

85. छायावाद के कवि हैं–
(i) कुँवर नारायण (ii) जयशंकर प्रसाद (iii) अज्ञेय (iv) माखनलाल चतुर्वेदी

86. मैथिलीशरण गुप्त की रचना है–
(i) लोकायतन (ii) परिमल (iii) भारत-भारती (iv) परिवर्तन

87. अष्टछाप के कवि नहीं हैं–
(i) नंददास (ii) सूरदास (iii) छीतस्वामी (iv) भिखारीदास

88. प्रयोगवादी कवि हैं–
(i) महादेवी वर्मा (ii) सुमित्रानन्दन पंत (iii) निराला (iv) गिरिजाकुमार माथुर

●●●

अध्ययन-अध्यापन

कविता का मुख्य उद्देश्य काव्य-सौन्दर्य की रसानुभूति द्वारा आनन्द प्राप्त कराना है। यह आनन्द मूलतः अर्थ का आनन्द है जो कविता में अन्तर्निहित रहता है। कविता का अध्ययन-अध्यापन इस प्रकार होना चाहिए कि इस उद्देश्य की पूर्ति हो सके। इसके लिए पूरी कविता को एक साथ पढ़ना चाहिए। पढ़ते समय यह ध्यान बराबर रखना चाहिए कि छन्द की लय, गति, यति का अनुसरण भी अर्थ-ग्रहण में सहायक होता है।

कक्षा में कविता का प्रभावशाली मुखर वाचन महत्त्वपूर्ण है। अध्यापक अपने आदर्श वाचन से इसमें सहायता दे सकते हैं। कक्षा में अच्छा पढ़ने वाले छात्र आदर्श प्रस्तुत कर सकते हैं और शेष छात्र उनका अनुकरण कर सकते हैं।

रस-निरूपण, छन्द-विधान और अलङ्कार-योजना का बोध कविता के भाव ग्रहण करने में सहायक होता है। टिप्पणी के अन्तर्गत कठिन शब्दों के अर्थ एवं आवश्यक सन्दर्भ दिये गये हैं। इस सारी सामग्री का अध्ययन भली-भाँति करना चाहिए। इस अध्ययन से रचनाओं के भाव-ग्रहण में सहायता मिलेगी और सौन्दर्यानुभूति के साथ काव्यानन्द की भी उपलब्धि हो सकेगी। बार-बार पढ़ने से ही अच्छी कविता का सौन्दर्य सहज ग्राह्य होता है।

पुस्तक में संकलित कुछ कविताएँ अपेक्षाकृत बड़ी हैं जिनमें आद्यन्त पूर्वापर सम्बन्ध लिये हुए एक ही कथा या भाव का वर्णन है, जैसे मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा रचित 'नागमती वियोग वर्णन' सूर का भ्रमर-गीत एवं तुलसी का 'भरत महिमा' आदि। कुछ रचनाएँ ऐसी हैं जो अलग-अलग अपने अर्थ में पूर्ण और स्वतन्त्र हैं, जैसे कबीर की **साखियाँ** और तुलसी तथा बिहारी के **दोहे** आदि। इस प्रकार की स्वतन्त्र रचनाएँ मुक्तक कहलाती हैं। प्रत्येक दोहा या पद अपने में पूर्ण है, अतः प्रत्येक को पूरी कविता मानकर ही पढ़ना चाहिए और इसी प्रकार उसकी व्याख्या भी करनी चाहिए।

आपको किसी कविता में मुख्यतः नाद-सौन्दर्य मिलेगा तो किसी में भाव या विचार सौन्दर्य। कविता का नाद-सौन्दर्य वर्णों की आवृत्ति, शब्द-योजना, अलङ्कार-योजना, चित्रात्मक भाषा आदि पर निर्भर है। अतः इन विशेषताओं पर ध्यान रखकर कविता का सस्वर पाठ करने से नाद-सौन्दर्य अपने आप परिलक्षित होगा। अधिकतर कविताएँ छन्दोबद्ध हैं। मध्ययुगीन कवियों की कविताएँ छन्दोबद्ध ही मिलेंगी। उस युग के प्रसिद्ध छन्द हैं—दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त आदि। प्रत्येक छन्द की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं, जिन्हें ध्यान में रखकर उन्हें पढ़ना चाहिए। इससे कविता के नाद-सौन्दर्य का बोध तो होगा ही, उसका अर्थ समझने में भी सहायता मिलेगी।

कुछ कविताएँ ऐसी मिलेंगी जिनमें नाद-सौन्दर्य या भाव-सौन्दर्य की अपेक्षा विचार-सौन्दर्य की प्रधानता है, जैसे कबीर की साखियाँ। इनके द्वारा कवि आदर्श जीवन-मूल्यों के प्रति हमें अभिप्रेरित करना चाहता है। ऐसी कविताओं को इसी दृष्टि से पढ़ना चाहिए। कवि सम्मेलनों में और रेडियो पर कवियों के प्रभावशाली वाचन पर ध्यान देना चाहिए। कुछ कवियों की कविताओं के रिकार्ड और टेप भी मिलते हैं जिनका सुविधानुसार उपयोग किया जा सकता है।

वाचन के साथ ही कविता का केन्द्रीय भाव उभर कर सामने आने लगता है। अध्यापक को प्रारम्भ में इस पर कुछ चर्चा करनी चाहिए। इस कविता की मूल प्रेरणा क्या है? कवि इस कविता में क्या कहना चाहता है? किन पंक्तियों में इस कविता का केन्द्रीय भाव छिपा है? आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनसे इस चर्चा में सहायता मिल सकती है। यह आवश्यक नहीं है कि इन

प्रश्नों का उत्तर एक ही हो। बहुधा एक ही कविता विभिन्न व्यक्तियों के मन पर विभिन्न प्रभाव डालती है, इसलिए इस विषय में मतभेद स्वाभाविक है। इससे कवि के आशय को पकड़ने में सहायता मिलती है। यदि सहानुभूति से कविता को पढ़ा जाय तो प्रायः वह अपना आशय स्वयं कह देती है। इसके बाद कविता को पंक्तिशः देखा जाना चाहिए। अपरिचित शब्दों के अर्थ, अन्तःकथा और व्याख्या की अपेक्षा रखनेवाले स्थलों पर यहाँ विशेष ध्यान देना वांछनीय होगा। यह विश्लेषण कविता के सौन्दर्य को और अधिक गहराई से अनुभव कराने के लिए होना चाहिए।

कविता को उसके सम्पूर्ण विन्यास में समझने के बाद उसके कला-पक्ष पर ध्यान देना चाहिए। सम्पूर्ण कविता की संयोजना, उसकी भाषा, अर्थगर्भित शब्दों, छन्द विधान, अलङ्कार आदि के प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

इसके बाद एक बार फिर कविता का मुखर वाचन करना अच्छा होगा। कविता के बाद कवि के विषय में चर्चा उपयोगी होगी। कवि के काल और उसकी परिस्थितियों का कवि पर प्रभाव जानना अच्छा रहता है। कवि के समकालीन अन्य कवियों का सामान्य परिचय उपयोगी होगा। कवि की अन्य रचनाओं को सुनने में छात्र रुचि दिखा सकते हैं।

पठित कविता के समान भाव वाली कविता कक्षा में सुनायी जा सकती है। इसमें कविता के भावों को गहराई से समझने में सहायता मिलती है और कवियों तथा कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन करने की योग्यता का भी विकास होता है।

भाव-बोध की कसौटी यह है कि पाठक उस भाव की अभिव्यक्ति कर सके। व्याख्या इसी अभिव्यक्ति का एक रूप है। परीक्षा की दृष्टि से भी व्याख्या करना और उसे विधिवत लिखना उपयोगी होता है। व्याख्या के सन्दर्भ आदि लिखने के पश्चात् पहले मूलभाव लिखा जाय और फिर अर्थ स्पष्ट किया जाय। इस अनुक्रम में सुन्दर स्थलों की कुछ विशेष व्याख्या की जानी चाहिए। यदि कोई अन्तःकथा हो तो उसे भी लिखना चाहिए।

शिक्षण से सम्बन्धित सामान्य बातों का ही यहाँ पर संकेत किया गया है। स्थानीय परिस्थितियों और कार्य की सीमाओं को देखते हुए शिक्षकों को स्वविवेक का सहारा सदैव लेना पड़ेगा।

●●●

1 कबीरदास

भक्तिकालीन धारा की निर्गुणाश्रयी शाखा के अन्तर्गत ज्ञानमार्ग का प्रतिपादन करने वाले महान् सन्त कबीरदास की जन्मतिथि के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत प्रकट नहीं किया जा सकता। प्रामाणिक साक्ष्य उपलब्ध न होने के कारण इनके जन्म के सम्बन्ध में अनेक जनश्रुतियाँ एवं किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। 'कबीर पन्थ' में कबीर का आविर्भावकाल सं0 1455 वि0 (1398 ई0) में ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को सोमवार के दिन माना जाता है। कबीर के जन्म के सम्बन्ध में निम्न काव्य-पंक्तियाँ प्रसिद्ध हैं—

चौदह सौ पचपन साल गये, चन्द्रवार एक ठाट ठये।
जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी प्रगट भये।।
घन गरजे दामिन दमके, बूँदें बरसें झर लाग गये।
लहर तालाब में कमल खिलिहैं, तहँ कबीर भानु परकास भये।।

'भक्त परम्परा' में प्रसिद्ध है कि किसी विधवा ब्राह्मणी को स्वामी रामानन्द के आशीर्वाद से पुत्र उत्पन्न होने पर उसने समाज के भय से काशी के समीप लहरतारा (लहर तालाब) के किनारे फेंक दिया था, जहाँ से नीमा और नीरू (नूरी) नामक जुलाहा दम्पति ने उसे ले जाकर पाला और उसका नाम कबीर रखा। कबीर के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में तीन प्रकार के मत प्रचलित हैं—काशी, मगहर और आजमगढ़ जिले में बेलहरा गाँव। सर्वाधिक स्वीकार मत काशी का ही है। 'भक्त-परम्परा' एवं 'कबीर पन्थ' के अनुसार स्वामी रामानन्दजी इनके गुरु थे।

कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1455 वि0 (1398 ई0)
- **जन्म-स्थान**—काशी (वाराणसी)।
- **गुरु**—रामानन्द।
- **पत्नी**—लोई।
- **पुत्र**—कमाल। **पुत्री**—कमाली।
- **ब्रह्म का रूप**—निर्गुण।
- **भाषा**—सधुक्कड़ी, पंचमेल खिचड़ी।
- **शैली**—खण्डनात्मक, उपदेशात्मक, अनुभूति व्यंजक।
- **लेखन विधा**—काव्य।
- **प्रमुख रचनाएँ**—साखी, सबद एवं रमैनी।
- **मृत्यु**—संवत् 1575 वि0 (1518 ई0)
- **साहित्य में स्थान**—भक्तिकाल की ज्ञानाश्रयी व सन्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि के रूप में प्रतिष्ठित।

कबीर अपने युग के सबसे महान् समाज-सुधारक, प्रतिभा-सम्पन्न एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे। ये अनेक प्रकार के विरोधी संस्कारों में पले थे और किसी भी बाह्य आडम्बर, कर्मकाण्ड और पूजा-पाठ की अपेक्षा पवित्र, नैतिक और सादे जीवन को अधिक महत्त्व देते थे। सत्य, अहिंसा, दया तथा संयम से युक्त धर्म के सामान्य स्वरूप में ही ये विश्वास करते थे। जो भी सम्प्रदाय इन मूल्यों के विरुद्ध कहता था, उसका ये निर्ममता से खण्डन करते थे। इसी से इन्होंने अपनी रचनाओं में हिन्दू और मुसलमान दोनों के रूढ़िगत विश्वासों एवं धार्मिक कुरीतियों का विरोध किया है।

कबीर की मृत्यु के सम्बन्ध में भी अनेक मत हैं। 'कबीर पन्थ' में कबीर का मृत्युकाल सं0 1575 वि0 माघ शुक्ल पक्ष एकादशी, बुधवार (1518 ई0) को माना गया है, जो कि तर्कसंगत प्रतीत होता है। 'कबीर परचई' के अनुसार बीस वर्ष में कबीर चेतन हुए और सौ वर्ष तक भक्ति करने के बाद मुक्ति पायी अर्थात् इन्होंने 120 वर्ष की आयु पायी थी–

बालपनौ धोखा मैं गयो, बीस बरिस तैं चेतन भयो॥
बरिस सऊ लगि कीन्हीं भगती, ता पीछै सो पायी मुकती॥

कबीर ने कभी अपनी रचनाओं को एक कवि की भाँति लिखने-लिखाने का प्रयत्न नहीं किया था। गानेवाले के मुख में पड़कर उनका रूप भी एक-सा नहीं रह गया। कबीर ने स्वयं कहा है—''**मसि कागद छुऔ नहीं, कलम गह्यो नहिं हाथ।**'' इससे स्पष्ट है कि इन्होंने भक्ति के आवेश में जिन पदों एवं साखियों को गाया, उन्हें इनके शिष्यों ने संग्रहीत कर लिया। उसी संग्रह का नाम '**बीजक**' है। यह संग्रह तीन भागों में विभाजित है—**साखी, सबद** और **रमैनी**। अधिकांश 'साखियाँ' दोहों में लिखी गयी हैं, पर उनमें सोरठे का प्रयोग भी मिलता है। 'सबद' गेय पद हैं और इनमें संगीतात्मकता का भाव विद्यमान है। चौपाई एवं दोहा छन्द में रचित 'रमैनी' में कबीर के रहस्यवादी और दार्शनिक विचारों को प्रकट किया गया है।

कबीर के काव्य में भावात्मक रहस्यवाद की अभिव्यक्ति भी भली प्रकार हुई है। भावात्मक रहस्यवाद माधुर्य भाव से प्रेरित है, इसके अन्तर्गत कविगण परमात्मा को पुरुष और आत्मा को नारी रूप में चित्रित करते हैं। कबीर भी राम की 'बहुरिया' बन जाते हैं। कबीर को छन्दों का ज्ञान नहीं था, पर छन्दों की स्वच्छन्दता ही कबीर-काव्य की सुन्दरता बन गयी है। अलंकारों का चमत्कार दिखाने की प्रवृत्ति कबीर में नहीं है, पर इनका स्वाभाविक प्रयोग हृदय को मुग्ध कर लेता है। इनकी कविता में अत्यन्त सरल और स्वाभाविक भाव एवं विचार-सौन्दर्य के दर्शन होते हैं।

कबीर की भाषा में पंजाबी, राजस्थानी, अवधी आदि अनेक प्रान्तीय भाषाओं के शब्दों की खिचड़ी मिलती है। सहज भावाभिव्यक्ति के लिए ऐसी ही लोकभाषा की आवश्यकता भी थी; इसीलिए इन्होंने साहित्य की अलंकृत भाषा को छोड़कर लोकभाषा को अपनाया। इनकी साखियों की भाषा अत्यन्त सरल और प्रसाद-गुण-सम्पन्न है। कहीं-कहीं सूक्तियों का चमत्कार भी दृष्टिगोचर होता है। हठयोग और रहस्यवाद की विचित्र अनुभूतियों का वर्णन करते समय कबीर की भाषा में लाक्षणिकता आ गयी है। ऐसे स्थलों पर संकेतों और प्रतीकों के माध्यम से बात कही गयी है। कुछ अद्भुत अनुभूतियों को कबीर ने विरोधाभास के माध्यम से उलटवाँसियों की चमत्कारपूर्ण शैली में व्यक्त किया है जिससे कहीं-कहीं दुर्बोधता आ गयी है।

सन्त कबीर एक उच्चकोटि के सन्त तो थे ही, हिन्दी साहित्य में एक श्रेष्ठ एवं प्रतिभावान कवि के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। ये केवल राम जपने वाले जड़ साधक नहीं थे, सत्संगति से इन्हें जो बीज मिला उसे इन्होंने अपने पुरुषार्थ से वृक्ष का रूप दिया। **डॉ0 हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने कहा था—*''हिन्दी साहित्य के हजार वर्षों में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। महिमा में यह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्द्वी जानता है—तुलसीदास।''*

●●●

साखी

[अनुभूति से साक्षात्कृत सत्य को प्रकट करनेवाली उक्ति को 'साखी' कहते हैं। वस्तुतः संस्कृत के 'साक्षी' शब्द का विकृत रूप ही 'साखी' है, जो धर्मोपदेश के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। दोहा छन्द में रचित 'साखी' में कबीर की शिक्षा और उनके सिद्धान्तों का निरूपण अधिकांशतः हुआ है। कबीर के आध्यात्मिक अनुभवों पर आधारित होने के कारण उनके दोहों को 'साखी' नाम दिया गया है।]

बलिहारी गुर आपणैं, द्योहाड़ी कै बार।
जिनि मानिष तैं देवता, करत न लागी बार।।1।।

सतगुरु की महिमा अनँत, अनँत किया उपगार।
लोचन अनँत उघाड़िया, अनँत दिखावणहार।।2।।

दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहुणाँ, बहुरि न आवौं हट्ट।।3।।

बूड़े थे परि ऊबरे, गुर की लहरि चमंकि।
भेरा देख्या जरजरा, ऊतरि पड़े फरंकि।।4।।

चिंता तौ हरि नाँव की, और न चिन्ता दास।
जे कुछ चितवै राम बिन, सोइ काल की पास।।5।।

तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ मैं रही न हूँ।
बारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तूँ।।6।।

कबीर सूता क्या करै, काहे न देखै जागि।
जाके सँग तैं बीछुड्या, ताही के सँग लागि।।7।।

केसौ कहि कहि कूकिये, ना सोइयै असरार।
राति दिवस कै कूकणैं, कबहूँ लगै पुकार।।8।।

लंबा मारग दूरि घर, विकट पंथ बहु मार।
कहौ संतौ क्यूं पाइये, दुर्लभ हरि दीदार।।9।।

यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाऊँ।
लेखणि करूँ करंक की, लिखि-लिखि राम पठाऊँ।।10।।

कै बिरहनि कूँ मींच दे, कै आपा दिखलाइ।
आठ पहर का दाझणा, मोपै सह्या न जाइ।।11।।

कबीर रेख स्यँदूर की, काजल दिया न जाइ।
नैनूँ रमइया रमि रह्या, दूजा कहाँ समाइ।।12।।

सायर नाहीं सीप बिन, स्वाति बूँद भी नाहिं।
कबीर मोती नीपजैं, सुन्नि सिषर गढ़ माँहिं।।13।।

पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कहा न जाइ।।14।।

पंखि उड़ाणीं गगन कूँ, प्यंड रह्या परदेस।
पाणी पीया चंच बिन, भूलि गया यहु देस।।15।।

पिंजर प्रेम प्रकासिया, अंतरि भया उजास।
मुखि कस्तूरी महमही, बाणी फूटी बास।।16।।

नैनां अन्तरि आव तूँ, ज्यूँ हौं नैन झँपेउँ।
ना हौं देखौं और कूँ, ना तुझ देखन देउँ।।17।।

कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि।
पाका कलस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।।18।।

हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ।
बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।।19।।

कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै हाथि करि, सो पैठे घर माहिं।।20।।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहिं।।21।।

पदावली

दुलहनीं गावहु मंगलचार,
हम घरि आयो हो राजा राम भरतार।
तन रति करि मै, मन रति करिहूँ पंचतत बराती।।
रामदेव मोरै पांहुनैं आये, मैं जोबन मैमाती।।
सरीर सरोवर बेदी करिहूँ, ब्रह्मा बेद उचार।।
रामदेव संग भाँवरि लैहूँ, धनि धनि भाग हमार।।
सुर तैतीसूँ कौतिग आये, मुनिवर सहस अठ्यासी।।
कहै कबीर हमै ब्याहि चले हैं, पुरिष एक अबिनासी।।1।।

बहुत दिनन थैं मैं प्रीतम पाये,
भाग बड़े घरि बैठे आये।।
मंगलचार माँहि मन राखौं, राम रसाइंण रसना चाषौं।।
मन्दिर माँहिं भया उजियारा, ले सूती अपनाँ पीव पियारा।।
मैं रनिरासी जे निधि पाई, हमहिं कहा यहु तुमहिं बड़ाई।
कहै कबीर मैं कछु न कीन्हाँ, सखी सुहाग राम मोहिं दीन्हाँ।।2।

संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उड़ाणीं, माया रहै न बाँधी रे।
दुचिते की दोइ थूनीं गिरानीं, मोह बलींडा टूटा।
त्रिस्नां छानि परी घर ऊपरि, कुबुधि का भाँडा फूटा।।
जोग जुगति करि संतौं बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।
आँधी पीछैं जो जल बूठा, प्रेम हरी जन भीनाँ।।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे, उदित भया तम षीनाँ।।3।।

पंडित बाद बदंते झूठा।
राम कह्याँ दुनियाँ गति पावै, खाँड कह्याँ मुख मीठा।
पावक कह्याँ पाँव जे दाझे, जल कहि त्रिषा बुझाई।
भोजन कह्याँ भूषि जे भाजै, तौ सब कोई तिरि जाई।।
नर के साथ सूवा हरि बोलै, हरि परताप न जाणै।
जो कबहूँ उड़ि जाइ जँगल मैं, बहुरि न सुरतैं आणै।।
साँची प्रीति विषै माया सूँ, हरि भगतनि सूँ हाँसी।
कहै कबीर प्रेम नहिं उपज्यौ, बाँध्यौ जमपुरि जासी।।4।।

हम न मरैं मरिहै संसारा।
हम कूँ मिल्या जियावनहारा।
अब न मरौं मरनैं मन माना, तेई मूए जिनि राम न जाना।
साकत मरैं संत जन जीवै, भरि भरि राम रसाइन पीवै।।
हरि मरिहैं तौ हमहूँ मरिहैं, हरि न मरैं हम काहे कूँ मरिहैं।
कहै कबीर मन मनहि मिलावा, अमर भये सुख सागर पावा।।5।।

काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी,
तेरे ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निबास।।
ना तलि तपति ना ऊपरि आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि।।
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हमारे जान।।6।।

('कबीर ग्रन्थावली' से)

अभ्यास प्रश्न

पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

साखी

(क) दीपक दीया तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहुणाँ, बहुरि न आवौं हट्ट।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गुरु ने भक्त को किस प्रकार का दीपक दिया है?
(iv) सद्गुरु द्वारा दिये गये दीपक में किस प्रकार का तेल भरा है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(ख) यहु तन जालौं मसि करौं, लिखौं राम का नाऊँ।
लेखणि करूँ करंक की, लिखि-लिखि राम पठाऊँ।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत दोहे में कौन और किसे अपना सन्देश भेजने के लिए व्याकुल है?
(iv) जीवात्मा अपनी हड्डियों के सन्दर्भ में क्या कहना चाहती है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(ग) पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कहा न जाइ।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) आत्मा के सन्दर्भ में कबीर के क्या विचार हैं?
(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर किसे एक रूप में मानते हैं?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(घ) पंखि उड़ाणीं गगन कूँ, प्यंड रह्या परदेस।
पाणी पीया चंच बिन, भूलि गया यहु देस।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) सहस्रार में पहुँचकर जीवरूपी पक्षी ने क्या किया?
(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर ने किसका वर्णन किया है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(ङ) कबीर हरि रस यौं पिया, बाकी रही न थाकि।
पाका कलंस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कुम्हार के घड़े के सम्बन्ध में कबीर के क्या विचार हैं?
(iv) कबीर के मन की सारी तृष्णा क्यों समाप्त हो गयी है?
(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

(च) हेरत हेरत हे सखी, रह्या कबीर हिराइ।
बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत दोहे का भाव स्पष्ट कीजिए।
(iv) प्रस्तुत दोहे में कबीर ने किसका वर्णन किया है?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(छ) कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै हाथि करि, सो पैठे घर माहिं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत साखी का भाव स्पष्ट कीजिए।
(iv) ईश्वर का प्रेम पाने के लिए साधक को क्या करना चाहिए?
(v) प्रस्तुत दोहे में कौन-सा अलंकार है?

(ज) जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माहिं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) परमात्मा का दर्शन कब होता है?
(iv) ज्ञानरूपी दीपक प्रज्वलित होने पर क्या हुआ?
(v) प्रस्तुत दोहे में किसके दुष्परिणाम पर प्रकाश डाला गया है?

पदावली

(झ) संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उड़ाणीं माया रहै न बाँधी रे।
दुचिते की दोइ थूनीं गिरानीं, मोह बलींडा टूटा।
त्रिस्नां छानि परी घर ऊपरि, कुबुधि का भाँडा फूटा।।
जोग जुगति करि संतौं बाँधी, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाँणी।
आँधी पीछैं जो जल बूठा, प्रेम हरी जन भीनाँ।।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे, उदित भया तम षीनाँ।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद में कबीर ने किसके प्रभाव को दर्शाया है?
(iv) शारीरिक अहंकार नष्ट होने का क्या परिणाम हुआ?
(v) कबीर ने ज्ञान के महत्त्व को किस प्रकार प्रतिपादित किया है?

(ञ) काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी,
तेरे ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निवास।
ना तलि तपति ना ऊपरि आगि, तोर हेतु कहु कासनि लागि।
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नहीं मूए हमारे जान।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) कबीर ने जीवात्मा की तुलना किससे की है?
(iv) कबीर जीवात्मा को क्या कहते हैं?
(v) प्रस्तुत पद में कौन-सा अलंकार है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) काहे री नलनीं तू कुम्हिलानी, तेरे ही नालि सरोवर पानी।
(ख) पूरा किया बिसाहुँणा, बहुरि न आवौं हट्ट।

(ग) पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
(घ) हम न मरैं मरिहै संसारा, हम कूँ मिल्या जियावनहारा।
(ङ) पाका कलस कुम्हार का, बहुरि न चढ़ई चाकि।
(च) बूँद समानी समद मैं, सो कत हेरी जाइ।
(छ) कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
(ज) जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
(झ) 'नैनू रमइया रमि रह्या, दूजा कहाँ समाइ'।

2. "कबीर को बाह्याडम्बर से चिढ़ थी।" इस कथन की सोदाहरण पुष्टि कीजिए।
3. कबीर का जीवन-परिचय देते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
4. कबीर का जीवन-परिचय लिखिए।
5. कबीर की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
6. कबीर का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
7. "कबीर एक महान् समाज-सुधारक कवि थे।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

अथवा "कबीर भक्त और कवि बाद में थे, समाज सुधारक पहले" कथन की समीक्षा कीजिए।

8. "कबीर की रचनाओं का महत्त्व उनमें निहित सन्देश से है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
9. रहस्यवाद का क्या अर्थ है? कबीर के रहस्यवाद पर प्रकाश डालिए।
10. "कबीर का काव्य सृजन आज भी प्रासंगिक है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
11. गुरु के स्वरूप और महत्त्व पर कबीरदास के विचार स्पष्ट कीजिए।
12. कबीर का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. कबीर की भाषा का विवेचन कीजिए।
2. 'हेरत हेरत हे सखी' साखी का भाव स्पष्ट कीजिए।
3. 'हिन्दी साहित्य में कबीरदास का स्थान' विषय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. "कबीर की रचनाओं का महत्त्व उसमें अन्तर्निहित सन्देश के कारण हैं।" सोदाहरण उत्तर दीजिए।
5. कबीर की भक्ति के स्वरूप का निर्धारण कीजिए।
6. साखी से क्या अभिप्राय है? कबीर के दोहों को साखी कहने का क्या औचित्य है?

अथवा 'साखी' का क्या अभिप्राय है? कबीर की साखियों में किन प्रमुख विचारों को प्रतिपादित किया गया है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

7. 'काहे री नलनीं तूँ कुम्हिलानी....' इस पद का भाव स्पष्ट कीजिए।
8. गुरु के स्वरूप और महत्त्व पर कबीर के विचार स्पष्ट कीजिए।
9. 'रहस्यवाद' का क्या अर्थ है? कबीर के रहस्यवाद का एक उदाहरण दीजिए।

काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में प्रयुक्त अलंकार एवं उनके लक्षण स्पष्ट कीजिए—
   (क) सतगुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपगार।
   (ख) संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
2. 'हम न मरैं मरिहैं संसारा' पद में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए।

●●●

2 मलिक मुहम्मद जायसी

कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—सन् 1492 ई0।
- **जन्म-स्थान**—जायसनगर, रायबरेली (उ०प्र०)।
- **पिता का नाम**—शेख ममरेज।
- **प्रमुख काव्य-ग्रन्थ**—पद्मावत अखरावट, आखिरी कलाम।
- **भाषा**—अवधी।
- **शैली**—प्रबन्ध।
- **शिक्षा**—साधु-सन्तों की संगति में वेदान्त, ज्योतिष, दर्शन, रसायन तथा हठयोग का पर्याप्त ज्ञान।
- **उपलब्धि**—हिन्दी सूफी काव्य परंपरा के प्रवर्तक।
- **मृत्यु**—सन् 1542 ई0।
- **साहित्य में स्थान**—जायसी सूफी काव्य परंपरा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इन्होंने अपने काव्य में प्रबन्ध शैली का प्रयोग किया है।

"भक्तिकालीन धारा की प्रेममार्गी शाखा के अग्रगण्य तथा प्रतिनिधि कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने मुसलमान होकर भी हिन्दुओं की कहानियाँ हिन्दुओं की ही बोली में पूरी सहृदयता से कहकर उनके जीवन में मर्मस्पर्शिनी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का पूर्ण सामञ्जस्य दिखा दिया। कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता का आभास दिया था। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता बनी थी, वह जायसी के द्वारा पूर्ण हुई।"

जायसी के जन्म के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। इनकी रचनाओं से जो मत उभरकर सामने आता है, उसके अनुसार जायसी का जन्म सन् 1492 ई0 के लगभग रायबरेली जिले के 'जायस' नामक स्थान में हुआ था। ये स्वयं कहते हैं—**'जायस नगर मोर अस्थानू।'** जायस के निवासी होने के कारण ही ये जायसी कहलाये। 'मलिक' जायसी को वंश-परम्परा से प्राप्त उपाधि थी और इनका नाम केवल मुहम्मद था। इस प्रकार इनका प्रचलित नाम मलिक मुहम्मद जायसी बना। बाल्यकाल में ही जायसी के माता-पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण शिक्षा का कोई उचित प्रबन्ध न हो सका। सात वर्ष की आयु में ही चेचक से इनका एक कान और एक आँख नष्ट हो गयी थी। ये काले और कुरूप तो थे ही, एक बार बादशाह शेरशाह इन्हें देखकर हँसने लगे। तब जायसी ने कहा—**'मोहिका हँसेसि, कि कोहरहिं?'** इस बार बादशाह बहुत लज्जित हुए। जायसी एक गृहस्थ के रूप में भी रहे। इनका विवाह भी हुआ था तथा पुत्र भी थे। परन्तु पुत्रों की असामयिक मृत्यु से इनके हृदय में वैराग्य का जन्म हुआ। इनके चार घनिष्ठ मित्र थे—यूसुफ मलिक, सालार कादिम, सलोने मियाँ और बड़े शेख। बाद में जायसी अमेठी में रहने लगे थे और वहीं सन् 1542 ई0 में इनकी मृत्यु हुई थी। कहा जाता है कि जायसी के आशीर्वाद से अमेठी नरेश के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ। तबसे

उनका अमेठी के राजवंश में बड़ा सम्मान था। प्रचलित है कि जीवन के अन्तिम दिनों में ये अमेठी से कुछ दूर मँगरा नाम के वन में साधना किया करते थे। वहीं किसी के द्वारा शेर की आवाज के धोखे में इन्हें गोली मार देने से इनका देहान्त हो गया था।

'पद्मावत', 'अखरावट', 'आखिरी कलाम', 'चित्ररेखा' आदि जायसी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इनमें 'पद्मावत' सर्वोत्कृष्ट है और वही जायसी की अक्षय कीर्ति का आधार है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार इस ग्रन्थ का प्रारम्भ 1520 ई0 में हुआ था और समाप्ति 1540 ई0 में। जायसी ने **'पद्मावत'** में चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की प्रेमकथा का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया है। एक ओर इतिहास और कल्पना के सुन्दर संयोग से यह एक उत्कृष्ट प्रेम-गाथा है और दूसरी ओर इसमें आध्यात्मिक प्रेम की भी अत्यन्त भावमयी अभिव्यंजना है। **अखरावट** में वर्णमाला के एक-एक अक्षर को लेकर दर्शन एवं सिद्धान्त सम्बन्धी बातें चौपाइयों में कही गयी हैं। इसमें ईश्वर, जीव, सृष्टि आदि से सम्बन्धित वर्णन हैं। **आखिरी कलाम** में मृत्यु के बाद प्राणी की दशा का वर्णन है। **चित्ररेखा** में चन्द्रपुर की राजकुमारी चित्ररेखा तथा कन्नौज के राजकुमार प्रीतम कुँवर के प्रेम की गाथा वर्णित है।

जायसी का विरह-वर्णन अत्यन्त विशद एवं मर्मस्पर्शी है। 'षड्ऋतु वर्णन' और 'बारहमासा' जायसी के संयोग एवं विरह वर्णन के अत्यन्त मार्मिक स्थल हैं। जायसी रहस्यवादी कवि हैं और इनके रहस्यवाद की सबसे बड़ी विशेषता उसकी प्रेममूलक भावना है। इन्होंने ईश्वर और जीव के पारस्परिक प्रेम की व्यंजना दाम्पत्य-भाव के रूप में की है। रत्नसेन जीव है तथा पद्मावती परमात्मा। यह सूफी पद्धति है। 'पद्मावत' में पुरुष (रत्नसेन) प्रियतमा (पद्मावती) की खोज में निकलता है। जायसी ने इस प्रेम की अनुभूति की व्यंजना रूपक के आवरण में की है। इन्होंने साधनात्मक रहस्यवाद का चित्रण भी किया है, जिसकी प्रधानता कबीर में दिखायी देती है। जायसी ने सम्पूर्ण प्रकृति में पद्मावती के सौन्दर्य को देखा है तथा प्रकृति की प्रत्येक वस्तु को उस परम सौन्दर्य की प्राप्ति के लिए आतुर और प्रयत्नशील दिखाया है। यह प्रकृति का रहस्यवाद कहलाता है। जायसी की भाँति कबीर में हमें यह भावात्मक प्रकृतिमूलक रहस्यवाद देखने को नहीं मिलता।

जायसी का भाव-पक्ष बहुत समृद्ध है, परन्तु इनका कला-पक्ष और भी अधिक श्रेष्ठ है। कला-पक्ष के अन्तर्गत भाषा, अलङ्कार, छन्द आदि का महत्त्व है। इनकी भाषा अवधी है। उसमें बोलचाल की लोकभाषा का उत्कृष्ट भावाभिव्यंजक रूप देखा जा सकता है। लोकोक्तियों के प्रयोग से उसमें प्राणप्रतिष्ठा हुई है। अलङ्कारों का प्रयोग अत्यन्त स्वाभाविक है। केवल चमत्कारपूर्ण कथन की प्रवृत्ति जायसी में नहीं है। मसनवी शैली में लिखे 'पद्मावत' में प्रबन्ध काव्योचित सौष्ठव विद्यमान है। दोहा और चौपाई जायसी के प्रधान छन्द हैं। 'पद्मावत' की भाषा की प्रशंसा करते हुए **डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल** ने कहा था—*"जायसी की अवधी भाषाशास्त्रियों के लिए स्वर्ग है, जहाँ उनकी रुचि की अपरिमित सामग्री सुरक्षित है। मैथिली के लिए जो स्थान विद्यापति का है। मराठी के लिए जो महत्त्व ज्ञानेश्वरी का है, वही महत्त्व अवधी के लिए जायसी की भाषा का है।"*

●●●

नागमती-वियोग-वर्णन

[प्रस्तुत वर्णन 'पद्मावत' से अवतरित है। सिंहल के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती का एक पालित शुक किसी कारणवश महल से निकला और बहेलिए द्वारा पकड़ा जाकर चित्तौड़ के एक ब्राह्मण द्वारा क्रय किया गया। ब्राह्मण ने एक लाख लेकर उसे चित्तौड़ नरेश रत्नसेन के हाथ बेंच दिया। एक दिन उसकी रानी नागमती ने उस वाचाल तोते से अपने रूप के विषय में पूछा, जिस पर उसने पद्मावती की प्रशंसा करते हुए उसकी अपेक्षा रानी का रूप बहुत घट कर बतला दिया। रानी ने तोते को मार डालने का आदेश एक धाय को दिया। राजा के भय से धाय ने तोते को छिपा दिया। राजा लौटने पर तोते को न पाकर अत्यन्त क्रोधित हुए। अन्त में वह हीरामन नाम का तोता उपस्थित किया गया। राजा ने उससे सम्पूर्ण घटना सुनी। पद्मावती का रूपवर्णन सुनते ही राजा सोलह हजार कुँवर जोगियों के साथ पद्मावती को प्राप्त करने के लिए जोगी का वेश बनाकर निकल पड़े। राजा की अनुपस्थिति में रानी नागमती के वियोग-दुःख में संतप्त होने का वर्णन जायसी जी ने निम्न प्रकार से किया है।]

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा।।
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।
भयउ नरायन बाबन करा। राज करत राजा बलि छरा।।
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।
मानत भोग गोपिचन्द भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?

सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।।1।।

पिउ बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'।।
अधिक काम दाधै सो रामा। हरि लेइ सुवा गएउ पिउ नामा।।
बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज, भींजि गइ चोली।।
सूखा हिया, हार भा भारी। हरे हरे प्रान तजहिं सब नारी।।
खन एक आव पेट महँ! साँसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा।।
पवन डोलावहिं, सीचहिं चोला। पहर एक समुझहिं मुख बोला।।
प्रान पयान होत को राखा? को सुनाव पीतम कै भाखा?

आहि जो मारै बिरह कै, आगि उठै तेहि लागि।
हंस जो रहा सरीर महँ, पाँख जरा, गा भागि॥2।

पाट महादेइ ! हिये न हारू। समुझि जीउ, चित चेतु सँभारू।।
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा।।
पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास, बाँधु मन थीती।।
धरतिहि जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरषा ऋतु मेहा।।
पुनि बसंत ऋतु आव नवेली। सो रस, सो मधुकर, सो बेली।।
जिन अस जीव करसि तू बारी। यह तरिवर पुनि उठिहि सँवारी।।
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोइ सरवर, सोई हंसा।।

मिलहिं जो बिछुरे साजन, अंकम भेंटि गहंत।
तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत॥3॥

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग पाँति देखाए।।
खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई?

जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब॥4॥

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी।।
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा।।
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी।।
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला। हरियरि भूमि कुसुंभी चोला।।
हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह भुलाइ देइ झकझोरा।।
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर भा, फिरै भँभीरी।।
जग जल बूड़ जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी।।

परबत समुद अगम बिच, बीहड़ घन बनढाँख।
किमि कै भेंटों कन्त तुम्ह? ना मोहि पाँव न पाँख॥5॥

भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भरौं रैनि अँधियारी।।
मन्दिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा।।
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी।।
चमक बीजु घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।

बरसै मघा झकोरि झकोरी। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी।।
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ।।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।

थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक।
धनि जोबन अवगाह महँ, दे बूड़त, पिउ! टेक॥6॥

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहुँ आउ, कंत! तन लटा।।
तोहि देखे पिउ! पलुहै कया। उतरा चीतु बहुरि करु मया।।
चित्रा मित्र मीन घर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा।।
उआ अगस्त, हस्ति घन गाजा। तुरय पलानि चढ़े रन राजा।।
स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खँजन देखाए।।
भा परगास, बाँस बन फूले। कंत न फिरे बिदेसहिं भूले।।

बिरह हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।
बेगि आइ, पिउ! बाजहु, गाजहु होइ सदूर॥7॥

कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा।।
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।
अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी।।
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा।। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।

सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि॥8॥

अगहन दिवस घटा, निसि बाढ़ी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढ़ी?
अब यहि बिरह दिवस भा राती। जरौं बिरह जस दीपक बाती।।
काँपै हिया जनावै सीऊ। तो पै जाइ होइ सँग पीऊ।।
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप रँग लेइगा नाहू।।
पलटि न बहुरा गा जो बिछोई। अबहूँ फिरै, फिरै रँग सोई।।
सियरि अगिनि बिरहिन हिय जारा। सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा।।
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करै भसमंतू।।

पिउ सौ कहेउ सँदेसड़ा, हे भौंरा! हे काग!
सो धनि बिरहै जरि मुई, तेहि क धुवाँ हम्ह लाग॥9॥

पूस जाड़ थर थर तन काँपा। सुरुजु जाइ लंका दिसि चाँपा।।
बिरह बाढ़, दारुन भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ।।
कंत कहाँ लागौं ओहि हियरे। पथ अपार, सूझ नहिं नियरे।।
सौंर सपेती आवै जूड़ी। जानहु सेज हिवंचल बूड़ी।।
चकई निसि बिछुरै दिन मिला। हौं दिन राति बिरह कोकिला।।
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी। कैसे जियै बिछोही पखी।।
बिरह सचान भएउ तन जाड़ा। जियत खाइ औ मुए न छाँड़ा।।

रकत ढुरा माँसू गरा, हाड़ भएउ सब संख।
धनि सारस होइ ररि मुई, पीऊ समेटहि पंख।।10।।

लागेउ माघ, परै अब पाला। बिरहा काल भएउ जड़काला।।
पहल पहल तन रूई झाँपै। हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै।।
आइ सूर होइ तपु, रे नाहा। तोहि बिनु जाड़ न छूटै माहा।।
एहि माह उपजै रसमूलू। तू सो भौंर, मोर जोबन फूलू।।
नैन चुवहिं जस महवट नीरू। तोहि बिनु अंग लाग सर चीरू।।
टप टप बूँद परहिं जस ओला। बिरह पवन होइ मारै झोला।।
केहि क सिंगार को पहिरु पटोरा। गीउ न हार, रही होइ डोरा।।

तुम बिनु काँपै धनि हिया, तन तिनउर भा डोल।
तेहि पर बिरह जराइ कै, चहै उड़ावा झोल।।11।।

फागुन पवन झकोरा बहा। चौगुन सीउ जाइ नहिं सहा।।
तन जस पियर पात भा मोरा। तेहि पर बिरह देइ झकझोरा।।
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा। भइ ओनंत फूलि फरि साखा।।
करहिं बनसपति हिये हुलासू। मो कहँ भा जग दून उदासू।।
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्ह जस होरी।।
जो पै पीउ जरत अस पावा। जरत मरत मोहि रोष न आवा।।
राति दिवस सब यह जिउ मोरे। लगौं निहोर कंत अब तोरे।।

यह तन जारौं छार कै, कहौं कि 'पवन! उडाव'।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरैं जहँ पाव।।12।।

चैत बसंता होइ धमारी। मोहि लेखे संसार उजारी।।
पंचम बिरह पंच सर मारै। रकत रोइ सगरौं बन ढारैं।।
बूड़ि उठे सब तरिवर पाता। भीजि मजीठ, टेसु बन राता।।
बौंरे आम फरै अब लागे। अबहूँ आउ घर, कंत सभागे।।
सहस भाव फूलीं बनसपती। मधुकर घूमहिं सँवरि मालती।।

मो कहँ फूल भए सब काँटे। दिस्टि परत जस लागहिं चाँटे।।
फरि जोबन भए नारँग साखा। सुआ बिरह अब जाइ न राखा।।

घिरिनि परेवा होइ पिउ! आउ बेगि परु टूटि।
नारि पराए हाथ है, तोहि बिनु पाव न छूटि।।13।।

भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चँदन भा आगी।।
सूरुज जरत हिवंचल ताका। बिरह बजागि सौंह रथ हाँका।।
जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ अंगारन्ह माहाँ।।
तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फलवारी।।
लागिउँ जरै, जरै जस भारू। फिर फिर भूँजेसि, तजेउँ न बारू।।
सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइ कै बिहराई।।
बिहरत हिया करहु, पिउ! टेका। दीठि दवँगरा मेरवहु एका।।

कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयउ सुखाइ।
कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सींचैं आइ।।14।।

जेठ जरै जग, चलै लुवारा। उठहिं बवंडर परहिं अँगारा।।
बिरह गाजि हनुवँत होई जागा। लंका-दाह करै तनु लागा।।
चारिहु पवन झकौरै आगी। लंका दाहि पलंका लागी।।
दहि भइ साम नदी कालिंदी। बिरह क आगि कठिन अति मंदी।।
उठै आगि और आवै आँधी। नैन न सूझ, मरौ दुख बाँधी।।
अधजर भइउँ, माँसु तनु सूखा। लागेउ बिरह काल होइ भूखा।।
माँसु खाइ सब हाड़न्ह लागै। अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै।।

गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रवि, सहि न सकहिं वह आगि।
मुहमद सती सराहिये, जरै जो अस पिउ लागि।।15।।

तपै लागि अब जेठ असाढ़ी। मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी।।
तन तिनउर भा, झूरौं खरी। भइ बरखा, दुख आगरि जरी।।
बँध नाहिं औ कंध न कोई। बात न आव कहौं का रोई?
साँठि नाठि जग बात को पूछा? बिनु जिउ फिरै मूँज तनु छूँछा।।
भई दुहेली टेक बिहूनी। थाँभ नाहिं उठि सकै न थूनी।।
बरसै मेघ चुवहिं नैनाहा। छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा।।
कोरौं कहाँ ठाट नव साजा? तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा।।

अबहूँ मया दिस्टि करि, नाह निठुर! घर आउ।
मँदिर उजार होत है, नव कै आइ बसाउ।। 16।।

('पद्मावत' से)

अभ्यास प्रश्न

पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों का उत्तर लिखिए—

(क)

नागमती चितउर पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा।।
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोर पिउ मोसौं हरा।।
सुआ काल होइ लेइगा पीऊ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ।।
भयउ नरायन बावन करा। राज करत राजा बलि छरा।।
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू।।
मानत भोग गोपिचन्द भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी।।
लै कान्हहि भा अकरूर अलोपी। कठिन बिछोह, जियहिं किमि गोपी?
सारस जोरी कौन हरि, मारि बियाधा लीन्ह?
झुरि झुरि पींजर हौं भई, बिरह काल मोहि दीन्ह।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चौपाई में प्रयुक्त तोते का नाम क्या है?
(iv) विप्र रूप धरि झिलमिल इंदू' के माध्यम से किस पौराणिक आख्यान का वर्णन है?
(v) रानी नागमती किसका रास्ता देख रही है?

(ख)

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा।।
धूम साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग पाँति देखाए।।
खड़क बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।।
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत! उबारु मदन हौं घेरी।।
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?
अद्रा लाग लागि भुइँ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई।।
जिन्ह घर कंता ते सुखी, जिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्ब।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) विरह ने युद्ध के लिए किस प्रकार सेना सजा ली है?
(iv) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में किन-किन नक्षत्रों का प्रयोग हुआ है?
(v) नागमती ने अपना सब सुख क्यों भुला दिया है?

(ग) भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भरौं रैनि अँधियारी।।
मन्दिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा।।
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी।।
चमक बीजु घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा।।
बरसै मघा झकोरि झकोरी। मोर दुइ नैन चुवैं जस ओरी।।
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सीचेन्हि नाहाँ।।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी।।
थल जल भरे अपूर सब, धरति गगन मिलि एक।
धनि जोबन अवगाह महँ, दे बूड़त पिउ! टेक।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) धरती और आकाश मिलकर एक से क्यों दिखाई दे रहे हैं?
(iv) भादों की रात बिताना नागमती के लिए कष्टकर क्यों है ?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में मदार और जवास का उल्लेख किस परिप्रेक्ष्य में हुआ है?

(घ) कातिक सरद चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी।।
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरैं सब धरति अकासा।।
तन मन सेज जरै अगिदाहू। सब कहँ चंद, भएउ मोहि राहू।।
चहुँ खंड लागै अँधियारा। जौं घर नाहीं कंत पियारा।।
अबहूँ, निठुर! आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा।।
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी।।
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति दुख दूजा।।
सखि मानैं तिउहार सब, गाइ देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु, रही छार सिर मेलि।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चन्द्रमा कितनी कलाओं से प्रकाशित होता है?
(iv) नागमती को कौन-कौन-सा दुःख है?
(v) नागमती की सखियाँ क्या-क्या कर रही हैं?

(ङ) भा बैसाख तपनि अति लागी। चोआ चीर चँदन भा आगी।।
सूरुज जरत हिवंचल ताका। बिरह बजागि सौंह रथ हाँका।।
जरत बजागिनि करु, पिउ छाहाँ। आइ बुझाउ अंगारन्ह माहाँ।।
तोहि दरसन होइ सीतल नारी। आइ आगि तें करु फलवारी।।
लागिउँ जरै, जरै जस भारू। फिर फिर भूँजेसि, तजेउँ न बारू।।
सरवर हिया घटत निति जाई। टूक टूक होइ कै बिहराई।।
बिहरत हिया करहु, पिउ! टेका। दीठि दवँगरा मेरवहु एका।।
कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयउ सुखाइ।
कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिउ सींचैं आइ।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) बैसाख महीने का चोआ और चन्दन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?
(iv) पद्यांश के अनुसार बेल हरी-भरी कब होगी?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) जिन्ह घर कंता ते सुखी, तिन्ह गारौ औ गर्ब।
(ख) नागमती चितउर पथ हेरा, पिउ जो गये पुनि कीन्ह न फेरा।
(ग) कबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जो पिउ सींचै आइ।
(घ) कन्त पियारा बाहिरै, हम सुख मूला सर्व।
(ङ) तपनि मृगसिरा जे सहैं, ते अद्रा पलुहंत।
(च) बिरह क आगि कठिन अति मंदी।
2. मलिक मुहम्मद जायसी की काव्यगत विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।
अथवा जायसी के काव्य-सौष्ठव पर प्रकाश डालिए।
3. जायसी का जीवन-परिचय लिखिए।
4. जायसी के काव्य में रहस्यवादी प्रवृत्तियों का निरूपण कीजिए।
5. "जायसी का विरह-वर्णन अत्यन्त विशद एवं मर्मस्पर्शी है।" उदाहरण देकर समझाइए।
6. मलिक मोहम्मद जायसी के साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जायसी की प्रमुख रचनाओं के नाम लिखिए।
2. "प्रकृति के बदलते हुए स्वरूप के साथ नागमती की विरह-व्यंजना का स्वरूप भी बदलता रहा है।" इस कथन की समीचीन व्याख्या कीजिए।
3. नागमती के विरह-वर्णन की मर्मस्पर्शिता का क्या रहस्य है? स्पष्ट कीजिए।
4. "जायसी ने नागमती की विरह व्यंजना को महारानी की नहीं, सामान्य नारी की विरह व्यंजना के रूप में प्रस्तुत किया है।" इस कथन की उपयुक्तता प्रमाणित कीजिए।
5. नागमती के विरह वर्णन को केन्द्र में रखते हुए उसके चरित्र पर प्रकाश डालिए।
6. किस मास अथवा ऋतु का बिम्ब आपको सबसे अधिक मर्मस्पर्शी लगता है और क्यों?
7. जायसी ने अपनी कृतियों में किस भाषा का प्रयोग किया है?
8. नागमती के विरह-वर्णन की मुख्य विशेषताएँ लिखिए।
अथवा 'नागमती-वियोग-वर्णन' की विशेषताओं का सोदाहरण निरूपण कीजिए।
9. जायसी का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—
(क) दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ।।
(ख) स्वाति बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे।।
2. रूपक अलंकार का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक उदाहरण लिखिए।

●●●

3 सूरदास

कृष्ण-भक्ति शाखा के कवियों में अष्टछाप के कवि ही प्रधान हैं और उनमें भी श्रेष्ठतम कवि हिन्दी साहित्य के सूर्य सूरदास जी हैं। हिन्दी साहित्य के अन्य कवियों की भाँति सूर की जन्मतिथि भी सन्दिग्ध है। सूर का जीवन-वृत्त अभी तक शोध का कार्य बना हुआ है। अनेक साक्ष्यों के अवलोकन के उपरान्त सूरदास का जन्म सं0 1535 वि0 (सन् 1478 ई0) में बैसाख शुक्ल पक्ष पंचमी गुरुवार को मानना उपयुक्त जान पड़ता है। कुछ विद्वान् सूर का जन्म-स्थान सीही मानते हैं, तो बहुतेरे रुनकता। 'आईने अकबरी' के आधार पर इनके पिता का नाम रामदास था। इनके जन्म एवं स्थान आदि को पद्य में एक साथ इस प्रकार समेटा जा सकता है—

रामदास सुत सूरदास ने, जन्म रुनकता में पाया।
गुरु वल्लभ उपदेश ग्रहण कर, कृष्णभक्ति सागर लहराया।।

कहा जाता है कि सूर जन्मान्ध थे। **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** ने भी इन्हें जन्मान्ध बताया है—*"वह इस असार संसार को न देखने के वास्ते आँखें बन्द किये थे।"* भगवद्-भक्ति की इच्छा से सूर अपने पिता की अनुमति प्राप्त कर यमुना के तट गऊघाट पर रहने लगे। वृन्दावन की तीर्थयात्रा पर जाते हुए इनकी भेंट महाप्रभु वल्लभाचार्य से हुई, जिनसे सूरदास ने दीक्षा ली। महाप्रभु इन्हें अपने साथ ले गये और गोवर्धन पर स्थापित मन्दिर में अपने आराध्य श्रीनाथजी की सेवा में कीर्त्तन करने को नियुक्त किया। सूर नित्य नया पद बनाकर और इकतारे पर गाकर भगवान् की स्तुति करते थे। कहा जाता है कि इन्होंने सवा लाख पद रचे, जिनमें से लगभग दस सहस्र ही अब तक उपलब्ध हो सके हैं, परन्तु यह संख्या भी इन्हें हिन्दी का श्रेष्ठ महाकवि सिद्ध करने में पर्याप्त है। सूरदास जी को अपने अन्तिम समय का आभास हो गया था। एक दिन ये श्रीनाथ जी के मन्दिर में आरती करके पारसौली चले गये और वहीं पर सं0 1640 वि0 (सन् 1583 ई0) में इनकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी।

कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत् 1535 वि0 (सन् 1478 ई0)।
- **जन्म-स्थान**—रुनकता अथवा सीही।
- **पिता का नाम**—पण्डित रामदास सारस्वत।
- **गुरु**—आचार्य वल्लभाचार्य।
- **भक्ति**—कृष्णभक्ति।
- **ब्रह्म का रूप**—सगुण।
- **निवास स्थान**—श्रीनाथ मंदिर।
- **प्रमुख रस**—शृंगार एवं वात्सल्य।
- **प्रमुख रचनाएँ**—सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी।
- **मृत्यु**—संवत् 1640 वि0 (सन् 1583 ई0)।
- **साहित्य में स्थान**—वात्सल्य रस के सम्राट।

सूरदास के पदों का संग्रह **'सूरसागर'** है। **'साहित्यलहरी'** इनका दूसरा प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ है। सूरदास द्वारा रचित **'सूर सारावली', 'गोवर्धन लीला', 'नाग लीला', 'पद संग्रह', 'सूर पच्चीसी'** आदि ग्रन्थ भी प्रकाश में आये हैं। परन्तु 'सूरसागर' से ही ये जगत्-विख्यात हुए हैं। 'सूरसागर' के वर्ण्य-विषय का आधार 'श्रीमद्भागवत' है। फिर भी इनके साहित्य में अपनी मौलिक उद्भावनाएँ हैं। सूर ने भागवत के कथा-चित्रों में न केवल सरसता तथा मधुरता का संचार किया है, अपितु अनेक नवीन प्रकरणों का सृजन भी किया है। राधा-कृष्ण के प्रेम को लेकर सूर ने जो रस का समुद्र उमड़ाया है, इसी से इनकी रचना का नाम सूरसागर सार्थक होता है।

शृंगार के ये अप्रतिम कवि हैं। इनके अतिरिक्त किसी अन्य कवि ने शृंगार के दोनों विभागों–संयोग एवं विप्रलम्भ का इतना उत्कृष्ट वर्णन नहीं किया। इनका बाल-वर्णन बाल्यावस्था की चित्ताकर्षक झाँकियाँ प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के पदों में उल्लास, उत्कण्ठा, चिन्ता, ईर्ष्या आदि भावों की जो अभिव्यक्ति हुई है वह बड़ी स्वाभाविक, मनोवैज्ञानिक तथा हृदयग्राही है। भ्रमर-गीत सूरदास की अनूठी-कल्पना है। इसमें इन्होंने ज्ञान और योग के आडम्बर को दूर कर प्रेम और भक्ति के महत्त्व को प्रकाशित किया है।

ब्रजभाषा सूर के हाथों से जिस सौष्ठव के साथ ढली है, वैसा सौन्दर्य उसे बिरले ही कवि दे सके। सूर वात्सल्य रस के सम्राट् माने जाते हैं। जन्म से लेकर किशोरावस्था तक कृष्ण का चरित्र-चित्रण तो 'स्वर्ग को भी ईर्ष्यालु' बनाने की क्षमता रखता है। बाललीलाओं, गोचारण, वन से प्रत्यागमन, माखन-चोरी आदि का अत्यन्त मनोहारी चित्रण सूर के पदों में प्राप्त होता है। विरह-सागर इनके पदों में इस प्रकार उमड़ पड़ा है कि ज्ञान उस अतल में लापता हो गया है। इनके काव्य में उपमा, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, व्यतिरेक, रूपक, दृष्टान्त आदि अलंकारों का प्रचुर प्रयोग हुआ है।

महाप्रभु वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ ने चार शिष्य अपने पिता के और चार अपने शिष्यों को मिलाकर आठ बड़े भक्त–कवियों का 'अष्टछाप' बनाया था। सूर उन कवियों में अग्रगण्य हैं। वास्तव में कृष्ण-भक्त कवियों में सूर की रचना श्रीमद्भागवत जैसा सम्मानित स्थान पाती रहेगी। शब्दों द्वारा अपने चरित्र-नायक की माधुर्यमयी मूर्ति को पाठकों के नयनों के सम्मुख उपस्थित करने में सूर की सफलता अद्वितीय है। सूर ने तत्कालीन परिस्थितियों से खिन्न समाज का मन भगवान् की हँसती-खेलती, लोकरंजक मूर्ति दिखाकर बहलाया और इस प्रकार आगे चलकर भगवान् के लोकरक्षक स्वरूप की प्रतिष्ठा हेतु बड़ी ही अच्छी पृष्ठभूमि उपस्थित की। सूर भक्त कवि थे और इनकी भक्ति सखा-भाव की थी। इन्होंने अपने इष्टदेव के परम रमणीय रूप तथा लीला के वर्णन में जो कुछ कहा है उसकी स्वाभाविकता, सरलता, तल्लीनता आदि इतनी बढ़ी-चढ़ी है कि हिन्दी साहित्य में इस विषय में कोई भी कवि इनके समकक्ष नहीं है।

●●●

विनय

अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान।।1।।

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।।
जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।2।।

वात्सल्य

हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि।
रहे बिवरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि डरनि।
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि।
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फर्‌यौ अद्‌भुत फरनि।
चलत पद-प्रतिबिम्ब मनि आँगन घुटुरुवनि करनि।
जलज-संपुट-सुभग-छबि भरि लेति उर जनु धरनि।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं बिलोकि कै नँद-घरनि।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि।।3।।

भ्रमर गीत

[भ्रमरगीत के गोपी और उद्धव संवाद में वाग्विदग्धता का विकसित रूप दिखायी देता है। ज्ञान-गरिमा में मण्डित उद्धव को श्रीकृष्ण गोकुल इसलिए भेजते हैं कि वे गोपियों को निराकार की ओर उन्मुख कर सकें। प्रस्तुत अंश के अन्तर्गत गोपियों के प्रत्युत्तरों में वाग्विदग्धता कूट-कूट कर भरी है। सच पूछिए तो वाग्विदग्धता का नाम यही है कि सामने वाले व्यक्ति को ऐसा खरा और चुभता हुआ उत्तर दिया जाय कि उसकी बोलती बन्द हो जाय। साधारण रूप में इसे हम व्यंग्य का बड़ा भाई कह सकते हैं, जो असाधारण लोगों को ही प्राप्त होता है।]

ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हँस-सुता की सुन्दर कगरी, अरु कुञ्जनि की छाँहीं।
वै सुरभी वै बच्छ दोहिनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल-बाल मिलि करत कुलाहल, नाचत गहि गहि बाहीं।
यह मथुरा कंचन की नगरी, मनि-मुक्ताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तन नाहीं।
अनगन भाँति करी बहु लीला, जसुदा नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै, यह कहि-कहि पछिताहीं।।4।।

बिनु गुपाल बैरिनि भईं कुंजैं।
तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजैं।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं।।5।।

हमारैं हरि हारिल की लकरी।
मनक्रम बचन नंद-नंदन उर, यह दृढ़ करि पकरी।
जागत-सोवत स्वप्न दिवस-निसि, कान्ह-कान्ह जकरी।
सुनत जोग लागत है ऐसौ, ज्यौं करुई ककरी।
सु तौ ब्याधि हमकौं लै आए, देखी सुनी न करी।
यह तौ सूर तिनहिं लै सौंपौ, जिनके मन चकरी।।6।।

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं।
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं।
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं।
स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं।
चंदन तजि अँग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं।।7।।

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटत?
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अन्तरगति लूटत।।
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तैं आवनि।।
चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं बिष सम लागत।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत।।8।।

कहत कत परदेसी की बात।
मंदिर अरध अवधि बदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।
ससि-रिपु बरष, सूर-रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।
मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
नखत, वेद, ग्रह, जोरि, अर्ध करि, सोइ बनत अब खात।
सूरदास बस भईं बिरह के, कर मींजैं पछितात।।9।।

निसि दिन बरषत नैन हमारे।
सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।
सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।।10।।

ऊधौ भली भई ब्रज आए।
बिधि कुलाल कीन्हे काँचे घट ते तुम आनि पकाए।
रँग दीन्हौं हो कान्ह साँवरैं, अँग-अँग चित्र बनाए।
पातैं गरे न नैन नेह तैं, अवधि अटा पर छाए।

ब्रज करि अँवा जोग ईंधन करि, सुरति आनि सुलगाए।
फूँक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए।
भरे सँपूरन सकल प्रेम-जल, छुवन न काहू पाए।
राज काज तैं गए सूर प्रभु, नंद नँदन कर लाए।।11।।

अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।
कैसैं रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।
अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि, अति अकुलानी दूखीं।
बारक वह मुख आनि दिखावहु, दुहि पय पिबत पतूखीं।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।।12।।

('सूरसागर' से)

अभ्यास प्रश्न

पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

विनय

(क) अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) पक्षी क्यों नहीं उड़ पा रहा है?
(iv) पक्षी कहाँ बैठा है?
(v) पक्षी ने ईश्वर से क्या निवेदन किया? अन्त में क्या परिणाम हुआ?

(ख) मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।।
जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।

परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ, क्यों करील-फल भावै।
सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद में कामधेनु के सन्दर्भ में सूरदासजी ने क्या कहा है?
(iv) गंगा और कुआँ के सन्दर्भ में सूरदास के क्या विचार हैं?
(v) सूरदासजी किसकी महिमा का गान छोड़कर अन्य देवी-देवताओं की उपासना नहीं करना चाहते?

भ्रमरगीत

(ग)

बिनु गुपाल बैरिनि भईं कुंजैं।
तब वै लता लगतिं तन सीतल, अब भईं बिषम ज्वाल की पुंजैं।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल-फूलनि अलि गुंजैं।
पवन, पान, घनसार, सजीवन, दधि-सुत किरनि भानु भईं भुंजैं।
यह ऊधौ कहियौ माधौ सौं, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास प्रभु तुम्हारे दरस कौं, मग जोवत अँखियाँ भईं छुंजैं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गोपियाँ उद्धव से क्या संदेशा भिजवा रही हैं?
(iv) श्रीकृष्ण की उपस्थिति में लताएँ कैसी लगती थीं और अब वे कैसी प्रतीत हो रही हैं?
(v) प्रस्तुत पंक्तियों में कौन-सा रस प्रयुक्त हुआ है?

(घ)

ऊधौ जोग जोग हम नाहीं।
अबला सार-ज्ञान कह जानैं, कैसैं ध्यान धराहीं।
तेई मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन माहीं
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैं सुनी न जाहीं।
स्रवन चीरि सिर जटा बधावहु, ये दुख कौन समाहीं।
चंदन तजि अंग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीं।
जोगी भ्रमत जाहि लगि भूले, सो तौ है अप माहीं।
सूर स्याम तैं न्यारी न पल-छिन, ज्यौं घट तैं परछाहीं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) भगवान श्रीकृष्ण के सन्दर्भ में गोपियों की क्या धारणा है?

(iv) योग के विषय में गोपियाँ उद्धव से क्या कहती हैं?
(v) गोपियों के अनुसार शरीर की तपन और अधिक क्यों बढ़ जायेगी?

(ङ)

लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसे छूटत?
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अन्तरगति लूटत।।
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तैं आवनि।।
चरन कमल की सौंह करति हौं, यह सँदेस मोहिं विष सम लागत।
सूरदास पल मोहिं न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) गोपियों का श्रीकृष्ण से प्रेम कितना पुराना है?
(iv) उद्धव द्वारा गोपियों को दिया गया योग संदेश क्यों व्यर्थ है?
(v) प्रस्तुत पद्य पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है?

(च)

कहत कत परदेसी की बात।
मंदिर अरध अवधि बदि हमसौं, हरि अहार चलि जात।
ससि-रिपु बरष, सूर-रिपु जुग बर, हर-रिपु कीन्हौ घात।
मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
नखत, वेद, ग्रह, जोरि, अर्ध करि, सोइ बनत अब खात।
सूरदास बस भईं बिरह के, कर मींजैं पछितात।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) श्रीकृष्ण गोपियों को क्या वचन देकर गये थे और अब कितना समय बीत गया है?
(iv) गोपियों को किस बात पर पछतावा है?
(v) श्रीकृष्ण के वियोग में गोपियों को रात-दिन कैसे मालूम पड़ रहे हैं?

(छ)

निसि दिन बरषत नैन हमारे।
सदा रहति बरषा रितु हम पर, जब तैं स्याम सिधारे।
दृग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे।
सूरदास प्रभु यहै परेखौ, गोकुल काहैं बिसारे।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) किसके विरह में गोपिकाओं की आँखों में रात-दिन बरसात लगी रहती है?
(iv) गोपिकाओं के हाथ और कपोल क्यों काले हो गये हैं?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में कौन-सा अलंकार है?

(ज) अँखियाँ हरि दरसन की भूखीं।
कैसे रहतिं रूप-रस राँची, ये बतियाँ सुनि रूखीं।
अवधि गनत, इकटक मग जोवत, तब इतनौ नहिं झूखीं।
अब यह जोग संदेसौ सुनि-सुनि अति अकुलानी दूखीं।
बारक वह मुख आनि दिखावहु; दुहि पय पिबत पतूखीं।
सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं पाठ का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) श्रीकृष्ण के वियोग में गोपियों का हृदय कैसा हो गया है?
(iv) गोपियों की आँखें किसके लिए व्याकुल हैं?
(v) गोपियाँ उद्धव से क्या निवेदन कर रही हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) सूर सु कत हठि नाव चलावत, ये सरिता हैं सूखीं।
(ख) कहत कत परदेसी की बात।
(ग) ऊधौ भली भई ब्रज आए।
(घ) परम गंग को छाँड़ि पियासौ, दुरमति कूप खनावै।
(ङ) लरिकाई को प्रेम कहौ अलि कैसे छूटत।
(च) जिहि मधुकर अम्बुज रस चाख्यो, क्यों करील-फल भावै।
(छ) सूरदास प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै।
(ज) जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
(झ) हमारैं हरि हारिल की लकरी।
(ञ) मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।
2. सूरदास की काव्यगत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. 'सूर सूर तुलसी ससी' उक्ति से आप कहाँ तक सहमत हैं? तर्कपूर्वक अपना मत प्रस्तुत कीजिए।
4. सूरदास का जीवन-परिचय लिखिए।
5. सूरदास का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।
6. सूरदास की भाषा स्पष्ट करते हुए उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
7. भ्रमरगीत से क्या तात्पर्य है? उक्त शीर्षक के अन्तर्गत दिये हुए पदों का सार लिखिए।

अथवा सूरदास के भ्रमर-गीत की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

8. सिद्ध कीजिए कि सूर वात्सल्य रस के सम्राट् थे।

अथवा सूर का बाल-लीला वर्णन रेखांकित कीजिए।

अथवा "सूरदास अपने काव्य में वात्सल्य भाव का निरूपण करने में सही अर्थों में 'सूर' थे।" सिद्ध कीजिए।

अथवा सूर के वात्सल्य वर्णन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

9. "सूर की भक्ति में निर्गुण पर सगुण की, निराकार पर साकार की, ज्ञान पर प्रेम की विजय दिखायी गयी है।" स्पष्ट कीजिए।

10. "सूरदास शृंगार रस के महान् कवि हैं।" उदाहरण सहित अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

11. "सूरदास वात्सल्य के कवि हैं।' इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

12. सूरदास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों एवं साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सूर की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।
2. कृष्ण-प्रेम में तल्लीन गोपिकाओं के जो शब्द-चित्र सूर ने खींचे हैं, उनका संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. सूर-साहित्य के भाव-पक्ष का चित्रण कीजिए।
4. सूर के भ्रमरगीत का कथ्य समझाइए।

काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. 'बिनु गुपाल बैरिन भईं कुंजैं' पद में कौन-सा रस है? उपस्थित रस का लक्षण भी लिखिए।
2. निम्नलिखित पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

   (क) हमारैं हरि हारिल की लकरी।

   (क) मघ पंचक लै गयौ साँवरौ, तातैं अति अकुलात।

●●●

4 गोस्वामी तुलसीदास

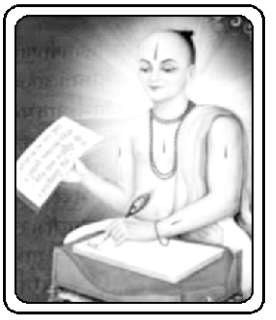

"तुलसी एक ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रतिभा थे, जो युगों के बाद एक बार आया करती है तथा ज्ञान-विज्ञान, भाव-विभाव अनेक तत्त्वों का समाहार होती है। इनकी प्रतिभा इतनी विराट् थी कि उसने भारतीय संस्कृति की सारी विराटता को आत्मसात् कर लिया था। ये महान् द्रष्टा थे, परिणामतः स्रष्टा थे। ये विश्व-कवि थे और हिन्दी साहित्य के आकाश थे, सब कुछ इनके घेरे में था।"

कवि-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—संवत 1554 वि॰ (1497 ई॰)।
- **जन्म-स्थान**—राजापुर (चित्रकूट), उत्तर प्रदेश।
- **बचपन का नाम**—रामबोला।
- **प्रमुख ग्रन्थ**—रामचरितमानस।
- **माता-पिता**—हुलसी एवं आत्माराम दुबे।
- **पत्नी का नाम**—रत्नावली।
- **शिक्षा**—सन्त बाबा नरहरिदास से भक्ति की शिक्षा, वेद-वेदांग, दर्शन, इतिहास, पुराण आदि।
- **भक्ति**—रामभक्ति।
- **उपलब्धि**—लोकमानस कवि।
- **मृत्यु**–संवत 1680 वि॰ (1623 ई॰)।
- **साहित्य में योगदान**—हिन्दी साहित्य में कविता की सर्वतोन्मुखी उन्नति।

गोस्वामी तुलसीदास के जीवन-वृत्त के बारे में अन्तःसाक्ष्य एवं बहिःसाक्ष्य के आधार पर विद्वानों ने विविध मत प्रस्तुत किये हैं। बेनीमाधवदास-प्रणीत 'मूल गोसाईं चरित' तथा महात्मा रघुबरदास-रचित 'तुलसी चरित' में गोस्वामी जी का जन्म-संवत् 1554 दिया हुआ है। बेनीमाधवदास जी की रचना में गोस्वामी जी की जन्मतिथि श्रावण शुक्ला सप्तमी का भी उल्लेख है। इस संवत् के अनुसार इनकी आयु 126-127 वर्ष की ठहरती है। 'शिवसिंह सरोज' में इनका जन्म-संवत् 1583 स्वीकार किया गया है। कुछ विद्वानों ने जनश्रुति के आधार पर इनका जन्म-संवत् 1589 स्वीकार किया है। सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने भी इसी जन्म-संवत् को मान्यता दी है। अन्तःसाक्ष्य के आधार पर भी इनकी जन्मतिथि सं. 1589 (सन् 1532) अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होती है। इसी प्रकार इनके जन्म-स्थान के बारे में भी विद्वानों में भारी मतभेद है। नवप्राप्त आधारों पर सोरों को कुछ लोग इनका जन्म-स्थान प्रमाणित करने का प्रयत्न कर रहे हैं। तुलसीदास ने रामचरितमानस में यह उल्लेख अवश्य किया है–"मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकरखेत। समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत।।" किन्तु, इससे इतना ही परिणाम निकलता है कि सूकरखेत में उन्होंने गुरु से बालपन में रामकथा सुनी। तुलसीदास का जन्म संवत 1554 वि0 को वर्तमान चित्रकूट जिले के अन्तर्गत राजापुर

में मानना उपयुक्त एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे तथा माता का नाम हुलसी था। इनका बचपन का नाम 'तुलाराम' था। इनके जन्म के सम्बन्ध में निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

पन्द्रह सौ चौवन बिसे, कालिन्दी के तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी धर्‌यो शरीर॥

इनका जब जन्म हुआ तब ये पाँच वर्ष के बालक मालूम होते थे, दाँत सब मौजूद थे और जन्मते ही इनके मुख से 'राम' का शब्द निकला। इसीलिए इन्हें रामबोला भी कहा जाता है। आश्चर्यचकित होकर, इन्हें राक्षस समझकर माता-पिता द्वारा त्याग दिये जाने के कारण इनका पालन-पोषण एक दासी ने तथा ज्ञान एवं भक्ति की शिक्षा प्रसिद्ध सन्त बाबा नरहरिदास ने प्रदान की। इनका विवाह रत्नावली के साथ हुआ था। ऐसा प्रसिद्ध है कि रत्नावली की फटकार से ही इनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ। कहा जाता है कि एक बार पत्नी द्वारा बिना बताये ही मायके चले जाने पर प्रेमातुर तुलसी अर्द्धरात्रि में आँधी-तूफान का सामना करते हुए अपनी ससुराल जा पहुँचे। पत्नी ने इसके लिए इन्हें फटकारा। फटकार से इन्हें वैराग्य हो गया। इसके बाद काशी के विद्वान् शेष सनातन से तुलसी ने वेद-वेदांग का ज्ञान प्राप्त किया और अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हुए राम के पवित्र चरित्र का गान करने लगे। इनका समय काशी, अयोध्या और चित्रकूट में अधिक व्यतीत हुआ। संवत 1680 में श्रावण कृष्ण पक्ष तृतीया शनिवार को असीघाट पर तुलसीदास राम-राम कहते हुए परमात्मा में विलीन हो गये। इनकी मृत्यु के सम्बन्ध में निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

संवत् सोलह सौ असी, असी गंग के तीर।
श्रावण कृष्णा तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर॥

ये राम के भक्त थे। इनकी भक्ति दास्य-भाव की थी। संवत् 1631 में इन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ **'रामचरितमानस'** की रचना आरम्भ की। इनके इस ग्रन्थ में विस्तार के साथ राम के चरित्र का वर्णन है। तुलसी के राम में शक्ति, शील और सौन्दर्य तीनों गुणों का अपूर्व सामंजस्य है। मानव-जीवन के सभी उच्चादर्शों का समावेश करके इन्होंने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम बना दिया है। अवधी भाषा में रचित रामचरितमानस बड़ा ही लोकप्रिय ग्रन्थ है। विश्व-साहित्य के प्रमुख ग्रन्थों में इसकी गणना की जाती है। 'रामचरितमानस' के अतिरिक्त इन्होंने **'जानकी-मंगल', 'पार्वती-मंगल', 'रामलला-नहछू', 'रामाज्ञा प्रश्न', 'बरवै रामायण', 'वैराग्य संदीपनी', 'कृष्ण गीतावली', 'दोहावली', 'कवितावली', 'गीतावली'** तथा **'विनय-पत्रिका'** आदि ग्रन्थों की रचना की। इनकी रचनाओं में भारतीय सभ्यता और संस्कृति का पूर्ण चित्रण देखने को मिलता है।

अपने समय तक प्रचलित दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया, पद आदि काव्य-शैलियों में तुलसी ने पूर्ण सफलता के साथ काव्य-रचना की है। दोहावली में दोहा पद्धति, रामचरितमानस में दोहा-चौपाई पद्धति, विनयपत्रिका में गीति पद्धति, कवितावली में कवित्त-सवैया पद्धति को इन्होंने अपनाया। इन सभी शैलियों में इन्हें अद्‌भुत सफलता मिली है। जो इनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा तथा काव्यशास्त्र में इनकी गहन अन्तर्दृष्टि की परिचायक है। इनके काव्य में भाव-पक्ष के साथ कला-पक्ष की भी पूर्णता है। उसमें सभी रसों का आनन्द प्राप्त होता है। स्वाभाविक रूप में सभी प्रकार के अलंकारों का प्रयोग करके तुलसी ने अपनी रचनाओं को प्रभावोत्पादक बना दिया है। इनका ब्रज भाषा तथा अवधी भाषा पर समान अधिकार था। कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका आदि रचनाएँ ब्रजभाषा में हैं और रामचरितमानस अवधी में। अवधी को साहित्यिक रूप प्रदान करने के लिए इन्होंने संस्कृत शब्द का भी प्रयोग किया है, पर इससे कहीं भी दुरूहता नहीं आने पायी है।

काव्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में तुलसी का दृष्टिकोण सर्वथा सामाजिक था। इनके मत में वही कीर्ति, कविता और सम्पत्ति उत्तम है जो गंगा के समान सबका हित करनेवाली हो—**'कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सबकर हित होई।'** सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन का उच्चतम आदर्श जनमानस के समक्ष रखना ही इनका काव्यादर्श था। जीवन के मार्मिक स्थलों की इनको अद्‌भुत पहचान थी। तुलसीदास ने राम के शक्ति, शील, सौन्दर्य समन्वित रूप की अवतारणा की है। इनका सम्पूर्ण काव्य समन्वयवाद की विराट् चेष्टा है। ज्ञान की अपेक्षा भक्ति का राजपथ ही इन्हें अधिक रुचिकर लगता है।

●●●

भरत-महिमा

[गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस से अवतरित प्रस्तुत प्रसंग में भरत की भ्रातृ-भक्ति को उद्घाटित किया है। राम को पिता के द्वारा वनवास दिये जाने के बाद भरत उनको वापस बुलाने के लिए पैदल ही वन की ओर चल देते हैं। उनका भ्रातृ-प्रेम आदर्श एवं अनुकरणीय है। तभी तो तुलसीदास ने कहा है—'भरत सम भाई हुवे हैं न होहुँगे।']

दो0– चलत पयादें खात फल पिता दीन्ह तजि राजु।
जात मनावन रघुबरहिं भरत सरिस को आजु॥1॥

भायप भगति भरत आचरनू। कहत सुनत दुख दूषन हरनू।।
जो किछु कहब थोर सखि सोई। राम बंधु अस काहे न होई।।
हम सब सानुज भरतहि देखें। भइन्ह धन्य जुबती जन लेखें।।
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं। कैकइ जननि जोगु सुतु नाहीं।।
कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिन। बिधि सबु कीन्ह हमहि जो दाहिन।।
कहँ हम लोक बेद बिधि हीनी। लघु तिय कुल करतूति मलीनी।।
बसहिं कुदेस कुगाँव कुबामा। कहँ यह दरसु पुन्य परिनामा।।
अस अनंदु अचिरिजु प्रति ग्रामा। जनु मरुभूमि कलपतरु जामा।।

दो0– तेहि बासर बसि प्रातहीं चले सुमिरि रघुनाथ।
राम दरस की लालसा भरत सरिस सब साथ॥2॥

मंगल सगुन होहिं सब काहू। फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू।।
भरतहिं सहित समाज उछाहू। मिलिहहिं रामु मिटिहि दुख दाहू।।
करत मनोरथ जस जियँ जाके। जाहिं सनेह सुराँ सब छाके।।
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिं। बिहवल बचन पेम बस बोलहिं।।
रामसखाँ तेहि समय देखावा। सैल सिरोमनि सहज सुहावा।।
जासु समीप सरित पय तीरा। सीय समेत बसहिं दोउ बीरा।।
देखि करहिं सब दंड प्रनामा। कहि जय जानकि जीवन रामा।।
प्रेम मगन अस राजसमाजू। जनु फिरि अवध चले रघुराजू।।

दो0–भरत प्रेमु तेहि समय जस तस कहि सकइ न सेषु।
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु अह मम मलिन जनेषु॥3॥

सकल सनेह सिथिल रघुबर कें। गए कोस दुई दिनकर ढरकें।।
जलु थलु देखि बसे निसि बीतें। कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीतें।।
उहाँ रामु रजनी अवसेषा। जागे सीयँ सपन अस देखा।।
सहित समाज भरत जनु आए। नाथ वियोग ताप तन ताए।।
सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखीं सासु आन अनुहारी।।
सुनि सिय सपन भरे जल लोचन। भए सोचबस सोच बिमोचन।।
लखन सपन यह नीक न होई। कठिन कुचाह सुनाइहि कोई।।
अस कहि बंधु समेत नहाने। पूजि पुरारि साधु सनमाने।।

छं0- सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भए।
नभ धूरि खग मृग भूरि भागे बिकल प्रभु आश्रम गए॥
तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित रहे।
सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे॥

सो0-सुनत सुमंगल बैन मन प्रमोद तन पुलक भर।
सरद सरोरुह नैन तुलसी भरे सनेह जल॥4॥

x x x

दो0- भरतहि होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ॥5॥

तिमिरु तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगनु मगन मकु मेघहिं मिलई।।
गोपद जल बूड़हिं घटजोनी। सहज छमा बरु छाड़ै छोनी।।
मसक फूँक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमदु भरतहि भाई।।
लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।।
सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता।।
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा।।
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्हि उजियारी।।
कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ।।

दो0- सुनि रघुबर बानी बिबुध देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सो प्रभु को कृपानिकेतु॥6॥

जौं न होत जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को।।
कबि कुल अगम भरत गुन गाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा।।
लखन राम सियँ सुनि सुर बानी। अति सुखु लहेउ न जाइ बखानी।।
इहाँ भरतु सब सहित सहाए। मंदाकिनी पुनीत नहाए।।

सरित समीप राखि सब लोगा। मागि मातु गुर सचिव नियोगा।।
चले भरतु जहँ सिय रघुराई। साथ निषादनाथु लघु भाई।।
समुझि मातु करतब सकुचाहीं। करत कुतरक कोटि मन माहीं।।
रामु लखनु सिय सुनि मम नाऊँ। उठि जनि अनत जाहिं तजि ठाऊँ।।

दो0- मातु मते महुँ मानि मोहि जो कछु करहिं सो थोर।
अघ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर॥7॥

जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी।।
मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं।।
जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।।
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता।।
फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी।।
जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ। तब पथ परत उताइल पाऊ।।
भरत दसा तेहि अवसर कैसी। जल प्रवाहँ जल अलि गति जैसी।।
देखि भरत कर सोचु सनेहू। भा निषाद तेहि समयँ बिदेहू।।

दो0- मिलि सपेम रिपुसूदनहिं केवटु भेंटेउ राम।
भूरि भायँ भेंटे भरत लछिमन करत प्रनाम॥8॥

भेंटेउ लखन ललकि लघु भाई। बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई।।
पुनि मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे। अभिमत आसिष पाइ अनंदे।।
सानुज भरत उमगि अनुरागा। धरि सिर सिय पद पदुम परागा।।
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाए। सिर कर कमल परसि बैठाए।।
सीयँ असीस दीन्हि मन माहीं। मगन सनेहँ देह सुधि नाहीं।।
सब बिधि सानुकूल लखि सीता। भे निसोच उर अपडर बीता।।
कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूँछा। प्रेम भरा मन निज गति छूँछा।।
तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि। जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि।।

दो0- नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुर लोग।
सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल वियोग॥9॥

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू। सिय समीप राखे रिपुदवनू।।
चले सबेग रामु तेहि काला। धीर धरम धुर दीनदयाला।।
गुरहि देखि सानुज अनुरागे। दंड प्रनाम करत प्रभु लागे।।
मुनिवर धाइ लिए उर लाई। प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई।।
प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि ते दंड प्रनामू।।
रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।।

रघुपति भगति सुमंगल मूला। नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला।।
एहि सम निकट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठ सम को जग माहीं।।

दो0- जेहि लखि लखनहु तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ।
सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रभाउ॥10॥

('रामचरितमानस' से)

कवितावली

[प्रस्तुत प्रसंग में हनुमान् जी द्वारा जलाई जा रही लंका और लंकानिवासी राक्षसों की व्याकुलता का अत्यन्त सजीव चित्र खींचा गया है।]

लंका-दहन

बालधी विसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं,
लंक लीलिबे को काल रसना पसारी है।
कैधौं ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि सी उघारी है।।
तुलसी सुरेस चाप, कैधौं दामिनी कलाप,
कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है।
देखे जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं,
"कानन उजार्‌यो अब नगर प्रजारी है"।।1।।

हाट, बाट, कोट, ओट, अट्टनि, अगार, पौरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है।
आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,
ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि हैं।।
बालधी फिरावै बार बार झहरावै, झरैं
बूँदिया सी लंक पघिलाइ पाग पागिहैं।
तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं
"चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहैं"।।2।।

लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने पहिचाने कौन काहि रे?
पानी को ललात, बिललात, जरे गात जात,
परे पाइमाल जात, "भ्रात! तू निबाहि रे।
प्रिया तू पराहि, नाथ तू पराहि, बाप,
बाप! तू पराहि, पूत पूत, तू पराहि रे"।
तुलसी बिलोकि लोग ब्याकुल बिहार कहैं,
"लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे"।।3।।

बीथिका बजार प्रति, अटनि अगार प्रति,
पँवरि पगार प्रति बानर बिलोकिए।
अध ऊर्ध बानर, बिदिसि दिसि बानर हैं,
मानहु रह्यो है भरि बानर तिलोकिए।।
मूँदे आँखि हीय में, उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किए?।
"लेहु अब लेहु, तब कोऊ न सिखाओ मानो,
सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिए"।।4।।

गीतावली

जो पै हौं मातु मते महँ ह्वैहौं।
तौ जननी! जग में या मुख की कहाँ कालिमा ध्वैहौं?
क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि? कौन मानिहै साँची?
महिमा-मृगी कौन सुकृती की खल-बच-बिसिखन बाँची?
गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै।
दीनबंधु कारुन्य-सिंधु बिनु कौन हिए की बूझै?
तुलसी रामबियोग-बिषम-बिष-बिकल नारिनर भारी।
भरत-स्नेह-सुधा सींचे सब भए तेहि समय सुखारी।।1।।

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको?

सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर फेर्‌यो बदन बिधाता।।
ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लखन सो भ्राता।।
गिरि कानन जैहैं साखामृग, हौं पुनि अनुज सँघाती।।
ह्वैहै कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती।।
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु कपि सकल बिकल हिय हारे।
जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि प्रचारे।।2।।

हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै।
पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै।।
मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै।।
तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धनि न सकत धीरौ धीरै।।
उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यौं दीजै खीरै-नीरै।।3।।

दोहावली

हरो चरहिं, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ।।1।।

मान राखिबो, माँगिबो, पियसों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु।।2।।

नहिं जाचत नहिं संग्रहीं, सीस नाइ नहिं लेइ।
ऐसे मानी माँगनेहि को बारिद बिन देइ।।3।।

चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल।
छीर-नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल।।4।।

आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ।।5।।

ग्रह, भेषज, जल, पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग।
होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग।।6।।

जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ।।7।।

बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ।
तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होइ।।8।।

मंत्री, गुरु अरु बैद जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज, धरम, तन तीनि कर होइ बेगिही नास।।9।।

तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन।
अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहै कौन?10।

विनयपत्रिका

[ब्रजभाषा में रचा गया ग्रन्थ विनय-पत्रिका हिन्दी साहित्य का अति सुन्दर गीतिकाव्य है। यह भक्त तुलसी के हृदय का प्रत्यक्ष दर्शन है। आत्मग्लानि, भक्त-हृदय का समर्पण, आराध्य के प्रति भक्त का दैन्य ही विनय-पत्रिका के मुख्य विषय हैं।]

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाव गहौंगो।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो।।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।।
परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत मान,सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो।।
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि भक्ति लहौंगो।।1।।

ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की।।
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की।।
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की।।

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की।।2।।

हे हरि! कस न हरहु भ्रम भारी?
जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी।।
अर्थ अबिद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाईं।
बिनु बाँधे निज हठ सठ परबस पर्‌यो कीर की नाई।।
सपने ब्याधि बिबिध बाधा भइ, मृत्यु उपस्थित आई।
बैद अनेक उपाय करहिं, जागे बिनु पीर न जाई।।
स्रुति-गुरु-साधु-सुमृति-संमत यह दृश्य सदा दुखकारी।
तेहि बिन तजे, भजे बिन रघुपति बिपति सकै को टारी?।।
बहु उपाय संसार-तरन कहँ बिमल गिरा स्रुति गावै।
तुलसिदास 'मैं-मोर' गए बिनु जिय सुख कबहुँ न पावै।।3।।

अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।।
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं।।4।।

अभ्यास प्रश्न

पद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित पद्यांशों को पढ़कर उनके नीचे दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

भरत-महिमा

(क) लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।
सगुनु खीरु, अवगुन, जलु ताता। मिलइ रचइ परपंचु बिधाता।
भरतु हंस रबिबंस तड़ागा। जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा।।
गहि गुन पय तजि अवगुन बारी। निज जस जगत कीन्हि उजियारी।।
कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ। पेम पयोधि मगन रघुराऊ।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में श्रीरामजी ने किसके गुणों का बखान किया है?
(iv) श्रीराम लक्ष्मण और पिताश्री की शपथ लेकर क्या कहते हैं?
(v) श्रीराम जी ने भरत जी की तुलना हंस से क्यों की है?

(ख) जौं परिहरहिं मलिन मनु जानी। जौं सनमानहिं सेवकु मानी।।
मोरे सरन रामहि की पनही। राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं।।
जग जस भाजन चातक मीना। नेम पेम निज निपुन नबीना।।
अस मन गुनत चले मग जाता। सकुच सनेहँ सिथिल सब गाता।।
फेरति मनहुँ मातु कृत खोरी। चलत भगति बल धीरज धोरी।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) रामचन्द्र जी से मिलने के लिए जाते समय भरत जी मन में क्या विचार कर रहे हैं?
(iv) भरत के अनुसार उनकी शरण कौन-सी है?
(v) इस संसार में यश के पात्र कौन हैं और क्यों?

गीतावली

(ग) हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै।
पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै।।
मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै।
तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धनि न सकत धीरौ धीरै।।
उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यों दीजै खीरै-नीरै।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में लक्ष्मण ने घाव और पीड़ा के सन्दर्भ में क्या कहा?
(iv) राम और लक्ष्मण के प्रेम के सम्बन्ध में तुलसीदास जी ने क्या कहा है?
(v) पद्यांश के अनुसार लक्ष्मण के घाव की पीड़ा को श्रीराम जी किस प्रकार जान सकते हैं?

दोहावली

(घ) मान राखिबो, माँगिबो, पियसों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मत लेहु।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चातक जल की याचना किससे करता है?
(iv) कवि के अनुसार व्यक्ति का जीवन कैसे सफल हो सकता है?
(v) इस पद्यांश में किसकी विशेषताओं को बताया गया है?

(ङ) नहिं जाचत नहिं संग्रहीं, सीस नाइ नहिं लेइ।
ऐसे मानी माँगनेहि को बारिद बिन देइ।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) चातक जल ग्रहण कैसे करता है?
(iv) चातक किस नक्षत्र की जल बूँदें ग्रहण करता है?
(v) स्वाभिमानी चातक की याचना को कौन जानता है?

विनयपत्रिका

(च) कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाव गहौंगो।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।।
परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत मान, सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो।।
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरि भक्ति लहौंगो।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तुलसीदास जी श्रीराम से क्या प्रार्थना कर रहे हैं?
(iv) क्रोध और अपमान के सन्दर्भ में तुलसीदास ने क्या कहा है?
(v) तुलसीदास जी किस नियम का निरन्तर पालन करने के लिए कह रहे हैं?

(छ) ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की।।
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की।।
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की।।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की।।

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की।।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) प्रस्तुत पद्यांश में तुलसीदास श्री रामचन्द्र जी से क्या प्रार्थना कर रहे हैं?
(iv) तुलसीदास के अनुसार यह मन किस प्रकार की मूढ़ता कर रहा है?
(v) प्रस्तुत पद्यांश में पपीहे का उल्लेख किस प्रसंग में आया है?

(ज) अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जाये फिर न डसैहौं।।
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर ते न खसैहौं।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।।
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, नि बस ह्वै न हँसैहौं।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद-कमल बसैहौं।।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त पद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।
अथवा पद्यांश के कवि एवं शीर्षक का नाम लिखिए।
(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।
(iii) तुलसीदास को कौन-सी चिन्तामणि प्राप्त हो गयी है?
(iv) तुलसीदास जी समाज में उपहास का पात्र क्यों नहीं बनेंगे?
(v) तुलसीदास ने किस पर मुक्ति प्राप्त कर ली है और क्यों?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित काव्य-सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) अब लौं नसानी अब न नसैहौं।
(ख) अब तौ दादुर बोलिहैं हमैं पूछिहैं कौन?
(ग) बालधी बिसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं, लंक लीलिबो को काल रसना पसारी है।
(घ) छीर-नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल।
(ङ) गोपद जल बूड़हिं घटजोनी।
(च) होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग।
(छ) तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ।
(ज) भरतहि होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ।।
(झ) महिमा मृगी कौन सुकृती की खल-बच बिसिखन बाँची।
(ञ) कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीन सिंधु बिनसाइ।
(ट) तुलसीदास मैं मोर गये बिन, जिय सुख कबहुँ न पावै।
(ठ) तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होई।

(ङ) परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।

(ढ) भायप भगति भरत आचरनू। कहत सुनत दुख दूषन हरनू।

2. 'भायप-भक्ति' क्या होती है? 'भरत-महिमा' के आधार पर भरत का चरित्र-चित्रण कीजिए।

3. "सन्त तुलसीदास जी की रचनाओं में लोक-मंगल का स्वर मुखरित हुआ है।" इस कथन की विशद व्याख्या कीजिए।

अथवा 'तुलसीदास लोककवि थे।' स्पष्ट कीजिए।

4. "लंकादहन तुलसीदास जी की वर्णनात्मक और चित्रात्मक शैली का सुन्दर उदाहरण है।" संकलित अंश के आधार पर इसका विवेचन कीजिए।

5. तुलसीदास की काव्यगत विशेषताओं पर एक निबन्ध लिखिए।

6. तुलसीदास की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।

7. तुलसीदास का जीवन-परिचय देते हुए उनके काव्य-परिचय का उल्लेख कीजिए।

8. गोस्वामी तुलसीदास का जीवन-परिचय दीजिए तथा उनके साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालिए।

9. तुलसीदास की काव्य-भाषा बताते हुए उनकी रचनाओं का वर्णन कीजिए।

10. तुलसीदास का जीवन-परिचय लिखिए।

11. तुलसी के समय की साहित्यिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ लिखिए।

12. "'विनय पत्रिका' भक्त तुलसी के हृदय का प्रत्यक्ष दर्शन है।" इस कथन के आधार पर तुलसी की भक्ति-भावना पर प्रकाश डालिए।

13. तुलसीदास का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों तथा साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. "तुलसी ने राम और भरत के प्रेम का अपूर्व चित्रण किया है।" इस कथन पर प्रकाश डालिए।

2. तुलसीदास की 'विनयपत्रिका' के आधार पर उनकी भक्तिभावना का सोदाहरण निरूपण कीजिए।

3. 'तुलसी साहित्य में समन्वय साधना' विषय पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

4. 'तुलसी तुलसी-सम पुनीत हैं' स्पष्ट कीजिए।

5. तुलसीदास के लोकनायकत्व के विषय में उल्लेख कीजिए।

6. तुलसी की मुख्य रचनाओं के नाम लिखिए।

7. कवितावली के आधार पर 'लंका-दहन' का संक्षिप्त वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

8. तुलसी का सर्वाधिक लोकप्रिय महाकाव्य कौन-सा है? उसके प्रमुख पात्रों का नाम लिखिए।

काव्य-सौन्दर्यात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित पंक्तियों में काव्य-सौन्दर्य स्पष्ट कीजिए—

(क) हरो चरहि, तापहिं बरत, फरे पसारहिं हाथ।

(ख) बालधी विसाल विकराल ज्वाल जाल मानौं।

2. अनुप्रास अलंकार एवं दोहा छन्द का लक्षण बताते हुए प्रस्तुत पाठ से एक-एक उदाहरण लिखिए।

●●●